संभोग से कुंडलिनी जागरण तक

रहस्यात्मक यौनतंत्र की अनसुलझी गुत्थियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण



प्रेमयोगी वज्र

संभोग से कुंडलिनी जागरण तक

रहस्यात्मक यौनतंत्र की अनसुलझी गुत्थियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

प्रेमयोगी वज्र

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर)

इस तंत्र-सम्मत पुस्तक को किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

परिचय

मानव शरीर, जैविक इंजीनियरिंग का एक चमत्कार है, इसके भीतर विभिन्न जीवनप्रणालियों का एक जटिल नेटवर्क है जो हमारे शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक कल्याण को नियंत्रित करता है। इन प्रणालियों में, यौन प्रणाली एक अद्वितीय स्थान रखती है, जो आकर्षण और रहस्य दोनों से घिरी हुई है। संभोग के अंतरंग कार्य से लेकर कुंडलिनी जागरण की गूढ़ अवधारणा तक, यह प्रणाली अनुभवों के एक विशाल स्पेक्ट्रम को समाहित करती है, जिनमें से प्रत्येक अनुभव हमारे जीवन के लिए गहन निहितार्थ रखता है।

यह पुस्तक आपको यौन प्रणाली की गहराई से अन्वेषण की यात्रा पर आमंत्रित करती है, इसके मनोवैज्ञानिक आयामों में तल्लीन करती है और इसके आसपास के अनसुलझे रहस्यों को उजागर करती है। वैज्ञानिक अनुसंधान, दार्शनिक जांच और व्यक्तिगत आख्यानों के मिश्रण के माध्यम से, हम कामुकता के शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं के बीच जटिल परस्पर क्रिया की जांच करेंगे।

हम यौन प्रणाली की जैविक नींव की खोज करके शुरू करेंगे, हमारे यौन अनुभवों को रेखांकित करने वाली शारीरिक रचना और शरीर विज्ञान की जांच करेंगे। लेकिन यह सिर्फ शुरुआत है। फिर हम कामुकता के मनोवैज्ञानिक आयामों में गहराई से उतरेंगे, जटिल भावनाओं, इच्छाओं और पहचानों की खोज करेंगे जो हमारे खुद के और हमारे रिश्तों की समझ को आकार देते हैं।

जैसे-जैसे हम गहराई में जाएंगे, हम कुंडलिनी जागरण की रहस्यमय अवधारणा का सामना करेंगे, एक आध्यात्मिक अनुभव जिसने हजारों सालों से साधकों को मोहित किया है। हम कुंडलिनी की विभिन्न व्याख्याओं और व्यक्तिगत परिवर्तन और आध्यात्मिक विकास में इसकी संभावित भूमिका की जांच करेंगे।

आखिरकार, इस पुस्तक का उद्देश्य यौन प्रणाली की एक व्यापक और सूक्ष्म समझ प्रदान करना है, जो सतही से परे है और इसके मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक महत्व की गहराई का पता लगाती है। मानव अनुभव के इस आकर्षक पहलू को घेरने वाले रहस्यों को उजागर करके, हम व्यक्तियों को अधिक जागरूकता, प्रामाणिकता और पूर्णता के साथ अपनी कामुकता को अपनाने के लिए सशक्त बनाने की उम्मीद करते हैं।

इस पुस्तक के सभी अध्याय मूल रूप से हमारे पिछले काम का हिस्सा थे; जो है 'कुंडलिनी विज्ञान' श्रृंखला की 'आध्यात्मिक मनोविज्ञान' पुस्तकें; साथ में इसी शृंखला से निकली एक अन्य उप-पुस्तक, पुराण पहेली। अगर आपको ये पसंद आए, तो आपको पूरे संकलन में और भी मिलेंगे।

कुण्डलिनी व प्रेम सम्बन्ध के बीच में आपसी रिश्ता

कुण्डलिनी एक जीवनी शक्ति है। समाज में यादों के सहारे जीने की जो बात चलती है, वह कुण्डलिनी के सहारे जीने की ही बात है। इसी तरह, प्रेमसंबंध भी कुण्डलिनी को पैदा करता है, जिससे विभिन्न कुण्डलिनी-लक्षण पैदा होते हैं। कुण्डलिनी प्राणों (साँसों सहित) को बल प्रदान करती है। कुण्डलिनी मानसिक विचार का ही पर्याय है। इस प्रकार से सभी मानसिक विचार प्राणों को पुष्ट करते हैं।

किसी व्यक्ति विशेष का लगातार यादों में, अर्थात मन में बने रहना ही कुण्डलिनी-क्रियाशीलता है। उससे उस व्यक्ति विशेष के रूप से बनी मानसिक छवि को ही कुण्डलिनी कहते हैं, तथा उस मानसिक छवि से एकाकार होने को ही कुण्डलिनी जागरण कहते हैं।

जब कोई व्यक्ति कहता है कि वह अपने प्रेमी के बिना जी नहीं सकता, तब वह उसके रूप से बनी अपनी मानसिक कुण्डलिनी के बिना न जी सकने की ही बात करता है। वास्तव में वह अपने प्रेमी के भौतिक रूप के बिना भी जी सकता है, यदि प्रेमी की छवि उसके मन में बस गई हो। तभी तो बहुत से प्रेमी जोड़े एक-दूसरे से अलग रहकर, एक-दूसरे की यादों के सहारे ही पूरा जीवन सुखपूर्वक बिता लेते हैं। उनके मन में बसी एक-दूसरे की वही छवि तो कुण्डलिनी है। वह उनके पूरे अस्तित्व को चलायमान रखती है। प्रेमी उसे नहीं छोड़ सकता। यदि वह जबरदस्ती उसे हटाने का प्रयत्न करता है, तो वह अँधेरे में जैसे डूबने लगता है, क्योंकि उसका सभी कुछ उस कुण्डलिनी के साथ जुड़ गया होता है। इसलिए वह मजबूरी में उसे बना कर रखता है। जब समय के साथ वह छवि मिटने लगती है, तब कोई नई छवि उसका स्थान लेने लगती है। इसी से पता चलता है कि कुण्डलिनी एक जीवनी शक्ति है। यौनसंबंध से उस मानसिक छवि को शक्ति मिलती है। ऐसा ही ओशो महाराज भी कहते हैं। तभी तो जगत में यौनसंबंध को सबसे बड़ा सुख माना जाता है। यदि वह सम्बन्ध तांत्रिक विधि से हो, तब तो और भी अधिक शक्ति मिलती है, जिससे वह जागृत भी हो सकती है।

अतः उपरोक्त बातों से स्वयंसिद्ध है कि अंतर्लैंगिक प्रेमसंबंध में भी कुण्डलिनी लक्षण उत्पन्न होते हैं। प्रेमी के रूप से निर्मित मानसिक कुण्डलिनी लगातार मन में बसी रहती है। उससे व्यक्ति यौनसंबंध बनाने के लिए या विवाह सम्बन्ध बनाने के लिए प्रोत्साहित होता है, ताकि वह कुण्डलिनी शांत हो सके। यद्यपि वह कुण्डलिनी लाभदायक होती है, पर व्यक्ति उसके अस्थायी दुष्प्रभावों से विचलित हो जाता है। वे दुष्प्रभाव निम्नलिखित प्रकार के हैं। वह उसकी शारीरिक व मानसिक शक्ति का कम या ज्यादा रूप में भक्षण करती रहती है। उससे उसका मन दुनियादारी में कम लगता है। वह एकांत को पसंद करने लगता है। वह लोगों को बुझा-बुझा सा दिखता है। अन्य वे सभी लक्षण उत्पन्न होते हैं, जो कुण्डलिनी के लिए सामान्य हैं, जैसे कि शरीर में, मुख्यतः हाथों में कम्पन, सिरदर्द के साथ सिर में भारीपन, भावुकता, उत्तेजना आदि। तभी तो कई प्रेमी अपने प्रेम के असफल होने पर घातक कदम भी उठा लेते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि कुण्डलिनी उनका पीछा ही नहीं छोड़ेगी, और उन्हें बिलकुल नकारा कर देगी। परन्तु वास्तविकता यह है कि वह कुण्डलिनी उनके सारे पाप धोकर उन्हें आत्मज्ञान तक पहुंचा देती है। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी यही हुआ था, जो उसकी पुस्तक “शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)” में विस्तार से वर्णित है। फिर बाद में उसके गुरु के रूप की कुण्डलिनी उसके मन में जागृत हो गई थी, जिसने उसकी प्रेमिका की कुण्डलिनी का स्थान ले लिया था। इस तरह से, लगभग 20 सालों के बाद उसका पीछा उसकी प्रेमिका के रूप की कुण्डलिनी से छूट पाया था।

विडम्बना है कि प्रेम के सफल होने पर भी व्यक्ति को संतुष्टि नहीं मिलती। विवाह के बाद प्रेमी का आकर्षण समाप्त हो जाता है, जिससे उसके रूप की कुण्डलिनी भी गायब हो जाती है। वह जीवनी शक्ति के लिए तरसने लगता है। फिर वह पछताता है कि क्योंकर उसने प्रेमी की यादों (कुण्डलिनी) से घबरा कर प्रेम को परवान नहीं चढ़ने दिया। वह सोचता है कि प्रेमी के भौतिक रूप से अच्छी तो उसके रूप से निर्मित मानसिक कुण्डलिनी ही थी। यद्यपि फिर भी कुछ नहीं बिगड़ा होता है, यदि वह मौके की नजाकत को समझे। क्योंकि वैसी पछतावे वाली स्थिति में वह संदर्भित तंत्र / अप्रत्यक्ष तंत्र का सहारा ले सकता है, जिसमें वह अपने जीवनसाथी-प्रेमी की सहायता से गुरु, देवता , इष्ट आदि के रूप की कुण्डलिनी को जागृत कर सकता है। इस तरह के समस्त तथ्य उपरोक्त पुस्तक में सविस्तार वर्णित हैं।

वैसे तो मन के सभी विचार जीवनी शक्ति देते हैं। एक बहिर्मुखी आदमी में ये विचार निरंतर जारी रहते हैं, इसलिए उसकी जीवनी शक्ति निरंतर बनी रहती है। जब उसका शरीर किसी कारणवश क्षीण हो जाता है, तब उसकी बहिर्मुखता भी क्षीण हो जाती है। इससे वह निर्विचार सा होकर जीवनी शक्ति के लिए तरस जाता है। फिर वह अकेली मानसिक छवि को योग से पुष्ट करने लगता है, ताकि वह जीवनी शक्ति प्राप्त करता रह सके। बुद्धिमान व्यक्ति बहिर्मुखता के साथ योग या प्रेम से या दोनों से कुण्डलिनी को भी पुष्ट करता रहता है, ताकि वह संकट के समय काम आवे। भाग्यहीन व्यक्ति न तो बदलते विचारों का पूरा लाभ उठाता है, और न ही कुण्डलिनी-रूपी अकेले यौगिक विचार का। इसलिए जीवनी शक्ति के अभाव के कारण उसका जीवन संकट में पड़ा रहता है।

यदि आपने इस लेख/पोस्ट को पसंद किया तो कृपया थोड़े और श्रम से "लाईक" बटन को क्लिक करें, इसे शेयर करें, इस वार्तालाप/ब्लॉग को अनुसृत/फॉलो करें, व साथ में अपना विद्युतसंवाद पता/ई-मेल एड्रेस भी दर्ज करें, ताकि इस ब्लॉग के सभी नए लेख एकदम से सीधे आपतक पहुंच सकें। कमेन्ट सैक्शन में अपनी राय जाहिर करना न भूलें।

कुण्डलिनी चक्रों के त्रिभुज, वृत्त एवं पंखुड़ियाँ- एक छिपा हुआ राज उजागर

सहस्रार चक्र व स्वाधिष्ठान चक्र के सिवाय सभी चक्रों पर त्रिभुज हैं। कहीं पर वह सीधा ऊपर की ओर है, तो कहीं पर उल्टा नीचे की ओर है। कहीं पर एक-दूसरे को काटते हुए दो त्रिभुज हैं। इसी तरह किसी चक्र पर चार पंखुड़ियां हैं, तो किसी पर छह या सात आदि। सहस्रार में तो एक हजार पंखुड़ियां हैं। इनके पीछे आखिर क्या रहस्य छिपा हो सकता है? कुछ रहस्य दार्शनिक हैं, तो कुछ रहस्य अनुभवात्मक व मनोवैज्ञानिक हैं। योग करते हुए मुझे भी इसके पीछे छिपे हुए कुछ अनुभवात्मक रहस्य पता चले हैं, जिन्हें मैं इस पोस्ट के माध्यम से साझा कर रहा हूँ।

कुण्डलिनी के राजमार्ग और आपूर्ति-मार्ग

त्रिभुज की रेखाएं वास्तव में कुण्डलिनी-चित्र के राजमार्ग हैं, जिन पर दौड़ती हुई कुण्डलिनी का ध्यान किया जाता है। इसी तरह, त्रिभुज के बिंदु भी कुण्डलिनी के विश्राम स्थल हैं। चक्र के पीटल (पंखुड़ियां) उस चक्र से सम्बंधित क्षेत्र से सम्बंधित नाड़ी-पुंज हैं, जो चेतनामयी पोषक शक्ति या ध्यान शक्ति को चक्र व उस पर स्थित कुण्डलिनी तक पहुंचाती हैं। ये वृक्ष या फूल की पत्तियों की तरह ही हैं।

मूलाधार चक्र का उल्टा त्रिभुज नीचे की ओर

मूलाधार चक्र पर उल्टा त्रिभुज होता है। इसकी एक भुजा जननांग से शुरू होकर आगे के स्वाधिष्ठान चक्र (जननांग के मूल में) से होते हुए पीछे के (मेरुदंड के) स्वाधिष्ठान चक्र तक जाती है। इसकी दूसरी भुजा पीछे के स्वाधिष्ठान चक्र से लेकर मूलाधार चक्र (सबसे नीचे, जननांग व मलद्वार के मध्य में) तक है। इसकी तीसरी भुजा जननांग की शिखा से या आगे के स्वाधिष्ठान चक्र से लेकर मूलाधार तक है। मैंने देखा कि जननांग को छोड़कर, छोटा त्रिभुज बना कर भी अच्छा ध्यान होता है। जननांग से तो कुण्डलिनी को कई बार अतिरिक्त शक्ति मिल जाती है। उस छोटे त्रिभुज का एक बिंदु आगे का स्वाधिष्ठान चक्र है, दूसरा बिंदु पीछे का स्वाधिष्ठान चक्र है, व तीसरा बिंदु या त्रिभुज की शिखा मूलाधार है। 4 पीटल का अर्थ है कि एक पीटल जननांग तक है, एक आगे के स्वाधिष्ठान चक्र तक है, तीसरी पीछे के स्वाधिष्ठान चक्र तक है, और चौथी स्वयं मूलाधार चक्र की है (चक्र के संकुचन से उपलब्ध)।

स्वाधिष्ठान चक्र पर कोई अलग से त्रिभुज नहीं है, क्योंकि वह मूलाधार के त्रिभुज में ही कवर हो जाता है। इसकी 6 पीटल निम्नलिखित क्षेत्रों से आती हैं। 4 मूलाधार से, एक जननांग से और छवीं पीटल इसकी अपनी है (संकुचन से उपलब्ध)।

त्रिभुज पिरामिड या शंकु को भी प्रदर्शित करता हुआ व उल्टा त्रिभुज पीछे की ओर को भी

मणिपुर चक्र में उल्टा त्रिभुज व 10 पीटल हैं। वास्तव में, उल्टे त्रिभुज का मतलब पीछे की ओर प्वाइंट करता हुआ त्रिभुज है। दो डाईमेंशन वाले कागज़ पर पीछे की ओर या अन्दर की ओर प्वाइंट करते हुए त्रिभुज को ही उल्टा या नीचे की तरफ प्वाइंट करता हुआ दर्शाया गया है। इसमें मुख्य ध्यान-पट्टिका नाभि क्षेत्र में, दाएं से लेकर बाएँ भाग तक फैली है। वैसे तो पट्टी को विस्तृत करते हुए पूरे उदर क्षेत्र को एक शंकु या पिरामिड (कुछ लोग त्रिभुज को पिरामिड ही मानते हैं) के आकार में भी दिखाया जा सकता है, जिसकी शिखा पीछे के (मेरुदंड वाले) मणिपुर चक्र पर है।नाभि क्षेत्र पिरामिड की तरह ही लगता है। पिरामिड की दो तिरछी भुजाएं सबसे निचली पसलियों से बनती हैं। पिरामिड की आधार भुजा पेल्विक कैविटी और एब्डोमिनल कैविटी को विभक्त करने वाली काल्पनिक रेखा से बनती है। यह पिरामिड अन्दर की तरफ जाता हुआ पिछले मणिपुर चक्र पर प्वाइंट करता है। इसीलिए कई लोग पूरे उदर क्षेत्र में कुण्डलिनी को चक्राकार भी घुमाते हैं। वास्तव में जब पेट ध्यान के साथ संकुचित किया जाता है, तो ऐसा लगता है कि पेट व रीढ़ की हड्डी आपस में जुड़ गए हैं, व दोनों आगे-पीछे के चक्र भी। इसकी 10 पीटल में से 6 पीटल स्वाधिष्ठान से आती हैं (ऊपर की ओर संकुचन से)। 7वीं पीटल उदर के दाएं भाग से, 8वीं बाएँ भाग से, 9वीं उसके अपने संकुचन से व 10वीं अनाहत चक्र से आती है (जालंधर बंध के सहयोग से)।

अनाहत चक्र पर सुन्दर षटकोण

अनाहत चक्र में एक-दूसरे को काटते हुए दो त्रिभुज हैं, जिससे एक सुन्दर षटकोण बनता है। क्योंकि यह चक्र सबसे प्रमुख है। मैंने स्वयं ध्यान के समय आगे से पीछे तक फैले हुए सुन्दर व आनंदमयी षटकोण को बनते हुए देखा है। एक त्रिभुज पीछे वाले अनाहत चक्र पर प्वाइंट करती है। उसकी आधार भुजा हृदय से लेकर छाती के दाएं क्षेत्र तक है। दूसरी त्रिभुज आगे वाले अनाहत चक्र पर प्वाइंट करती है, जिसकी आधार भुजा रीढ़ की हड्डी में पीछे वाले अनाहत चक्र के दोनों ओर फैली है। जब आदमी खड़े होकर सांस को भरते हुए व सिर को पीछे की ओर करते हुए छाती को बाहर की ओर फुलाता है, तब त्रिभुज की आधार भुजा आगे वाले क्षेत्र में, दोनों स्तनों के बीच में व त्रिभुज की चोटी पीछे वाले अनाहत बिंदु पर होती है। जब सांस को छोड़ते हुए, सिर को नीचे झुकाते हुए व कन्धों को आगे की ओर मोड़ते हुए छाती को अन्दर की ओर संकुचित किया जाता है; तब त्रिभुज की आधार भुजा कंधे की एक तरफ की उभार वाली हड्डी से लेकर दूसरी तरफ की उभार वाली हड्डी तक होती है, और आगे का अनाहत चक्र त्रिभुज की टिप के रूप में होता है।

इसके 12 पीटल में से 6 तो मणिपुर चक्र से आती हैं (ऊपर की ओर संकुचन के माध्यम से)। 2 आगे की आधार भुजा से, 2 पीछे की आधार भुजा से, तथा एक-2 पीटल दोनों चक्रों की अपनी है। वैसे मुझे एक अकेला, व छोटा त्रिभुज भी आसान लगा, जिसकी आधार भुजा हृदय से लेकर आगे वाले अनाहत चक्र तक ही है।

विशुद्धि चक्र पर भी उल्टा त्रिभुज

विशुद्धि चक्र पर उल्टा त्रिभुज है। जहां गले में संकुचन जैसा (आवाज वाले स्थान पर) होता है, वहां पर त्रिभुज की चोटी है। यह आगे वाला चक्र है। त्रिभुज की आधार भुजा गर्दन के मेरुदंड पर लम्बाई व चौड़ाई वाले भाग के लगभग बीचोंबीच है। इस भुजा के केंद्र में पीछे वाला चक्र है। दर्पण में देखने पर गले का वह क्षेत्र उल्टे त्रिभुज की तरह दिखता भी है, विशेषतः जब उड्डीयान बंध पूरा लगा हो। आगे वाले चक्र की ऊपर की ओर सिकुड़न से व उड्डीयान बंध से कुण्डलिनी पीछे वाले चक्र तक ऊपर चढ़ती रहती है। इसकी 16 पीटल में से 12 तो अनाहत चक्र से आती हैं, दो आज्ञा चक्र से, व अंतिम दो इस चक्र के अपने क्षेत्र से आती हैं।

आज्ञाचक्र के त्रिभुज की आधार भुजा दोनों आँखों के बीच में

आज्ञा चक्र पर उल्टी त्रिभुज है। इसका भी पूर्ववत यही अर्थ है कि इसकी आधार भुजा दाईं आँख से बाईं आँख के बीच में है, और यह पीछे के आज्ञा चक्र (सिर के पिछले भाग में, आगे के आज्ञा चक्र के ठीक अपोसिट बिंदु) पर प्वाइंट करती है। इसके दो पीटल में से एक दाईं आँख वाले क्षेत्र से, व एक बाईं आँख वाले क्षेत्र से आती हैं।

मस्तिष्क स्वयं नाड़ी-रेखाओं से भरा हुआ, इसलिए सहस्रार चक्र पर कोई त्रिभुज नहीं

सहस्रार चक्र पर कोई त्रिभुज नहीं है, क्योंकि इसमें ध्यान करने के लिए किसी विशेष रेखा-चित्र की आवश्यकता नहीं है। कहीं पर भी ध्यान किया जा सकता है, और सीधा चक्र-बिंदु पर भी। इसके हजारों पीटल का अर्थ है कि इसके पोषण के लिए लिए पूरे मस्तिष्क सहित पूरे शरीर की भावनामय ऊर्जा पहुंचती है। शरीर के किसी भी भाग पर या चक्र पर ध्यान कर लो, अंततः वह सहस्रार चक्र को ही पुष्ट करता है।

चक्रों के वृत्त कुण्डलिनी-किसान के गोल खेत की तरह

वैसे तो किसी भी चक्र पर षटकोण के रेखा चित्र पर कुण्डलिनी का ध्यान किया जा सकता है। कई चक्रों पर तो वृत्त (गोलाकार रेखाचित्र) भी बनाए गए हैं। इसका यह अर्थ है कि कुण्डलिनी का ध्यान गोलाकार क्षेत्र में भी किया जा सकता है, एक गोलाकार खेत को जोतते हुए किसान की तरह।

सम्भोगीय चक्रों का त्रिभुज बहुत प्रभावशाली

मैंयहाँ एक उदाहरण देकर स्पष्ट करना चाहता हूँ, की त्रिभुजाकार रेखाचित्र से ध्यान करना कितना आसान और प्रभावशाली हो जाता है। यहाँ मैं सबसे नीचे के सम्भोगीय चक्रों की बात करने जा रहा हूँ। अधिकांशतः इनका ध्यान इकट्ठे रूप में ही होता है, अलग-२ नहीं। जालंधर बंध से ऊपर का प्राण आगे के स्वाधिष्ठान चक्र पर आरोपित हो जाता है। मूलाधार के संकुचन से भी नीचे का प्राण वहां पहुँच जाता है। इससे कुण्डलिनी वहां पर दमकने लगती है। तभी

वहां पर पीठ की तरफ को एक संकुचन सा अनुभव होता है। उससे जननांग शिखा से लेकर, कुण्डलिनी के साथ प्राण पीछे के स्वाधिष्ठान चक्र पर केन्द्रित हो जाता है। थोड़ी देर बाद वहां की मांसपेशी थक कर शिथिल हो जाती है, जिससे प्राण मूलाधार तक नीचे उतर जाता है। फिर मूलाधार संकुचित किया जाता है, जिससे प्राण फिर आगे वाले स्वाधिष्ठान चक्र तक ऊपर चढ़ जाता है। वही क्रम पुनः-२ दोहराया जाता है, और कुण्डलिनी उस त्रिभुज पर चक्राकार घूमती रहती है, हर बार अपनी चमक बढ़ाते हुए।

प्राचीन मिस्र की आध्यात्मिक यौनता एवं भारतीय तंत्र के बीच में समानता

अन्खिंग क्या है और कैसे किया जाता है?

अन्खिंग में पूर्णता से थोड़ा कम (90%) सांस भर कर शक्ति को यौनचक्रों से पीठ वाले अनाहत चक्र (उनके अनुसार पांचवां चक्र) तक चढ़ाया जाता है, और वहां से 90 डिग्री के कोण पर पीछे की ओर खुले में मोड़ दिया जाता है। वह फिर स्वयं ही आँख के लूप से होते हुए सबसे ऊपर वाले आठवें चक्र (सिर से एक हाथ लम्बाई ऊपर) पर पहुँच जाती है। वह चक्र वर्टिकल बोडी लाइन से 90 डिग्री के कोण पर स्थित है। वहां से वह आँख-लूप के अगले भाग से नीचे उतर कर अनाहत चक्र (आगे का) पर पुनः स्थापित हो जाती है। फिर बाकि का बचा हुआ 10% सांस भी अन्दर भर लिया जाता है। धीरे-2 सांस छोड़ते हुए ध्यान किया जाता है कि वह शक्ति उस आँख-चेनल में घूम रही है। फिर गहरी साँसें लेते जाएं, जब तक कि पूरे शरीर में रिलैक्सेशन महसूस न हो जाए। फिर अपनी साँसें नार्मल कर लें। ध्यान करो कि यह शक्ति पूरे शरीर में रिसती हुई, उसकी सभी कोशिकाओं को पुष्ट करती हुई, उसके बाहर भी चारों ओर फैल रही है। फिर पूरी तरह से रिलैक्स हो जाओ, या सो जाओ।

अन्खिंग के रेखा-चित्र व लूप का मनोवैज्ञानिक रहस्य

अन्खिंग प्रक्रिया में शक्ति हृदय के ऊपर के शरीर के हिस्से को स्पर्श नहीं करती। वह चारों और बाहर-2 से ही लूप बना कर पुनः हृदय चक्र पर पहुँच जाती है। इसीलिए शक्ति-मार्ग को दर्शाने वाले रेखा-चित्र में रीढ़ की हड्डी को छूती हुई सीधी रेखा केवल यौनचक्र (मूलाधार) से हृदय चक्र तक ही दिखाई गई है, उसके ऊपर नहीं। उसके ऊपर उपरोक्त अन्खिंग-लूप जुड़ा है। हृदय चक्र पर एक सीधी रेखा आगे से पीछे जाते हुए एक क्रोस बनाती है। इस डिजाइन का यह मतलब है कि मूलाधार चक्र व नाभि चक्र के आगे वाले भाग से होते हुए कुण्डलिनी को ऊपर चढ़ाने की जरूरत नहीं पड़ती, क्योंकि वे लचीले भाग में होते हैं, और योग-बंधों के कारण अन्दर की तरफ पिचक कर मेरुदंड वाले चक्र-भागों से जुड़कर एक हो जाते हैं। इससे आगे वाले चक्रों की शक्ति स्वयं ही पीछे वाले चक्रों को मिल जाती है। हृदय चक्र पर इसलिए आगे-पीछे गुजरने वाली रेखा है, क्योंकि आगे वाला चक्र पिचक कर पीछे वाले चक्र से नहीं जुड़ता है। देखा भी जाता है कि छाती का क्षेत्र विस्तृत है, और ज्यादा अन्दर-बाहर भी नहीं होता।

अन्खिंग का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण

शक्ति मनोवैज्ञानिक दबाव से ही अनाहत चक्र से 90 डिग्री के कोण पर पीछे की ओर बाहर निकलती है। ऐसा सोचा जाता है, तभी ऐसा होता है। आठवें चक्र तक भी वह मनोवैज्ञानिक दबाव से ही आँख (अन्खिंग-लूप) से होते हुए ऊपर चढ़ती है। एक प्रकार से शक्ति बीच के चक्रों को बाईपास करते हुए, सीधे ही आठवें चक्र तक पहुँच जाती है। वहां से नीचे भी यह इसी तरह के दबाव के अभ्यास से आती है। इसमें शरीर की बनावट से मेल खाता हुआ रेखा-चित्र भी मानसिक चिंतन के दबाव की सहायता करता है।

अन्खिंग व सैक्सुअल कुण्डलिनीयोग के बीच में समानता

कुण्डलिनीयोग में शक्ति को कुण्डलिनी कहा जाता है। यह अधिकाँश मामलों में गुरु या देवता का मानसिक चित्र ही होता है। इस योग में यौनशक्ति से कुण्डलिनी को विभिन्न चक्रों पर पुष्ट किया जाता है, विशेषकर मस्तिष्क में। पुष्टता को प्राप्त कुण्डलिनी फिर लम्बे समय तक अनुभवदृष्टि में बनी रहकर तन-मन को शुद्ध करती रहती है। अन्खिंग में भी ऐसा ही होता है। यद्यपि उसमें शक्ति को हृदय क्षेत्र में ही केन्द्रित माना गया है। थोड़े समय के लिए आठवें चक्र पर भी रुकती है। बीच वाले रस्ते व लूप में तो केवल उसकी सूक्ष्म चाल ही होती है। वास्तव में हृदय में सबसे प्रिय वस्तु ही बसी होती है। यह वस्तु एक ही होती है। दो से तो प्रेम ही नहीं होता। हृदय ही प्रेम का स्थान है। इस तरह से, अन्खिंग की तथाकथित शक्ति स्वयं ही कुण्डलिनी-रूप सिद्ध हो गई। प्राचीन मिस्र की मान्यता के अनुसार, साधारण यौनसम्बन्ध के दौरान यौन-उन्माद/स्खलन की शक्ति या तो नीचे गिर कर भूमिगत हो जाती है, या मस्तिष्क के विभिन्न विचारों के रूप में प्रस्फुटित होती है। दोनों ही मामलों में यह नष्ट हो जाती है। परन्तु यदि मस्तिष्क का विचार एकमात्र कुण्डलिनी के रूप में हो, तब वह यौनशक्ति नष्ट नहीं होती। ऐसा इसलिए है, क्योंकि कुण्डलिनी का ध्यान प्रतिदिन किया जाता है, अन्य विचारों का नहीं। इसलिए यौनशक्ति से निर्मित, कुण्डलिनी की प्रचंडता लम्बे

समय तक बनी रहती है। क्योंकि अन्य विचार कभी-कभार ही दोबारा पैदा होते हैं, इसलिए उनकी प्रचंडता तब तक गिर चुकी होती है। साथ में, यौनशक्ति सभी विचारों में बंट कर बहुत छोटी रह जाती है, जबकि वह कुण्डलिनीयोग से एक ही कुण्डलिनी को मिलती है, जिससे पूरी बनी रहती है। अतः सिद्ध होता है कि प्राचीन मिस्र की तथाकथित शक्ति कुण्डलिनी ही है, और अन्खिंग भी कुण्डलिनीयोग से भिन्न नहीं है। एक प्रकार से हम कुण्डलिनीयोग को अन्खिंग तकनीक का सरल व वैज्ञानिक रूपांतर भी कह सकते हैं।

प्राचीन तंत्र में यौनोन्माद (बिंदुपात) पूर्णतया वर्जित नहीं है, अपितु उस पर आत्मनियंत्रण न होना ही वर्जित है

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार, यदि ओर्गैस्मिक शिखर/वीर्यपात के समय मूलबबंध व उड्डीयान बंध को मजबूती से व लम्बे समय तक बना कर रखा जाता है, तब पूरी यौनशक्ति मस्तिष्क-स्थित कुण्डलिनी को मिलती है। उससे ऐसा लगता है कि यौन-चक्र व मस्तिष्क-चक्र मिलकर एक हो गए हैं, और दोनों पर कुण्डलिनी एकसाथ चमक रही है। इससे वीर्य का क्षरण भी बहुत कम होता है, जबकि आनंद बहुत अधिक प्राप्त होता है। यदि केवल उड्डीयान बंध ही लगाया जाए, तो यह सकारात्मक प्रभाव बहुत कम हो जाता है।

सौंदर्य के आधार के रूप में कुंडलिनी

सुन्दरता क्या है

यह अक्सर कहा जाता है कि सुन्दरता किसी दूसरे में नहीं, अपितु अपने अन्दर होती है। ध्यान योग से यह बात बखूबी सिद्ध हो जाती है। सुन्दर वस्तु को इसलिए सुन्दर कहा जाता है क्योंकि वह हमारे मन में आनंद के साथ लम्बे समय तक दृढ़तापूर्वक बसने की सामर्थ्य रखती है। मन में वैसी आकर्षक व स्थायी छवि को ही कुण्डलिनी भी कहते हैं।

सुन्दर वस्तु के प्रति अनायास ध्यान

लम्बे समय तक मन में बैठी हुई वस्तु की तरफ ध्यान स्वयं ही लगा रहता है। इससे अनादिकाल से लेकर मन में दबे पड़े चित्र-विचित्र विचार व रंग-बिरंगी भावनाएं उमड़ती रहती हैं। उनके प्रति साक्षीभाव व अनासक्ति-भाव स्वयं ही विद्यमान रहता है, क्योंकि मन में बैठी हुई उपरोक्त वस्तु निरंतर अपनी ओर व्यक्ति का ध्यान खींचती रहती है। इससे वे भावनामय विचार क्षीण होते रहते हैं, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति उत्तरोत्तर शून्यता की ओर बढ़ता जाता है। अंततः व्यक्ति पूर्ण शून्यता या आत्मज्ञान को प्राप्त कर लेता है।

सबसे अधिक सुन्दर वस्तु

लौकिक परिपेक्ष्य में एक सर्वगुणसंपन्न स्त्री को एक उसके योग्य व उसके रुचिकर पुरुष के लिए सर्वाधिक सुन्दर माना जाता है। ऐसा इसीलिए है क्योंकि वैसी स्त्री का चित्र वैसे पुरुष के मन में सर्वाधिक मजबूती से बस जाता है। दोनों के बीच में प्रतिदिन के संपर्क से वह चित्र मजबूती प्राप्त करता रहता है। अंततः वह इतना अधिक माजबूत व स्थायी बन जाता है कि वह एक योग-समाधि का रूप ले लेता है। यदि बीच में स्वस्थ आकर्षण में (सच्चे प्यार में) खलल पड़े, तो मानसिक चित्र कमजोर भी पड़ सकता है। ऐसा जरूरत से ज्यादा इंटरेक्शन, शारीरिक सम्बन्ध आदि से हो सकता है। लौकिक व्यवहार में यह नजर भी आता है कि विवाह के बाद परस्पर आकर्षण कम हो जाता है। यदि अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती रहें, तो ऐसे यिन-यांग आकर्षण को समाधि व आत्मज्ञान के स्तर तक पहुँचाने के लिए २ साल काफी हैं। ऐसे ही बहुत सारे मामलों में हैरान कर देने वाली अनुकूल परिस्थितियों को देखकर ईश्वर पर व अच्छे कर्मों पर बरबस ही विश्वास हो जाता है।

सुन्दरता की प्राप्ति सांसारिक वस्तुओं पर नहीं, अपितु अच्छे कर्मों व ईश्वर-कृपा पर निर्भर

कई लोगों के पिछले कर्म अच्छे नहीं होते, और उन पर ईश्वर की कृपा भी नहीं होती। ऐसे लोगों को ऐसा मजबूत यिन-यांग आकर्षण उपलब्ध ही नहीं होता। कई लोगों को यदि उपलब्ध हो भी जाता है, तो भी अनुकूल परिस्थितियाँ न मिलने के कारण वह लम्बे समय तक स्थिर नहीं रह पाता। ऐसे में समाधि नहीं लग पाती। बहुत से लोग वर्तमान में बहुत अच्छे कर्म कर रहे होते हैं। वे सदाचारी होते हैं। वे बड़ों-बूढ़ों को व गुरुओं को प्रसन्न रखते हैं, एवं उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। वे उनके सामने नतमस्तक बने रहते हैं। वे सभी कठिनाईयों व दुर्व्यवहारों को प्रसन्नता के साथ सहते हैं। इससे उनके मन में अपने गुरुओं, वृद्धों व परिवारजनों की छवियाँ बस जाती हैं। उनमें से कोई अनुकूल छवि उनकी कुण्डलिनी बन जाती है। कई बार अप्रत्यक्ष रूप से कुण्डलिनी को पुष्ट करने वाला यिन-यांग आकर्षण भी कई किस्मत वालों को प्राप्त हो जाता है।

अवसरों से रहित लोगों के लिए कुण्डलिनी-योग एक बहुत बड़ी राहत

जिन अधिकाँश व बदकिस्मत लोगों को प्राकृतिक रूप से भरपूर ध्यान का अवसर नहीं मिलता, उन्हीं के लिए कुण्डलिनी योग बनाया गया है, मुख्य रूप से। कई हतोत्साहित व निराशावादी लोग इसे "रेत में से तेल निकालने" की संज्ञा भी देते हैं। यद्यपि यह अब सच्चाई है कि रेत में भी तेल (पैट्रोल) होता है। इसमें उपयुक्त समय पर तंत्र के प्रणय-योग के सम्मिलन से यह बहुत आसान, व्यावहारिक व कारगर बन जाता है।

बनावटी प्यार

किसी विशेष वस्तु से प्रतिदिन के लौकिक प्यार की कमी को मेडीटेशन से पूरा करना भी एक जादुई कारीगरी ही है। इसे हम "प्रेम का कृत्रिम निर्माण (synthesis of love)" भी कह सकते हैं। योग एक ऐसी फैक्टरी है, जो प्रेम का कृत्रिम उत्पादन करती है। यह कारीगरी मुझे बचपन से लेकर प्रभावित करती आई है। इससे लौकिक प्यार की तरह पतन की भी सम्भावना नहीं होती, क्योंकि वस्तु से सारा इंटरेक्शन मन में ही तो होता है। अति तो इन्द्रियों से ही होती है हमेशा।

सुन्दरता सापेक्ष व आभासिक होती है

यदि सुन्दरता निरपेक्ष होती, तो एक सुन्दर स्त्री सभी प्रकार के लोगों को एकसमान सुन्दर लगा करती, और हिंसक जानवर भी उसके पीछे लट्टू हो जाया करते। इसी तरह, यदि सुन्दरता भौतिक रूप-आकार पर निर्भर होती, तब योग से प्रवृद्ध की गई वृद्ध गुरु व काली माता (बाहरी तौर पर कुरूप व डरावनी) के रूप की कुण्डलिनी सबसे अधिक सुन्दर न लगा करती, और वह योगी के मन में सबसे ज्यादा मजबूती से न बस जाया करती।

मानवतापूर्ण समस्याएँ भी कुण्डलिनी को क्रियाशील करती हैं

मानवतापूर्ण समस्याएँ क्या हैं

ऐसी समस्याएँ जो सतही या आभासिक होती हैं, तथा जिनसे अपना या औरों का कोई अहित नहीं होता है, वे मानवतापूर्ण समस्याएँ कहलाती हैं। उदाहरण के लिए, किसी को प्रेमसंबंध के टूटने की समस्या का आभास होता है। यद्यपि वास्तविकता यह होती है कि उसका प्रेमप्रसंग कभी चला ही नहीं होता है। ऐसा ही आश्चर्यजनक एहसास प्रेमयोगी वज्र को भी हुआ था, जिससे उसे क्षणिक आत्मजागरण की अनुभूति होने में मदद मिली थी।

अन्य उदाहरण हम उपवास का लेते हैं। वह हमें समस्या की तरह लगता है, जबकि वास्तव में वैसा होता नहीं है। उपवास से शरीर और मन के साथ कुण्डलिनी को भी ऊर्जा मिलती है।

मानवता के लिए समस्या झेलना भी मानवतापूर्ण समस्या है

जप, तप, योग आदि आध्यात्मिक गतिविधियाँ इसका अच्छा उदाहरण हैं। देश, समाज, मानवीय धर्म, परिवार आदि के लिए समस्या सहना मानवीय समस्या है। समस्या से जितनी अधिक सत्यता व शुद्धि के साथ जितने अधिक लोगों का भला होगा, उसकी मानवता उतनी ही अधिक होगी।

मानवतापूर्ण समस्या से क्या होता है

मानवतापूर्ण समस्या से आदमी मानवता से प्रेम करने लगता है। वह सभी मनुष्यों से प्रेम करने लगता है। उसके मन में एक विशेष मनुष्य (गुरु,मित्र,देव आदि) की छवि बस जाती है। समय के साथ वही फिर कुण्डलिनी बन जाती है। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी यही हुआ। शरीरविज्ञान दर्शन के प्रभाव से चल रही उसकी अति क्रियाशीलता के कारण उसके मन में उन वृद्धाध्यात्मिक पुरुष की छवि पुष्ट होती गई।

मानवीय समस्या से कुण्डलिनी कैसे विकसित होती है

जब कुण्डलिनी मन में काफी मजबूत हो जाती है, तब एक समय ऐसा आता है कि व्यक्ति काम के व कुण्डलिनी के दोहरे बोझ से टूट जैसा जाता है। वैसी स्थिति में जैसे ही कोई बड़ी आभासिक समस्या उसके रास्ते में आए, तो वह पूरी तरह से कुण्डलिनी के समक्ष आत्मसमर्पण कर देता है, और कुण्डलिनी के आश्रित हो जाता है। इससे उसकी कुण्डलिनी क्रियाशील हो जाती है।

क्रियाशील हो चुकी कुण्डलिनी फिर कैसे जागृत होती है

कुण्डलिनी के क्रियाशील हो जाने के बाद समस्याग्रस्त व्यक्ति का मानसिक अवसाद घट जाता है, और आनंद बढ़ जाता है। इससे कुण्डलिनी पर उसका विश्वास बढ़ जाता है, और उसे लगता है कि उसकी कुण्डलिनी से ही उसको सभी समस्याओं से सुरक्षा मिलती है। फिर वह कुण्डलिनी को जागृत करने वाले योग आदि शास्त्रों का अध्ययन और उनका अभ्यास करने लगता है। इससे उसका योग से सम्बंधित ज्ञान और अभ्यास आगे से आगे बढ़ता रहता है। अंततः उसकी कुण्डलिनी जागृत हो जाती है।

प्रेमयोगी वज्र को कैसे समस्या से कुण्डलिनी के लिए एस्केप विलोसिटी मिली

प्रेमयोगी वज्र शरीरविज्ञान दर्शन के प्रभाव से प्राप्त हो रहीं मानवीय समस्याओं, विभिन्न मानवीय कामों और कुण्डलिनी के बोझ से टूट जैसा गया था, शारीरिक रूप से। उसकी स्मरणशक्ति भी काफी घट गई थी। यद्यपि उसके मन में आनंद व शान्ति काफी बढ़ गए थे। फिर उसे घर से बहुत अधिक दूर सपरिवार शान्ति के साथ एक मनोरम स्थान पर रहने का मौक़ा मिला। घर से वहां तक आवागमन के लिए उसने अत्याधुनिक व बहुत महंगी गाड़ी खरीदी। उसको उसमें ड्राईवर सीट कम्फर्ट नहीं मिला। वह बहुत पछताया, पर जो होना था, वह हो चूका था। अपने को संभालने के लिए वह पूरी तरह से कुण्डलिनी के सहारे होकर मन में उसका ध्यान करने लगा। उससे उसकी कुण्डलिनी चमकने लगी, और उसकी चिंता लगभग समाप्त ही हो गई। इससे आश्वस्त होकर वह ई-बुक्स, पेपर बुक्स, इंटरनेट व मित्रों की मदद से योग सीखने लगा। उससे उसकी कुण्डलिनी एक साल में ही बहुत मजबूत हो गई। उसके अंतिम एक

महीने में यौनयोग की सहायता लेने पर वह जागृत हो गई। उसके बाद वह अपनी गाड़ी का अभ्यस्त हो गया, तथा उसे पता चला कि उसकी गाड़ी का कम्फर्ट दरअसल अन्य गाड़ियों से कहीं अधिक था। इसका अर्थ है कि उसकी समस्या असली नहीं बल्कि आभासिक थी, जो उसकी कुण्डलिनी को जगाने के लिए उसके अन्दर पैदा हुई थी।

कुण्डलिनी के प्रति समर्पण ही ईश्वर के प्रति समर्पण है।

आभासिक समस्या सफलता के लिए भरपूर कोशिशों के बाद होनी चाहिए

यदि थोड़े से एफर्ट्स के बाद ही समस्या का सामना करना पड़े, तब आदमी का विश्वास विविधतापूर्ण दुनियादारी पर बना रहता है, और वह कुण्डलिनी के सामने पूर्ण आत्मसमर्पण नहीं करता। परन्तु जब भरपूर प्रयास करने के बाद भी आदमी को हानि का ऐहसास होता है, तब दुनिया से उसका विश्वास उठ जाता है, और वह पूरी तरह से कुण्डलिनी के सामने घुटने टेक देता है, ताकि बिना भौतिक मशक्कतों के ही उसे प्राण-रस या जीवन-रस मिलता रहे। यह सिद्धांत है कि भरपूर प्रयासों के बाद आने वाली समस्याएँ आभासिक या सकारात्मक ही होती हैं, वास्तविक या नकारात्मक नहीं।

इस कुंडलिनी उत्प्रेरक समस्या को भौतिक दुनियादारी के प्रति सकारात्मक और अस्थायी अविश्वास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है

इस कुंडलिनी उत्प्रेरक समस्या को बहुत से लोग भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक आघात / ट्रामा के रूप में परिभाषित करते हैं। हालांकि यह वास्तव में आघात नहीं है, क्योंकि आघात तो व्यक्ति को नीचे गिराता है, कुंडलिनी की असीमित ऊंचाइयों तक नहीं उठाता। वास्तव में इसे भौतिक दुनिया के प्रति विश्वास के सकारात्मक और अस्थायी रूप से क्षीण होने के रूप में कहा जाना चाहिए, जो कि व्यक्ति को कुंडलिनी {एकमात्र मानसिक छवि} की मानसिक दुनिया की ओर प्रेरित करता है।

तंत्र के अनुसार भौतिक दुनियादारी से मन भरने पर ही कुण्डलिनी आसानी से प्राप्त होती है

एक व्यक्ति को जीवन के हरेक क्षेत्र का अनुभव होना चाहिए {जैसा प्रेमयोगी वज्र को था}, नहीं तो भौतिक दुनिया के प्रति लालसा से उसका मन दुनिया में रमा रहेगा। वह पार्याप्त रूप से समृद्ध भी होना चाहिए {जैसा प्रेमयोगी वज्र था}, नहीं तो उसे कमाई की चिंता बनी रहेगी, जिससे उसका मन दुनिया से नहीं हटेगा। सीधी सी तंत्रसम्मत बात है कि जिसका मन भौतिक दुनिया की सकारात्मक, कर्मपूर्ण व मानवीय रंगीनियों से भर गया हो, उसे ही उससे ऊपर उठने का मौक़ा आसानी से मिलता है।

कुण्डलिनी के विलयन से आत्मज्ञान

योग-साधना करते-२ एक समय ऐसा आता है, जब कुण्डलिनी आत्मा में विलीन होने लगती है। तब व्यक्ति का विश्वास कुण्डलिनी से भी हटकर आत्मा पर केन्द्रित हो जाता है। उसके दौरान ही उसे क्षणिक आत्मज्ञान हो जाता है। ऐसा ही प्रेमयोगी वज्र के साथ भी हुआ था, जिसका वर्णन उसने अपनी हिंदी में पुस्तक “शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)” तथा अंग्रेजी में पुस्तक “Love story of a Yogi- what Patanjali says” में विस्तार के साथ किया है।

कुण्डलिनी से यौन-हिंसा पर रोकथाम

यह तांत्रिक पोस्ट तंत्र के आदिदेव भगववान शिव व तंत्र गुरु ओशो को समर्पित है।

प्रमाणित किया जाता है कि इस तांत्रिक वैब पोस्ट में किसी की भावना को ठेस पहुंचाने का प्रयास नहीं किया गया है। इसमें तांत्रिक वैबसाइट के अपने स्वतंत्र विचार जनहित में प्रस्तुत किए गए हैं। हम बलात्कार पीड़िताओं के साथ सम्वेदना प्रकट करते हैं।

आजकल हर जगह यौन हिंसा की ख़बरें सुनने को मिल रही हैं। यह पूरी दुनिया में हो रहा है। कोई भी क्षेत्र इस मामले में अपवाद नहीं है। अभी हाल ही में हैदराबाद में घटित डा० प्रियंका रेड्डी यौन हत्याकांड इसका सबसे ताजा उदाहरण है। दूसरा ताजा उदाहरण उत्तर प्रदेश के उन्नाव का है, जहां एक बलात्कार से पीड़ित बाला को ज़िंदा जलाया गया। आओ, हम इन मामलों के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व तांत्रिक पहलुओं के सम्बन्ध में विचार करते हैं।

यौन हिंसा के मुख्य कारण

यौनहिंसा का मुख्य कारण सार्वजनिक स्थानों पर परोसी जाने वाली, अश्लीलता, भौंडेपन, व्यभिचार एवं पोर्न से भरी हुई ऑडियोविजुअल सामग्रियां हैं। हालांकि, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि ये यौन-अनुशासित और तांत्रिक व्यक्ति को शारीरिक और आध्यात्मिक रूप से नुकसान पहुंचाने के बजाय लाभ पहुंचा सकती हैं। इसलिए, इस मामले में मानसिक दृष्टिकोण का प्रकार अधिक महत्वपूर्ण कारक है।

यौन हिंसा का दूसरा मुख्य कारण समाज में समुचित यौन शिक्षा का अभाव है। कई जगह जो यौन शिक्षा दी जाती है, वह तंत्र के अनुसार नहीं होती, इसलिए वह पूरी तरह से कारगर नहीं हो पाती। वास्तविक यौन शिक्षा तो तांत्रिक यौन शिक्षा ही है। तंत्र ही यौनाचार का विज्ञान है। आजकल जब भौतिक यौन शिक्षा को हर जगह फैलाया जा रहा है, तब भी यौन हिंसा बढ़ने की क्या वजह है? इसकी वजह यही है कि उसमें तंत्र की आध्यात्मिकता को शामिल नहीं किया जा रहा है। भौतिक यौन शिक्षा तो कई बार लाभ की बजाय हानि भी पहुंचाती है, तथा वास्तविक यौन सुख से भी वंचित रखती है। यह तांत्रिक यौन शिक्षा ही है, जो वास्तविक यौन सुख को उपलब्ध करवाते हुए आदमी को शारीरिक, मानसिक, व आध्यात्मिक रूप से भी उन्नत करती है।

यौन हिंसा का तीसरा मुख्य कारण समाज में बढ़ती अव्यवस्था, व बेरोजगारी है। इससे असुरक्षा की भावना बढ़ती है, जो यौन हिंसा को जन्म देती है। खाली दिमाग शैतान का घर होता है। जिस आदमी के पास काम और आमदनी नहीं होते, उसे ऊटपटांग ही सूझता है।

यौन हिंसा का चौथा कारण वास्तविक आध्यात्मिकता की कमी है। आध्यात्मिकता खाली दिमाग को भी नियंत्रण में रखती है। तभी तो खाली बैठे हुए जोगी-फकीर कभी गलत काम नहीं करते।

यौन हिंसा का पांचवां प्रमुख कारण न्यायिक कारण है। न्याय प्रणाली भी अपने तरीके से सही काम कर रही है। यद्यपि यह अपराधी मानसिकता के मन में पर्याप्त डर या शर्म पैदा नहीं कर पा रही है। अपराध या तो डर से रुकते हैं, या शर्म से। इसमें शर्म पैदा करने वाला तरीका ज्यादा मानवतापूर्ण है। एक कटु सत्य यह भी है कि ज्यादातर मामलों में अपराधी सजा के भय से ही बलात्कार-पीड़िता की हत्या करते हैं, ताकि ज्यादा से ज्यादा सबूत मिटाए जा सके। यह भी यह भी सच्चाई है कि अधिकांशतः तेज दिमाग वाले लोग ही अपराधी बनते हैं। यदि ऐसे लोगों को समुचित दिशा-निर्देशन मिलता रहे, तो वे अपराध की बजाय समाज के अन्य बहुत से महत्त्वपूर्ण काम कर सकते हैं।

तांत्रिक आचार को अपनाने से यौन हिंसा पर रोकथाम

बेशक तंत्र बाहर से देखने पर यौन-सनकी शास्त्र की तरह लगता हो, परन्तु ऐसा नहीं है। तंत्र पोर्न या बलात्कार के बिलकुल विपरीत है। इसमें यौन साथी को पूर्णतः अपने समान समझ कर उससे प्रेम किया जाता है। इसमें परस्पर रजामंदी होती है। इसमें यौन-स्वास्थ्य व यौन अनुशासन पर बहुत ध्यान दिया जाता है। सच्चाई तो यह है कि अनुशासित तंत्र के सामने तो सर्वसाधारण व पारिवारिक प्रणय सम्बन्ध भी बलात्कार की तरह प्रतीत होते हैं। तंत्र में किसी की बेटी या पत्नी को यौन साथी नहीं बनाया जाता। इससे किसी की भावनात्मक संपत्ति को नुक्सान नहीं

पहुंचता। तंत्र में बहुत लम्बे समय तक यौन साथी के साथ अन्तरंग सम्बन्ध बना कर रखना पड़ता है। उसे कई वर्षों तक बदला नहीं जा सकता। उसे मझधार में भी नहीं छोड़ा जा सकता। इससे भी बलात्कार जैसे क्षणिक वासना पूर्ति के कामों पर रोक लगती है। तंत्र में एकपत्नीव्रत को सर्वश्रेष्ठ आचार माना गया है, तथा पत्नी को ही सर्वश्रेष्ठ तांत्रिक साथी माना गया है। भगवान शिव-पार्वती की जोड़ी इसका अच्छा उदाहरण है।

कुण्डलिनी शक्ति के बहिर्गमन को रोकने से यौन हिंसा की रोकथाम

वैसे तो जितना संभव हो सके, तांत्रिक विधि से वीर्यपात को रोककर उसकी शक्ति को कुण्डलिनी शक्ति में रूपांतरित कर देना चाहिए। फिर भी **मासिक चक्र के गर्भाधान से सुरक्षित काल (मासिक चक्र के प्रथम 7 और अंतिम 7 दिन, यद्यपि कोई भी समय शत-प्रतिशत सुरक्षित नहीं हो सकता है)** में किए गए वीर्यपात के बाद सम्भोग बंद नहीं करना चाहिए, बल्कि वीर्य-रक्षण के साथ जारी रखना चाहिए। वीर्यपात से शक्ति बहिर्मुख होकर नष्ट हो जाती है। इससे यौन साथी के प्रति द्वेष पैदा होता है, जो यौन हिंसा में बदल सकता है। इससे एक प्रकार से शक्ति का मुंह बाहर की तरफ खुल जाता है, और लम्बे समय तक वैसा ही बना रहता है। कुछ दिनों के बाद जब बाहर की और **शक्ति (नागिन)** का मुंह बंद हो जाता है, तब आदत से मजबूर मूढ़ मनुष्य फिर से वीर्यपात करके उसे खोल देता है। इससे उसकी कुण्डलिनी शक्ति निरंतर बाहर की और बर्बाद होती रहती है। उससे आदमी बाहरी दुनिया की मोहमाया में बुरी तरह से फँस जाता है, और उसके अन्दर बहुत से दुर्गुण पैदा हो जाते हैं। उस शक्ति को जितना हो सके, वीर्यपात के बाद उतना शीघ्र ऊपर (मस्तिष्क) की ओर चढ़ा दिया जाना चाहिए। यहाँ तक कि एक बार भी वीर्य के संरक्षण और उसके ऊर्ध्व-चालन के साथ किया गया तांत्रिक यौनयोग बहुत सुन्दर फल देता है, बेशक उसके बाद लम्बे समय तक सेक्स न किया जाए। उससे शक्ति की बहिर्मुखता (नागिन का मुंह नीचे की ओर होना) से उत्पन्न नकारात्मकता एकदम से यू टर्न लेकर ऊर्ध्वमुखता **(नागिन का मुंह ऊपर की तरफ उठना)** से उत्पन्न सकारात्मकता का रूप ले लेती है। इससे यौन साथी से भी प्रेम बढ़ता है, जिससे यौन हिंसा पर लगाम लगती है। जैसे-२ वीर्य बढ़ता जाता है, वैसे-२ ही मस्तिष्क में कुण्डलिनी शक्ति का स्तर भी बढ़ता जाता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि हमने यौन योग से वीर्य की शक्ति को मस्तिष्क की ओर जाने के लिए निर्दिष्ट किया होता है। उसके साथ कुण्डलिनी स्वयं ही मस्तिष्क की तरफ विकास करती है, क्योंकि यौन योग से हमने कुण्डलिनी को उस वीर्य-शक्ति के ऊपर आरोपित किया होता है।

कुण्डलिनी योग से यौन हिंसा पर लगाम

यह मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक रूप से सत्य है कि प्रत्येक जीव अपनी कुण्डलिनी के विकास के लिए ही यौन सम्बन्ध बनाता है। महान तंत्र गुरु ओशो ने भी यह बात कही है कि सम्भोग से समाधि की प्राप्ति सबसे आसान व व्यावहारिक है। समाधि का अर्थ यहाँ निरंतर का कुण्डलिनी-ध्यान या कुण्डलिनी-जागरण ही है। इस परिपेक्ष्य से, यदि कुण्डलिनी के विकास के लिए कुण्डलिनी-योग की सहायता ली जाए, तो सम्भोग की आवश्यकता ही न पड़े। इसी वजह से तो ऋषि-मुनि व महान योगीजन आजीवन विवाह के बिना ही पूर्ण संतुष्ट जीवन जी पाते थे।

इतिहास गवाह है कि जब से भारत की वैदिक संस्कृति का अन्य संस्कृतियों के द्वारा अतिक्रमण हुआ है, तभी से यौन-हिंसा के मामले बढ़े हैं, और वीभत्स हुए हैं। इसलिए यौन-हिंसा से बचने के लिए कुण्डलिनी योग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

तांत्रिक यौन-शिक्षा को सर्वसुलभ करवाने वाली निम्नलिखित पुस्तकें अनुमोदित की जाती हैं

1) शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)

2) कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है

3) कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान

कुंडलिनी के लिए यौनयोग के विकल्प के रूप में श्वास की विपरीतक्रम प्रवाह विधि (बैकवार्ड फ्लो मैथड या कुंडलिनी पंप); कोरोना काल में तो सही ढंग की व भरपूर साँसें ली ही जानी चाहिए, क्योंकि किसको पता कि कोरोना कब किसकी साँसें छीन ले

योग में श्वास-प्रश्वास का सर्वाधिक महत्त्व है। सही ढंग से श्वास लेने पर ही योग का अधिकांश सफर तय हो जाता है। तभी तो कहते हैं कि साँस को जीतने से मन पर भी विजय मिल जाती है। सही तरीके की साँस के साथ-2 कुंडलिनी खुद ही चलती रहती है। इसलिए साँस को चक्रों पर घुमाने से कुंडलिनी स्वयं ही घूमने लगती है।

विपरीतक्रम श्वास विधि ही श्वासयोग का मुख्य भाग है

विपरीतक्रम श्वास विधि को सीखने के लिए सबसे पहले पेट से साँस लेना सीखा जाता है। इसे डायाफ्रेगमेटिक डीप ब्रीथिंग भी कहते हैं। इसमें साँस अंदर भरने पर पेट बाहर की तरफ फूलता है। सांस बाहर छोड़ने पर पेट अंदर की ओर सिकुड़ता है। यदि इससे विपरीत क्रम में पेट की गति हो, तो वह साँस छाती से मानी जाती है। छाती से ली गई साँस से मन चंचल रहता है, और शरीर को भरपूर ऑक्सीजन भी नहीं मिलती।

विपरीतक्रम श्वास विधि में साँस शरीर से बाहर नहीं छोड़ी जाती

भौतिक रूप से यह बात अजीब लग सकती है, क्योंकि साँस तो बाहर निकलेगी ही। परंतु आध्यात्मिक रूप से यह सत्य है। बाहर जाने वाली साँस की सूक्ष्म ध्यानमयी शक्ति को पेट से नीचे की ओर धकेला जाता है। उससे नाभि के नीचे व स्वाधिष्ठान चक्र के आसपास एक संवेदना जैसी पैदा होती है। वह संवेदना वीर्य-निर्माण की प्रक्रिया को उत्तेजित करती है।

अंदर भरी जाने वाली साँस वास्तव में रीढ़ की हड्डी में ऊपर की ओर चढ़ाई जाती है

बाहर जाने वाली साँस से स्वाधिष्ठान चक्र पर वीर्य-संवेदना का बिंदु बनता है। वह संवेदना बाहर छोड़ी गई साँस से पीठ वाले स्वाधिष्ठान चक्र से होती हुई रीढ़ की हड्डी में ऊपर की तरफ चढ़ती है। वह सभी चक्रों से होते हुए सहस्रार तक पहुंच जाती है। उस संवेदना के साथ वीर्य की सूक्ष्म शक्ति व कुंडलिनी भी होती है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि वास्तव में शरीर के अंदर नीचे की तरफ जाने वाली हवा ऊपर की तरफ जाती है, और ऊपर की तरफ जाने वाली हवा नीचे की तरफ जाती है। इसीलिए इसे विपरीतक्रम प्रवाह विधि (बैकवार्ड फ्लो मैथड) कहते हैं।

मूलाधार से लेकर सहस्रार चक्र तक फैले हुए शेषनाग के ध्यान से विपरीत-क्रम श्वास विधि आसान हो जाती है

शेषनाग वाली मेरी पिछली पोस्टों के अनुसार शेषनाग ने मूलाधार व स्वाधिष्ठान के ऊपर अपनी कुंडली लगाई हुई है। वह रीढ़ की हड्डी से होकर ऊपर उठा हुआ है, और मस्तिष्क में उसके एक हजार फन हैं। जब हम पेट से साँस भरते हैं, तो वह पीछे की ओर तन कर सीधा व कड़ा हो जाता है, तथा फन उठा लेता है। इसका अर्थ है कि उसके शरीर में साँस ऊपर की ओर चढ़ कर उसके फन तक पहुंची। इससे पूर्वोक्त संवेदना की शक्ति ऊपर की तरफ चली जाती है। जब हम साँस छोड़ते हैं, तब वह आगे की ओर ढीला हो जाता है, और अपना फन नीचे झुका लेता है। ऐसा लगता है कि उसने फुफकार के साथ साँस नीचे की तरफ छोड़ी। साथ में पेट भी अंदर की ओर सिकुड़ कर नीचे की ओर दबाव डालता है। इन सबसे पूर्वोक्त स्वाधिष्ठान बिंदु पर संवेदना बनती है।

विपरीतक्रम श्वास विधि यौनयोग का सर्वोत्तम विकल्प है

कई लोग विभिन्न शारीरिक और मानसिक बाधाओं के कारण यौनयोग नहीं कर पाते। उनके लिए यह विधि सर्वोत्तम है। संन्यासी योगी भी इसी विधि का प्रयोग करते थे। इससे वीर्य की शक्ति मस्तिष्क को आसानी से मिल जाती है।

कुंडलिनी उच्च रक्तचाप के खिलाफ- तनाव को रोकने और उसे दूर करने के लिए एक रहस्यमय कुंजी; भोजन योग

शरीर में कुंडलिनी प्रवाह के लिए दो प्रमुख चैनल्स होते हैं। एक शरीर के आगे के भाग में है। दूसरा शरीर के पिछले भाग में है। दोनों शरीर के बीचोंबीच गुजरकर शरीर को दो बराबर व सिमेट्रिक जैसे भागों में बांटती हुई नजर आती हैं। **एक हिस्सा बायां भाग (स्त्री या यिन) है, और दूसरा दायाँ(पुरुष या यांग) है। इसीसे अर्धनारीश्वर भगवान की अवधारणा हुई है। उस शिव भगवान का बायां भाग स्त्री रूप व दायाँ भाग पुरुष रूप दिखाया गया है।** दोनों चैनल्स सभी चक्रों को बीचोंबीच काटते हैं। दोनों सभी चक्रों पर आपस में जुड़े हैं, जिससे बहुत से लूप बनते हैं। सबसे बड़ा लूप तब बनता है जब दोनों चैनल्स मूलाधार और मस्तिष्क चक्र पर आपस में जुड़े होते हैं। वह लूप सभी चक्रों को कवर करता है। कुण्डलिनी लूप पर भ्रमण करती है। और भी बहुत सी नाड़ियाँ इन दो मुख्य चैनल्स से निकलती हैं, जो पूरे शरीर में फैली हुई हैं। **हठयोग व ताओवाद में इनका विस्तार से वर्णन है।**

शरीर के आगे के भाग का चैनेल

मतिष्क प्यार का उत्पादक और दिल प्यार का एम्पलीफायर

प्यार मस्तिष्क में पैदा होता है। वह खाना खाते समय दिल तक उतर जाता है। **तभी तो कहा जाता है कि साथ मिलकर खाने से प्यार बढ़ता है। यह भी कहा जाता है कि दिमाग का रास्ता पेट से होकर गुजरता है।** जब स्कूल के दिनों में मेरे दोस्त मेरी काल्पनिक गर्लफ्रैंड का टिफिन दिखाकर मुझे मजाक में खाना खाने के लिए तैयार होने के लिए कहते थे, तब मुझे प्यार की बड़ी तेज व आनन्दमयी अनुभूति होती थी। आनंद तो दिल में ही पैदा होता है, दिमाग में तो बोझ महसूस होता है। **कुंडलिनी जागरण व आत्मज्ञान भी तभी होता है जब दिल दिमाग से जु**ड़ता है। केवल दिमाग में कुंडलिनी जागरण नहीं बल्कि पागलपन ही पैदा हो सकता है। इसीलिए जीभ को तालु से छुआकर कुण्डलिनी को दिमाग से उतारकर दिल तक लाने के लिए कहा जाता है। बेशक उसे दिल से ही लूप बनाकर दिमाग तक ऊपर नीचे घुमाया जाता रहे। इससे दिल और दिमाग आपस में जुड़ जाते हैं। तभी तो कहते हैं कि उसके हुस्न का नशा मेरे दिलोदिमाग पर छा गया, मतलब कि बहुत मजा आया।

कुंडलिनी भोजन के साथ मुंह से नीचे उतरती है

सीधा सा मतलब है कि टिफिन के खयाल से मेरे मुंह के रस के साथ मेरी कुंडलिनी मेरे दिल तक उतर जाती थी। वह रस या भोजन के कण एक कंडक्टर ज्वाइंट-ग्रीस की तरह दोनों जबड़ों को जोड़ देते थे। उससे होकर कुंडलिनी दिल तक उतरती थी और आनंद व प्यार पैदा करती थी। वहां से कुंडलिनी नाभि चक्र तक उतरती थी, जो वहां खाना पचाकर मुझे शक्ति का एहसास देती थी। तभी तो कहते कि नाभि में गट्स होता है। मैं तो पानी घूंट से मुंह को पूरा भरकर मस्तिष्क व शरीर के बीच बने सबसे मजबूत जोड़ को अनुभव करता हूँ, और वह पानी की घूंट मुझे अमृत के समान लगती है।

भरपेट खाना खाने के बाद यौनसंबंध या सैक्स बनाने की इच्छा

अक्सर देखा जाता है कि ज्यादा खाना खा लेने के बाद सैक्स के लिए मन करता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि आगे वाले चैनेल से होती हुई कुंडलिनी नाभि चक्र से स्वाधिष्ठान चक्र तक उतर जाती है। कुंडलिनी वहीँ से पीछे मुड़कर ऊपर चढ़ जाती है। मूलाधार तो शरीर को बीचोंबीच विभाजित करने के लिए रखा गया है, ताकि कुंडलिनी चैनेल शरीर के बीचोंबीच सीधी रेखा में खुले। इसीलिए इसका ध्यान भी जरूरी है। हालांकि यह कुंडलिनी को पीछे से ऊपर मोड़ने का काम भी करता है। यह चक्र मलोत्सर्ग से भी जुड़ा है। तभी तो सेक्स के बाद हाजत की अनुभूति होती है और पेट साफ हो जाता है। वास्तव में कुंडलिनी स्वाधिष्ठान चक्र से नीचे उतरकर मूलाधार चक्र पर आ जाती है। दूसरे तरीके से, यदि मूलाधार पर वज्र शिखा का ध्यान किया जाए जो कि वास्तविकता है, तब दोनों सेक्सुअल चक्रों का ध्यान एक साथ हो जाता है और कुंडलिनी भी अच्छी तरह से पीछे मुड़ती है। कई लोग यह भी कहते हैं कि कुंडलिनी आज्ञा चक्र से ही पीछे मुड़कर नीचे उतर जाती है और सहस्रार तो मूलाधार की तरह सेंटरिंग व ध्यान करने के लिए ही है। पर मुझे तो कुंडलिनी को सहस्रार तक ले जाना अधिक आसान और कारगर लगता है। इसी तरह नाक के

शिखर, आज्ञा चक्र और सिर पर बालों की चोटी रखने के स्थान से भी शरीर की सेंटरिंग होती है। **इसी सेंटरिंग के लिए हिन्दुधर्म में सिर के पिछले भाग में दोनों तरफ के बीचोंबीच एक लंबे बालों की चोटी (शिखा) रखी जाती** है।

विज्ञान फ्रंट चैनेल को ढंग से परिभाषित नहीं कर पाया है

मुझे लगता है कि फ्रंट चैनेल परस्पर स्पर्ष की संवेदना से बना है। यह स्पर्श की संवेदना सेल से सेल के कान्टेक्ट से आगे बढ़ती है। वैसे भी खाने का निवाला निगलते समय वह पहले गले के विशुद्धि चक्र में संवेदना पैदा करता है। फिर हृदय के अनाहत चक्र में और पेट में पहुंचने पर नाभि चक्र में संवेदना पैदा करता है। **जब ज्यादा खाने से पेट नीचे लटक जाता है तब वह नीचे की ओर दबाव डालकर जननांग क्षेत्र को उत्तेजित करता है जिससे सैक्सुअल स्वाधिष्ठान चक्र क्रियाशील हो जाता है।**

शरीर का मेरुदंड वाला चैनेल

सैक्स में सबसे ज्यादा आनंद होता है। जननांगों में सबसे तेज संवेदना पैदा होती है। यह भी सत्य है कि आनंद मस्तिष्क और दिल में एकसाथ तेज अनुभूति से पैदा होता है। इसका मतलब है कि जननांगों से संवेदना एकदम से मस्तिष्क व दिल तक जाती है। पहले वह सीधी मस्तिष्क तक जाती है। दिल तक तो उसे जीभ से उतारना पड़ता है। **तांत्रिक संभोग के समय मुंह में भरपूर लार रस बनने से कुंडलिनी चालन/शक्ति चालन को अतिरिक्त सहायता प्राप्त होती है।** इससे मस्तिष्क को भी कम थकान होती है। जननांगो से मस्तिष्क तक संवेदना को भेजने का रास्ता मेरुदंड ही है। विज्ञान से भी यह सिद्ध है कि मेरुदंड की नाड़ी जननांगों से सीधी मस्तिष्क तक जुड़ी होती है। विज्ञान के ही अनुसार , प्रत्येक चक्र भी मेरुदंड के माध्यम से ही मस्तिष्क से जुड़ा होता है।

संवेदना का बार-बार नाड़ी लूप में घूमना

जहाँ पहले से नाड़ी विद्यमान है, वहां पर संवेदना नाड़ी से चलती है। अन्य स्थानों पर सेल से सेल के कान्टेक्ट के थ्रू चलती है। मुझे तो लगता है मेरुदंड वाली संवेदना भी शुरु में स्पर्श के अनुभव से ही ऊपर चढ़ती है। इस तरह से नाड़ी लूप में कुण्डलिनी घूमने लगती है। **यह नाड़ी लूप ताओवाद के माइक्रोकोस्मिक ऑर्बिट और कुण्डलिनी योग में एकसमान है।**

यह नाड़ी लूप अनुभव के दायरे से विलुप्त हो गया, पर कुण्डलिनी अभ्यास से पुनः जागृत हो सकता है

आदमी केवल उन्हीं संवेदनाओं को अनुभव करने लगा , जिनकी उसे भौतिक रूप से सर्वाइव करने के लिए जरूरत थी। शरीर की अन्य संवेदनाओं को वह नजरअंदाज करने लगा। यह आध्यात्मिक नाड़ी लूप भी उन संवेदनाओं में शामिल था। इसलिए समय के साथ यह नाड़ी लूप अदृश्य हो गया। हालांकि अच्छी बात यह है कि लगातार के कुंडलिनी योग के अभ्यास से इस नाड़ी लूप को पुनः जागृत किया जा सकता है।

उलटी जीभ को पेलेट से छुआने पर काम आदि के बोझ से बढ़ा हुआ ब्लड प्रेशर एकदम से घट जाता है

यह मैंने पिछली पोस्ट में भी बताया था। मैं इस तकनीक की कारीगरी को कई बार आजमा चुका हूँ। अब इसका मैं उचित तरीका बताता हूँ। उलटी जीभ का तालु के साथ जितना पीछे हो सके, उतना पीछे फ्लैट और टाइट कांटेक्ट बनाएं। बेशक बहुत पीछे मोड़कर जीभ को परेशान न करें। बिल्कुल दांत के पीछे भी यदि जरा सी उल्टी जीभ लग जाए तो बहुत अच्छा कान्टेक्ट पॉइंट बनता है। **इस उल्टे स्पर्श के कारण काउंटर करेंट सिस्टम चालू हो जाता है और कुंडलिनी नीचे उतर जाती है।** यह काउंटर करेंट सिस्टम ऐसे ही है जैसे गर्म दूध के गिलास को ठंडे पानी में चारों ओर घुमाओ और ठंडे पानी को विपरीत दिशा में घुमाओ तो दूध एकदम से ठंडा हो जाता है। दूध की गर्मी पानी में एकदम चली जाती है। ऐसा लगता है कि मस्तिष्क पूरे शरीर में फ़ैल गया है। एकबार मुझे गुस्सा आ रहा था। उसी समय मैंने अपनी जीभ तालु से लगाई। मेरा मस्तिष्क शांत हो गया और उसकी एनर्जी हृदय चक्र तक उतर कर दोनों बाजुओं में फैल गई। मेरी बाजुएं लड़ाई के लिए तैयार हो गईं डिफेंसिव मोड में ही, क्योंकि मेरा मस्तिष्क शान्त था और लड़ाई शुरु नहीं करना चाहता था। **इसीलिए सच्चे योगी व कुंफू विद्वान डिफेंसिव होते हैं, ऑफेंसिव नहीं। ऐसा उपरोक्त बाजू वाला ब्रांचिंग नाड़ी सिस्टम आगे वाले चैनेल से निकलकर पूरे शरीर में फैला है।** ऐसी कल्पना करें कि दिमाग जीभ के

माध्यम से गले से जुड़ गया है। वैसे भी गले में अकड़न सी पैदा होगी। मस्तिष्क के बोझ के नीचे उतरने से वह अकड़न विशुद्धि चक्र पर ज्यादा बढ़ जाएगी। थोड़ी देर बाद वह बोझ हृदय चक्र तक पहुंच जाएगा। थोड़ी अधिक देर बाद वह नाभि चक्र तक पहुंच जाता है। **ऐसा साफ महसूस होता है कि कोई लहर जैसी दिमाग से नीचे उतरकर नाभि में विलीन हो गई।** उसके साथ ही मन एकदम से खाली और हल्का हो जाता है। **क्रोध आदि मन के विकार भी शांत हो जाते हैं, क्योंकि ये मन के बोझ से ही पैदा होते हैं। रक्तचाप भी एकदम से घटा हुआ महसूस होता है।** कुंडलिनी भी आनंद के साथ नाभि चक्र पर चमकने लगती है। इसीलिए नाभि को सिंक या समुद्र भी कहते हैं, क्योंकि यह आदमी का सारा बोझ सोख लेती है।

जीभ के पिछले हिस्से पर टिप से शुरु होकर जीभ के बीचोंबीच जाती हुई गले के बीच में उतरकर आगे के सभी चक्रों को कवर करने वाली एक पतली नस जैसी महसूस होती है। उसके ऊपर कुंडलिनी चलती है। वह नस ही नरम तालु से टच होने पर कुंडलिनी या अन्य संवेदनाओं या बोझ को दिमाग से नीचे उतारती है। माइक्रोकोस्मिक ऑर्बिट में कुंडलिनी को नहीं अपितु सीधे एनर्जी या संवेदना या बोझ को नाड़ी चैनलों में घुमाया जाता है।

तालाबंदी लोकडाऊन का उल्लंघन करके पलायन कर रहे लोगों का कुंडलिनी से सम्बंध

भोजन के बिना आदमी कई दिनों तक जिंदा रह सकता है। वैसे भी एक बार में ही यदि बहुत सारा खाना खा लिया जाए, तो दो दिन तक दुबारा खाना खाने की जरूरत न पड़े। मेरे एक जाने-पहचाने शख्स थे जो अक्सर एक बार में ही 5 आदमियों का खाना खा लेते थे। विशेषकर वह ऐसा शादी आदि समारोहों में करते थे, जहाँ अच्छा और तला भुना खाना बनता था। फिर वे 5 दिन तक बिना कुछ खाए ही कमरे में सोए रहते थे, और बार-2 पानी पीते रहते थे। वे हंसते भी बहुत थे और पूरा खुलकर हँसते थे। साथ में वे पूरी तरह से मस्त रहते थे। इससे उन्हें खाना पचाने में मदद मिलती थी। इसी तरह, लोकडाऊन की वजह से काम न करने से तो तीन दिन तक एक भारी भोजन से गुजारा चल सकता है। पर **भोजन से शरीर के लिए केवल पोषक तत्त्व ही नहीं मिलते, बल्कि मन के बोझ को कम करने वाला व आनन्द प्रदान करने वाला कुंडलिनी लाभ भी मिलता है।** इसी कुंडलिनी लाभ के लिए लोग खासकर मजदूर **नॉवेल कोरोना (कोविड-19) वायरस लोकडाऊन** का उल्लंघन करके घर भाग रहे हैं, भूख से नहीं। वैसे भी अधिकांश मामलों में कैम्पों में मुफ्त का खाना मिल ही रहा है। यदि भोजन केवल शरीर बनाने के लिए चाहिए होता, तब तो मोटे आदमी कई-2 दिनों तक खाना न खाया करते।

कुंडलिनी दोनों दिशाओं में प्रवाहित हो सकती है

सीखने के समय ताओवाद में आगे के फ्रंट चैनल में कुंडलिनी को ऊपर की तरफ चलाया जाता है। मैंने भी एकबार तांत्रिक प्रक्रिया के दौरान फ्रंट चैनेल से ऊपर जाते हुए महसूस किया था। वह एक हेलीकॉप्टर की तरह बड़े सुंदर ढंग से और स्पष्ट रूप से ऊपर उठी थी। उसने सेक्सुअल चक्रों से मस्तिष्क तक पहुंचने में लगभग 5-10 सेकंड का समय लिया था। कुंडलिनी संवेदना एक तरंग की तरह ऊपर उठी। वह जिस क्षेत्र से गुजरी, उस क्षेत्र को प्रफुल्लित करते गई। निचले वाला क्षेत्र सिकुड़ता गया। मतलब कि जैसे ही वह जननांगों से ऊपर उठी, वे एकदम से सिकुड़ गए। पहले वे पूरी तरह से प्रसारित थे।

यद्यपि सबसे सुंदर अनुभूति तब होती है जब कुंडलिनी फ्रंट चैनल से नीचे उतरती है और मूलाधार से वापिस मुड़कर बैक चैनल से ऊपर चढ़ती है। जब एनर्जी मस्तिष्क में पहुंचती है, तब चेहरे की त्वचा पर ऊपर की तरफ खिंचाव लगता है और आंखें भिंच जाती हैं। कानों से ऊपर मस्तिष्क में घुसती हुई सरसराहट या गशिंग फ्लो के जैसी अनुभूति होती है। हो सकता है कि वह खिंचाव के दबाव में रक्त प्रवाह हो। फिर उस गशिंग से भरे दबाव को जीभ से नीचे उतारा जाता है। नीचे आते हुए वह गशिंग कुंडलिनी में बदल जाती हो। मूलाधार से वह फिर ऊपर मुड़ जाती है। **रीढ़ की हड्डी का एक फन फैलाए शेषनाग के अनुभव से वह कुंडलिनी संवेदना मस्तिष्क तक पहुंच जाती है। नाग और जीभ का वैसे भी आपस में गहरा अंतरसंबंध है।** फिर वही गशिंग और फिर वही प्रोसेस बार बार चलता रहता है।

कुण्डलिनी सर्ज (लहर) के लिए बाई-साईकलिंग (बाईकिंग) योग

लोग सोचते हैं कि रोजाना की व्यस्त जीवनशैली से कुण्डलिनी साधना में बाधा पहुँचती है। पर ऐसा नहीं होता। व्यस्त काम-काज से कुण्डलिनी बहुत तेजी से ऊपर चढ़ती है। योग से रोजाना के कामकाज को करने की शक्ति भी मिलती है। कामकाज और योग, दोनों एक दूसरे के पूरक व सहयोगी हैं। 3 दिन की साईकलिंग से मेरी कुण्डलिनी मूलाधार से मस्तिष्क तक पहुँच गई। भारी गर्मी के बीच, एकदम से इतना ज्यादा बाईसाईकल मैं इसलिए चला सका, क्योंकि मेरा मन और शरीर रोजाना के कुण्डलिनी योगाभ्यास से फिट व तंदरुस्त थे।

मेरा बाई-साईकलिंग योग का अनुभव

इस हफ्ते आंशिक कोरोना-लौकडाऊन की वजह से मैंने साईकल पर ही अपने दफ्तर को आना-जाना शुरू किया। एक दिन का कुल 20 किलोमीटर का सफर हो जाता था। पहले दिन मैंने नोटिस किया कि मेरे मूलाधार पर बड़ी तेज व दबाव से भरी हुई संवेदना थी। वह संवेदना वैसी ही थी, जैसी सीमेन रिटेंशन से महसूस होती है। ऐसा लगता था जैसे कि मेरे मूलाधार चक्र पर किसी ने आगे से नुकीले चमड़े के जूते से गहरी किक मार दी हो, और उसके बाद मीठा व गहरा दर्द हो रहा हो। उससे मैं दिन के समय कुछ हल्का सा बेचैन रहने लगा। योग करते समय वह संवेदना फिर बढ़ जाती थी। मैं उस संवेदना को बार-२ पीठ से ऊपर चढ़ाने की कोशिश करता था। प्राणायाम के साथ पीठ के शेषनाग का चिंतन करने से वह संवेदना कुछ ऊपर जाती हुई लगती थी। इस प्राणायाम का वर्णन मैंने "बैकवार्ड फ्लो" व 'शेषनाग' वाली पुरानी पोस्ट में किया है। जब वह दर्द जैसी संवेदना ऊपर चढ़ती थी, तब पीठ में जगह-२ ऐंठन जैसी मीठी दर्द महसूस होती थी। उसी पर ही कुन्डलिनि चित्र भी प्रकट हो जाता था। दो दिन तक ऐसे ही चलता रहा। तीसरे दिन वह संवेदना मेरे पिछले अनाहत चक्र पर आ गई। ऐसा लगने लगा कि जैसे किसी ने चमड़े के पैने जूते से मेरे पिछले अनाहत चक्र पर गहरी किक मारी है, जिसके बाद उस पर मीठी व गहरी दर्द पैदा हो रही है। उससे मूलाधार का दबाव और वहां की संवेदना गायब हो गई। मणिपुर चक्र को संवेदना ने बायपास किया। इसका मतलब था कि मणिपुर चक्र ब्लोक नहीं था। जो चक्र ब्लॉक होता है, उसी पर वह मीठा दर्द महसूस होता है। एक दिन के बाद वह संवेदना गर्दन से होकर ऊपर चढ़ने लगी। फिर वह मीठी दर्द व अकड़न गर्दन के पिछले भाग के केंद्र (विशुद्धि चक्र) में महसूस होने लगी। उसी दिन मेरे मूलाधार को बाहर से किसी वजह से और संवेदना मिली। संवेदना आसानी से ऊपर चढ़ गई, क्योंकि मूलाधार पिछले फ्लो से अनब्लौक हो गया था। वह गर्दन की संवेदना से मिल गई और उसे मजबूत बना दिया। अनाहत चक्र की संवेदना गायब हो गई। अगले दिन, गर्दन से वह संवेदना मस्तिष्क में पहुँचने लगी, जिससे सिर हल्का परन्तु एनर्जी सर्ज के समय भारी लगने लगा। मैं दिन के समय कुर्सी पर बैठा था, और मुझे नींद की 4-5 मिनट की झपकी आ गई। जब मैं ऊपर उठा तो एनर्जी सर्ज पूरे वेग से पूरे मस्तिष्क में छा रही थी। दिमाग भारी व दबावयुक्त था। ऐसा लग रहा था कि उसमें मधुमक्खी के झुण्ड उड़ रहे हैं। यद्यपि आनंद भी आ रहा था। उससे कामकाज में दखलंदाजी न हो, इसके लिए मैंने उलटी जीभ को तालु से छुआ दिया। उससे एकदम से वह संवेदना की सर्ज आगे से नीचे उतर कर मेरे अगले अनाहत चक्र पर आ गई। उससे मेरा दिमाग एकदम से शांत हो गया, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। हृदय में कुण्डलिनी मजबूती से प्रकट हो गई, और वह आनंद से प्रफुल्लित हो गया। मस्तिष्क में केवल एनर्जी थी, कुण्डलिनी तो दिल में ही प्रकट हुई। इससे सिद्ध हुआ कि प्रेम दिल में ही बसता है। यह कोई आश्चर्य वाली चमत्कारिक घटना नहीं है, अपितु शरीर की सामान्य सी शरीरविज्ञान से जुडी हुई घटना है। इस प्रकार का कुण्डलिनी प्रवाह योगी के जीवन में इसी तरह से जीवनभर चलता रहता है। कुण्डलिनी जागरण तभी होता है, जब उसके लिए बहुत सी अनुकूल परिस्थितियाँ हों, और चक्र ब्लॉक न हों। जिस समय एनर्जी सर्ज मेरे दिमाग में छा रही थी, यदि उस समय मुझे किसी भी कारण से कुण्डलिनी की गहरी याद आ गई होती, तो पुनः कुण्डलिनी जागरण के लिए यह एक अनुकूल परिस्थिति होती। वास्तव में, मस्तिष्क में वह प्राणों का सर्ज था, क्योंकि उसमें कुण्डलिनी नहीं थी। विपरीत रूप से, कुण्डलिनी से भी प्राणों का सर्ज पैदा हो सकता है। वैसे में कुण्डलिनी की गहरी याद दिमाग में खुद ही प्राणों का सर्ज पैदा करती है। उसके साथ कुण्डलिनी खुद ही जुडी होती है, क्योंकि कुण्डलिनी ने ही तो वह प्राणों का सर्ज (महान लहर/जमघट) पैदा किया हुआ होता है। वैसी स्थिति में कुण्डलिनी जागरण हो जाता है। ऐसा ही कुण्डलिनी जागरण मुझे लगभग 3 साल पहले हुआ था, जिसका वर्णन मैंने इस वैबसाईट के होमपेज पर किया है।

बाईकिंग या साईकलिंग योग डायाफ्रागमैटिक साँसों को उत्तेजित करता है

मुझे लगता है कि साईकल चलाते समय पेट से गहरे सांस लेने से मेरा मूलाधार चक्र ज्यादा ही उत्तेजित हो गया था। स्पोर्ट्स बाईक में पीठ का पोस्चर अपनी प्राकृतिक अवस्था में होता है, और उसकी पतली सीट के दबाव से मूलाधार चक्र भी उत्तेजित होता रहता है। साथ में, पीठ में सांस लेते व छोड़ते हुए शेषनाग के चिंतन से मेरे मूलाधार को और अधिक शक्ति मिली। उससे मूलाधार में वीर्य शक्ति संचित होने लगी। उससे बैकवार्ड फ्लो भी चालू हो गया, जिससे मूलाधार में संचित एनर्जी पीठ में ऊपर चढ़ने लगी। मूलाधार की संवेदना वैसी ही थी, जैसी यौन-ऊर्जा के रक्षण से पैदा होती है। साथ में, वह संवेदना यौनसंबंध के लिए भी प्रेरित कर रही थी। शायद यही वजह है कि कामकाज में एक्टिव लोग सेक्सुअल रूप से भी एक्टिव होते हैं। मैं मुंह और जीभ को कस कर बंद रखता था, और जीभ की अधिकाँश सतह को तालु से कसकर चिपका कर रखता था। मैं उसका चिंतन एक पिलर के टॉप की स्लैब से करता था जिससे मस्तिष्क फ्रंट पिलर या एनर्जी चैनल से जुड़ा होता था। उससे साईकलिंग के समय उमड़ने वाले दिमाग के फालतू विचार नीचे उतरकर शरीर को एनर्जी देते रहते थे। उससे मन भी शांत रहता था, और थकावट भी नहीं होती थी।

अगले दिन मेरी कुण्डलिनी एनर्जी मणिपुर चक्र तक लौट आई थी

अगले दिन मेरी गहरी व मीठी दर्द पीछे के मणिपुर चक्र पर आ गई। संभवतः वह आगे के अनाहत चक्र से आगे के मणिपुर चक्र तक नीचे उतरी थी। आगे से वह पीछे के मणिपुर चक्र तक आ गई थी। वास्तव में इसी मीठी दर्द को एनर्जी कहते हैं। यही नाड़ी लूप में घूमती है। जब इस दर्द के साथ सबसे मजबूत व पसंदीदा मानसिक चित्र मिश्रित हो जाता है, तब वही एनेर्जी कुण्डलिनी कहलाती है। मुझे ऐसा भी लगा कि पीछे के चक्रों पर खाली एनेर्जी ज्यादा प्रभावी रहती है, जबकि आगे के चक्रों पर कुण्डलिनी ज्यादा प्रभावी रहती है। पीठ में जगह-२ बनने वाले मोड़ या बैंड उस एनेर्जी का निर्माण करते हैं, जिसके साथ कुण्डलिनी चित्र मिश्रित किया जाता रहता है।

कुण्डलिनी जागरण आध्यात्मिक प्रगति के लिए अत्यावश्यक नहीं है

कुण्डलिनी जागरण का योगदान यही है कि यह साधक के मन में कुण्डलिनी योगसाधना के प्रति अटूट विशवास पैदा करता है। उससे साधक प्रतिदिन के तौर पर हमेशा ही कुण्डलिनी योगसाधना करता रहता है। इस प्रकार से, यदि कोई व्यक्ति हमेशा ही सही तरीके से कुण्डलिनी योगसाधना करता रहे, तो एक प्रकार से उसकी कुण्डलिनी जागृत ही मानी जाएगी। हालांकि सही तरीके से कुण्डलिनी योगसाधना सीखने के लिए उसे योग्य गुरु की जरूरत पड़ेगी। एक प्रकार से, यह वैबसाईट भी एक गुरु (ई-गुरु) का ही काम कर रही है।

कुंडलिनी यदि पुरुषरूप है तो उसे स्त्रीरूप कुंडलिनी के यौनाकर्षण से बहुत बल मिलता है

दोस्तों, कुंडलिनी के क्षेत्र में इस समय तंत्र से बड़ा कोई विज्ञान नहीं है। मेरे साथ तंत्र स्वयं ही स्वाभाविक व व्यवहारिक रूप से सिद्ध हो गया था। यद्यपि मैं तंत्र के बारे में कुछ नहीं जानता था। हो सकता है कि यह मेरे पूर्वजन्म का प्रभाव हो। आज इस छोटी सी पोस्ट में मैं कुंडलिनी के त्वरित जागरण के लिए यौनतंत्र के महत्त्व पर प्रकाश डालूँगा।

यौनाकर्षण से कुंडलिनी की स्पष्टता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है, और वह जीवंत हो जाती है

गुरु-रूप की अकेली कुंडलिनी को भी योग-ध्यान के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है। यह तरीका यद्यपि धीमा होता है, परंतु सुरक्षित होता है। इसमें शान्ति और सात्विकता अधिक बनी रहती है। दूसरे तरीके में गुरु रूप की कुंडलिनी के साथ प्रेमिका रूप की कुंडलिनी का भी ध्यान किया जाता है। इसमें मुख्य कुंडलिनी गुरु रूप की होती है। प्रेमिका रूप की कुंडलिनी उसे यौनाकर्षण प्रदान करती है। जैसे पुरुष और स्त्री के भौतिक शरीर एक-दूसरे को यौनाकर्षण शक्ति से प्रफुल्लित करते रहते हैं, उसी तरह से योगी के मन में बने पुरुष और स्त्री के सूक्ष्म चित्र भी करते रहते हैं। यद्यपि यह तरीका अधिक शक्तिशाली और तीव्र फलदायी होता है, परंतु असुरक्षित होता है। इस तरीके से अशांति, बेचैनी और कमजोरी पैदा हो सकती है। इससे बचने के लिए पंचमकारों का प्रयोग करना पड़ सकता है। पंचमकार तो आम आदमी के लिए पाप स्वरूप ही हैं। इसलिए उनका फल भी भोगना पड़ता है। इसीलिए इस तरीके को सबकुछ या कुछ नहीं वाला तरीका कहते हैं। इससे या तो आदमी को सिद्धि मिलती है, या फिर उसका पतन होकर उसे नरक यातना भोगनी पड़ सकती है।

बुद्धिस्ट लोगों के वामपंथी तंत्र में यौनाकर्षण का सहारा लिया जाता है

बुद्धिस्ट तंत्र में दो डाईटी की अस्पष्ट सी मूर्तियां होती हैं। उनमें से एक मूर्ति को पुरुषरूप दिया जाता है, और दूसरी मूर्ति को स्त्रीरूप। पुरुष डाईटी में गुरु का या देवता का ध्यान किया जाता है। इसी तरह स्त्री डाईटी में प्रेमिका या देवी का ध्यान किया जाता है।

कुंडलिनी और मन्दिर का परस्पर सहयोगात्मक संबंध

दोस्तों, इसी हफ्ते मुझे एक नया कुंडलिनी अनुभव मिला। नया तो इसे नहीं भी कह सकते हैं, नए रूप में कह सकते हैं। कुंडलिनी तंत्र और सनातन धर्म के बीच में बहुत अधिक सहयोगात्मक रिश्ता है। इस पोस्ट में हम इसी पर चर्चा करेंगे।

मंदिर में कुंडलिनी को ऊर्ध्वात्मक गति मिलती है

एक-दो दिन से मैं कुछ मन की बेचैनी और चंचलता महसूस कर रहा था। मेरे फ्रंट स्वाधिष्ठान चक्र पर एक दबाव जैसा बना हुआ था।ऐसा1लग रहा था कि कुंडलिनी वहां पर अटकी हुई थी। योग से थोड़ा रिलीफ मिल जाता था, फिर भी दबाव बना हुआ था। मैं एक बड़े समारोह के लिए एक बड़े मंदिर की बगल में स्थित दुकान पर फूलों के गुलदस्तों की बुकिंग कराने के लिए गया। जब वापिस आया तो अपनी बाइक वहीँ भूल आया। बाइक की याद मुझे मन्दिर के पास आई। मैं यह सोचकर मंदिर के अंदर प्रविष्ट हुआ कि भगवान का वही आदेश था। मंदिर के दरवाजों पर ताले लगे हुए थे। इसलिए मैं बाहर के लंबे-चौड़े संगमरमर से बने खुले आंगन में टहलने लगा। वहाँ पर मुझे मस्तिष्क में कुंडलिनी का स्मरण हो आया। उसी के साथ स्वाधिष्ठान का कुंडलिनी-दबाव भी ऊपर चढ़ते हुए महसूस हुआ। वहाँ पर कुछ लोग उरे-परे आ-जा रहे थे। मैं उनके रास्ते से हटकर एकांत में एक शीशे की दीवार के साथ बने संकरे प्लेटफार्म पर बैठ गया। मेरा शरीर खुद ही ऐसी पोजीशन बनाने की कोशिश कर रहा था, जिससे स्वाधिष्ठान चक्र की कुंडलिनी पर ऊपर की तरफ खिंचाव लगता। मैंने अपनी पीठ का फन फैलाए हुए नाग के रूप में ध्यान किया। मेरी कुंडलिनी वज्र से शुरु होकर रियर अनाहत चक्र तक एक संवेदनात्मक नस या चैनल के रूप में आ रही थी। बैकवार्ड फ्लो मैडिटेशन तकनीक भी इसमें मेरी मदद कर रही थी। मस्तिष्क के विचारों को मैं कुंडलिनी के रूप में आगे से होकर फ्रंट अनाहत चक्र तक पहुंचता हुआ महसूस कर रहा था। इससे अनाहत चक्र पर ऊपर का प्राण और नीचे का प्राण (अपान) आपस में टकरा कर चमकती कुंडलिनी को प्रकट कर रहे थे। तभी मेरी बाहर गई पत्नी का फोन भी आया, जो शायद अदृश्य टेलीपैथी से ही हुआ होगा। उससे मुझे और अधिक बल मिला। उससे फ्रंट स्वाधिष्ठान चक्र का दबाव समाप्त हो गया। मेरी साँसें तेज व गहरी चलने लगीं। वे साँसे मुझे बहुत सुकून दे रही थीं। कुंडलिनी से संबंधित सारी प्राण शक्ति मेरे अनाहत चक्र को मिली। उससे मेरा हृदय प्रफुल्लित हो गया, और मैं तरोताजा होकर बाइक पर वापिस घर लौट आया, और खुशी-खुशी अपने कामों में जुट गया। बड़े-बड़े मंदिरों को बनाने के पीछे एक नया कुंडलिनी-रहस्य उजागर हो गया था।

स्वाधिष्ठान चक्र पर दबाव बनने का मुख्य कारण सीमेन रिटेंशन होता है

ऐसा यौनसंबंध से परहेज करने से भी हो सकता है, पॉर्न देखने से भी हो सकता है, और अपूर्ण तांत्रिक यौनयोग से भी। इसलिए उचित योगसाधना से इस दबाव को ऊपर चढ़ाते रहना चाहिए। मस्तिष्क तक इसे पहुंचाने से यदि सिरदर्द या मस्तिष्क में दबाव लगे, तो पूर्वोक्त ढंग से अनाहत चक्र तक ही इसे चढ़ाना चाहिए।

कुंडलिनी जागरण के लिए भगवान शिव लिंग को मूर्ति से अधिक श्रेष्ठ मानते हैं

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

इससे भगवान शिव की तथाकथित तन्त्रेश्वरता स्पष्ट जाती है। वे अपने लिंग को अपना निर्गुण रूप और अपनी मूर्ति को सगुण रूप मानते हैं। लिंग उस विराट स्तंभ का लघु रूप है, जो अधोलोकों को ऊर्ध्वलोकों से जोड़ता है। ब्रह्मा और विष्णु इसका आदि-अंत नहीं ढूंढ सके थे। इसी तरह लिंग भी मूलाधार को सहस्रार से जोड़ता है। यौनतंत्र का सारा रहस्य शिवपुराण के इसी कथानक में छिपा है। यदि शिव की मूर्ति पर या मस्तिष्क में बने शिव के चित्र पर सीधा ध्यान लगाया जाएगा, तो वह ज्यादा प्रभावी नहीं होगा। परंतु यदि वज्र पर शिव के चित्र का ध्यान किया जाएगा, तो वह वहाँ से सीधा मस्तिष्क या सहस्रार में पहुंचेगा, और तुलनात्मक रूप में वहाँ बहुत ज्यादा प्रभावी व स्थायी बना

रहेगा। शिव का चित्र यहां कुंडलिनी का प्रतीक है। कुंडलिनी के रूप में अन्य कुछ भी चित्र या संवेदना हो सकती है। वैसे तो भगवान शिव ने अपने लिंग और मूर्ति, दोनों की एकसाथ आराधना करने को कहा है, परन्तु अधिक श्रेष्ठ लिंग को माना है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न सनातन धार्मिक परंपराओं से कुंडलिनी का विकास ही हो पाता है, परंतु उसके जागरण के लिए तंत्र का सहारा लेना ही पड़ता है। ऐसा इसीलिए है, क्योंकि यदि शिव के मानवीय रूप-आकार का पता ही नहीं होगा, तो लिंग पर भी उसका ध्यान कैसे हो पाएगा। शिव के मानवीय रूपाकार का पता तो उसकी मूर्ति से ही चलता है। इसीलिए अधिकांश मंदिरों में मूर्तियों के साथ शिवलिंग भी जरूर होता है। इसी तरह एक असली तांत्रिक सनातन धार्मिक परंपराओं का विरोधी नहीं, अपितु सहयोगी होता है।

कुंडलिनी ही हिंदू पुराणों की सर्वप्रमुख विषयवस्तु है: शिव व केतकी के फूल की कहानी

दोस्तों, पिछली पोस्ट में मैंने शिवपुराण की एक कथा के बारे में बताया था, जो कि तंत्रशास्त्र के रहस्य का आधारबिंदु है। उसे केतकी के फूल की कहानी कहते हैं। इस पोस्ट में मैं उस कहानी की गहराई से व्याख्या करूँगा।

क्या है केतकी के फूल की कहानी

शिवपुराण के अनुसार एक बार भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु के बीच में झगड़ा हो गया था। भगवान ब्रह्मा कहने लगे कि उन्होंने सारे संसार का निर्माण किया है, इसलिए वे ही सबसे बड़े हैं। दूसरी ओर, भगवान विष्णु कहने लगे कि वे ही सारे संसार का पालन और रक्षण करते हैं, इसलिए वे ही सबसे बड़े हैं। जब उनके झगड़े से चारों ओर उथल-पुथल मच गयी, तब उन दोनों के बीच में एक ज्योतिर्मय स्तंभ प्रकट हुआ। आकाशवाणी से आवाज हुई कि जो सबसे पहले इसके ओर-छोर का पता लगाएगा, वही सबसे बड़ा है। भगवान विष्णु ऊपर की तरफ चल पड़े, और भगवान ब्रह्मा नीचे की ओर। परंतु दोनों ही उसके छोर का पता नहीं लगा पाए और खाली हाथ वापिस लौट आए। विष्णु ने अपनी असफलता की सच्ची कहानी ब्रह्मा को बयान कर दी, परंतु ब्रह्मा भगवान विष्णु से झूठ बोलने लगे। ब्रह्मा ने कहा कि वे उसके छोर को छूकर वापिस आए थे। ब्रह्मा ने केतकी के सफेद फूल को साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया। तभी इस झूठ से नाराज होकर भगवान शिव वहाँ प्रकट हो गए। उन्होंने कहा कि वे ही सबसे बड़े हैं तथा उनके सिवाय कोई दूसरा इसके आदि-अंत को नहीं जान सका है। केतकी के झूठ से नाराज होकर शिव ने उसको शाप दिया कि वह कभी उनकी पूजा में शामिल नहीं किया जाएगा। साथ में, ब्रह्मा को भी शाप दिया कि कहीं भी उनका मंदिर नहीं होगा, और न ही उनकी पूजा की जाएगी।

शिव-केतकी की कहानी का तांत्रिक रहस्य

ब्रह्मा और केतकी के फूल किसके प्रतीक हैं

वास्तव में उपरोक्त कथा मैटाफोरिक है, और कुंडलिनी योग की सर्वश्रेष्ठता की ओर इशारा कर रही है। ब्रह्मा उन लोगों का प्रतीक है, जो अंधाधुंध निर्माणकार्य से प्रकृति को नुकसान पहुंचा रहे हैं। अहंकार का सहारा लेने वाले बिजनेसमैन, नेता और नकली धर्मगुरु इसी प्रकार के लोग होते हैं। रजोगुणी यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठान करवाने वाले लोग भी इनमें शामिल हैं। उनके अंदर अहंकार पैदा हो जाता है, और वे अपने आप को सबसे बड़ा समझने लगते हैं। उनके पास धन की कोई कमी नहीं होती, इसलिए वे समाज के प्रतिष्ठित व साफ-सुथरी छवि वाले लोगों को और पत्रकारों को खरीद लेते हैं। केतकी का सफेद फूल ऐसे ही लोगों का परिचायक है। वे ऐसे लोगों से अपना भरपूर गुणगान करवाते हैं, और असली भगवान को अनदेखा करके खुद भगवान बन बैठते हैं। इसीलिए ऐसी साफ सुथरी व सफेद छवि वाले कपटी लोग भगवान शिव को प्रसन्न नहीं कर पाते। उन्हें प्रसन्न करने के लिए तो बच्चे की तरह भोले बनना पड़ता है। तभी तो शिव को भोलेनाथ या भोले बाबा भी कहते हैं। तांत्रिक भी भोले ही होते हैं। ब्रह्मा जैसी छवि वाले उपरोक्त लोग भी लोगों से सच्चा सम्मान नहीं प्राप्त कर पाते। उनके प्रभाव के डर से ही लोग उन्हें झूठा सम्मान देते हैं। जैसे भगवान ब्रह्मा स्तंभ का निचला छोर ढूंढते हैं, वैसे ही उनकी तरह के लोगों का झुकाव भी नीचे अर्थात तमोगुण की तरफ ज्यादा होता है। तमोगुण मदिरा, माँस आदि के अनियंत्रित उपभोग के रूप में हो सकता है। वे ब्रह्मा की तरह ही रजोगुणी होते हैं। रजोगुण का झुकाव तमोगुण की तरफ ज्यादा होता है। वे बहुत नीचे के लोकों या चक्रों तक पहुंच जाते हैं, पर सबसे नीचे के लोक अर्थात मूलाधार चक्र तक नहीं पहुंच पाते। इसका सीधा सा अर्थ है कि वे मूलाधार चक्र पर कुंडलिनी को जगा नहीं पाते। यदि मूलाधार चक्र पर भी कुंडलिनी जागृत हो जाए, तो वह सभी चक्रों या लोकों को भेदते हुए सीधी सहस्रार में चली जाती है, और वहाँ भी जागृत हो जाती है। पर ऐसा तांत्रिक लोग ही कर सकते हैं, साधारण लोग नहीं।

भगवान नारायण सेवादारों व दानवीरों के प्रतीक हैं

समाज के कुछ लोग जनता की सेवा से सीधे जुड़े होते हैं। उनमें सेवादार और दानवीर मुख्य होते हैं। सात्विक धर्म-कर्म आदि करने वाले लोग भी इनमें शामिल हैं। अनेक प्रकार की मानसिक साधनाएं करने वाले लोग भी ऐसे ही होते हैं। हालाँकि वे भोले होते हैं, पर फिर भी वे ज्योतिर्मय स्तंभ का छोर नहीं ढूंढ पाते। वे स्तंभ पर ऊपर की ओर जाते हैं,

क्योंकि वे सत्त्वगुणी होते हैं। उनके अंदर मन के दोष नहीं होते। अहंकार भी उनमें कम होता है। वे काफी ऊपर के लोकों या चक्रों तक चले जाते हैं, पर सर्वोच्च लोक या सहस्रार तक नहीं पहुंच पाते। इसका अर्थ है कि वे भी कुंडलिनी को जागृत नहीं कर पाते। फिर शिव ने कहा कि वे ही इसे जानते हैं। साथ में कहा कि इसलिए वे ही सबसे बड़े हैं। इसका सीधा सा अर्थ है कि शिवभक्त तांत्रिक ही अपनी कुंडलिनी को जागृत कर पाते हैं।

ज्योतिर्मय स्तंभ सुषुम्ना नाड़ी का और विभिन्न लोक विभिन्न चक्रों के प्रतीक हैं

वास्तव में सारा संसार हमारे अपने मनुष्य शरीर में बसा हुआ है, "यतपिण्डे तत्ब्रह्मांडे" के अनुसार। ऐसा ही "शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)" पुस्तक में भी वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया गया है। जो कथा में विभिन्न ऊपरी और निचले लोक कहे गए हैं, वे हमारे शरीर की रीढ़ की हड्डी में स्थित चक्र ही हैं। जो प्रकाशमय स्तम्भ है, वह सुषुम्ना नाड़ी है। वह भी चमकदार संवेदना के रूप में होती है। वह मूलाधार चक्र से अर्थात सबसे निचले लोक से सहस्रार चक्र अर्थात सबसे ऊपर के लोक तक गुजरती है। बीच में अनेक प्रकार के लोक अर्थात चक्र आते हैं। उसका लघु रूप लिंग या वज्र है। वही उस स्तंभ का सबसे प्रमुख भाग होता है, क्योंकि वहीँ से प्रकाशमय संवेदना स्तंभ उत्पन्न होता है।

कुण्डलिनी-लिङ्गों में मूलाधार चक्र ही सर्वश्रेष्ठ लिङ्ग है

दोस्तों, शिवपुराण में भगवान शिव के ध्यान पर ही अधिकांश जोर दिया गया है। उसमें भगवान शिव को ही कुंडलिनी माना गया है। पूरे पुराण में लिंग का बहुतायत में वर्णन है। जब लिंग के ऊपर शिव (कुंडलिनी) का ध्यान किया जाता है, तब वह शिवलिंग या कुंडलिनी-लिंग बन जाता है। शिवलिंग ही शिवपुराण की धुरी है, जिसके चारों ओर पूरा पुराण घूम रहा है।

कुण्डलिनी के साथ जुड़े हुए चिन्ह को ही कुंडलिनी लिंग या शिवलिंग कहते हैं

वास्तव में मुख्य वस्तु के साथ जुड़े हुए चिन्ह को ही उस वस्तु का लिंग कहते हैं। जैसे कि पुरुष के साथ जुड़े हुए पौरुषत्व के चिन्ह को पुलिंग और स्त्री के साथ जुड़े हुए स्त्रीत्व के चिन्ह को स्त्रीलिंग कहते हैं। लिंग के बिना मुख्य वस्तु में कुछ कमी आ सकती है, परंतु वह समाप्त नहीं हो जाती। यदि पुरुष से पुरुष के चिन्ह समाप्त हो जाएं, तो पुरुष के स्वभाव में कुछ कमी आ सकती है, परंतु पुरुष वैसा ही रहेगा। इस हिसाब से तो छिपकली की पूँछ को भी छिपकली का लिंग कह सकते हैं। जब वह उसे गिराती है, तो उससे उसे अपना संतुलन बनाने में कुछ कठिनाई आ सकती है, परंतु छिपकली वैसी ही रहती है। इसी तरह, अध्यात्म में मुख्य वस्तु कुंडलिनी ही है। किसी मूर्ति आदि के चिन्ह से जोड़ने पर कुंडलिनी को अतिरिक्त बल मिलता है। यदि उस चिन्ह या लिंग को हटा दिया जाए, तो कुंडलिनी ध्यान में कुछ कमी आ सकती है, परंतु कुंडलिनी तब भी मन में बनी रहती है।

कुंडलिनी योग चर लिंग के अंतर्गत आता है

शिवपुराण में अनेक प्रकार के लिंगों का वर्णन आता है। चर लिंग कुंडलिनी योगी के लिए विशेष महत्त्व का है। इसमें मूल संवेदना को लिंग माना गया है। शरीर के विभिन्न चक्र उस लिंग के बदलते हुए स्थान हैं। वह संवेदना निचले चक्रों पर उत्पन्न होती रहती है, और अन्य सभी चक्रों से होती हुई चक्राकार घूमती रहती है।

सबसे स्थायी लिंग के रूप में हमारा अपना शरीर

अन्य प्रकार के लिंग अचर होते हैं। उनमें पर्वत या पत्थर से बने लिंग भी शामिल हैं। पर्वत से बने लिंग स्थायी होते हैं। पत्थर से बने लिंग अस्थायी होते हैं। पत्थर से बने लिंग स्त्रियों के लिए बेहतर बताए गए हैं। अन्य प्रकार के लिंग सूक्ष्म लिंग होते हैं। मंत्र लिंग इनमें मुख्य हैं। मंत्रलिंग में मंत्र के ऊपर कुंडलिनी का ध्यान किया जाता है। ॐ भी एक उत्तम प्रकार का मंत्र लिंग है। सूक्ष्म लिंग सन्यासियों के लिए बेहतर बताए गए हैं। पर्वत को इसीलिए स्थायी लिंग कहा गया है, क्योंकि वे लाखों वर्षों तक वैसे ही बने रहते हैं। इस हिसाब से तो हमारा अपना शरीर सबसे स्थायी लिंग हुआ, क्योंकि वह हमें हर जन्म में मिलता ही रहेगा, जब तक हमें मुक्ति नहीं मिल जाती। इसका सीधा सा अर्थ है कि कुंडलिनी योग साधना सर्वश्रेष्ठ साधना है। वास्तव में लिंग का दूसरा अर्थ अनुभूति भी है, जो हमें विभिन्न प्रकार के पदार्थों और भावों की सहायता से प्राप्त होती है। उसी अनुभूति पर कुंडलिनी को आरोपित किया जाता है। क्योंकि सबसे तीखी और मीठी संवेदना की अनुभूति हमें अपने ही शरीर से प्राप्त होती है, कहीं बाहर से नहीं, इसलिए शरीर के अंदर का लिंग ही सर्वश्रेष्ठ लिंग है। यही सिद्धांत तंत्रयोग का मूल सिद्धांत है। "शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)" नामक पुस्तक में इस बात को पुरजोर सिद्ध करके दिखाया गया है।

कुंडलिनी इंजिन के ईंधन और ऊर्जा स्पार्क प्लग की चिंगारी की तरह है, जो जागृति-विस्फोट पैदा करते हैं

इन कुंडलिनी-विस्फोट घटकों के लिए ध्यान, शिवबिन्दु, मानवरूप देवमूर्ति, शिवलिंग, ज्योतिर्लिंग, साँस रोकने, मस्तिष्क दबाव, स्वयं शिक्षा, सकारात्मक सोच,अनवरत अभ्यास, निष्कामता, लगन, धैर्य, व व्यवस्थित दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण है।

मित्रो, इस पोस्ट में मैं कुंडलिनी जागरण और उसमें अनुभव होने वाले जुड़ाव के बारे में बात कर रहा हूँ। वह जुड़ाव कुंडलिनी से शुरु होना चाहिये। इसका अर्थ है कि आदमी को सर्वप्रथम कुंडलिनी के साथ अपना पूर्ण जुड़ाव महसूस होना चाहिए, पूर्ण आनन्द व अद्वैत के साथ। उस पैदा हुए अद्वैत से तो फिर सभी चीजों के साथ अपना जुड़ाव महसूस होगा। हालाँकि यह जुड़ाव सेकंडरी होगा, प्राथमिक तो कुंडलिनी के साथ ही माना जाएगा। ऐसा होने से ही कुंडलिनी चित्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन पाएगा, और स्थाई तौर पर क्रियाशील रहेगा। इसका मतलब आप यह समझो कि ऊर्जा साधना/चक्र साधना/नाड़ी साधना आप करते रहो, क्योंकि ये साधनाएं वक्त पड़ने पर कुंडलिनी के काम आएँगी। पर जगाने का प्रयास मानवरूप कुंडलिनी का ही करो। ऊर्जा को कुंडलिनी के पीछे चलना चाहिए, कुंडलिनी को ऊर्जा के पीछे नहीं। इस बारे में मैं अपना अनुभव बताता हूँ। मैं प्रतिदिन कुंडलिनी ध्यान के साथ ऊर्जा साधना करता था। एकदिन अच्छा अवसर मिलते ही मुझे एकदम से अचानक ही कुंडलिनी की बहुत तेज याद आई, और मैं उसमें खोने लगा। तभी मेरी ऊर्जा भी कुंडलिनी का साथ देने के लिए मूलाधार से पीठ से होकर ऊपर चढ़ी और मस्तिष्क में पहुंच गई। मुझे ऐसा लगा क्योंकि मेरा मूलाधार क्षेत्र पूरी तरह से शिथिल हो गया था, हालांकि वह ऊर्जा इतनी तेजी से ऊपर चढ़ी कि उसे महसूस करने का मौका ही नहीं मिला। इसलिए भी मैं ऊर्जा के पीठ से ऊपर चढ़ने का अंदाजा लगा रहा हूँ, क्योंकि मैं लगभग एक महीने से तांत्रिक विधि से कुंडलिनी को पीठ से ऊपर चढ़ाने का अच्छा अभ्यास कर रहा था। इसलिए भी क्योंकि उस समय वहाँ पर महिलाओं का नाच गाना हो रहा था। उससे भी मूलाधार की ऊर्जा उद्दीप्त हुई। यौन माध्यम से उद्दीप्त ऊर्जा पीठ से ही ऊपर चढ़ती है। वह ऊर्जा मस्तिष्क में पहुंच कर कुंडलिनी से जुड़ गई जिससे कुंडलिनी जागरण हो गया। बोलने का मतलब है कि कुंडलिनी तो खुद ही जागृत होने जा रही थी। उसे केवल ऊर्जा की अतिरिक्त आपूर्ति चाहिए थी। यह इसी तरह है जैसे कि गैस इंजन में पहुंच गई थी, बस उसे धमाका करने के लिए स्पार्क प्लग से एक चिंगारी की जरूरत थी। यदि चिंगारी न मिले तो इंजन में शक्ति का धमाका न होए। इसी तरह, यदि मैं ऊर्जा साधना न कर रहा होता तो कुंडलिनी को ऊर्जा न मिलती, और वह बिना जागृत हुए ही मस्तिष्क से नीचे लौट आती। ऐसा कुंडलिनी का ऊपर-नीचे आने-जाने का चक्र सबके अंदर चलता रहता है, बस ऊर्जा की चिंगारी नहीं दे पाते अधिकांश लोग। कइयों के साथ ऐसा होता है कि ऊर्जा की नदी तो मस्तिष्क में पहुंच जाती है, पर वहाँ कुंडलिनी नहीं होती। उससे मन में बहुत स्पष्टता के साथ चित्र कौंधते हैं, पर जागते नहीं। यह ऐसे ही है कि इंजन में गैस नहीं है, पर स्पार्क लगातार मिल रहे हैं। उससे चिंगारी की थोड़ी चमक तो पैदा होएगी, पर धमाके जितनी विशाल चमक नहीं। इसलिए मुख्य लक्ष्य कुंडलिनी को ही बनाओ, पर ऊर्जा साधना भी करते रहो। यह ऐसा है कि आपने कुंडलिनी की इतनी गहरी याद पैदा करनी है कि आप उसमें कुछ पलों के लिए खो जाओ। यही कुंडलिनी जागरण है। ऐसा समझो कि गुरु या देवता की याद इतनी गहरी पैदा करनी है, जितनी गहरी एक प्रणय प्रेम में डूबे हुए एक प्रेमी को अपनी प्रेमिका की खुद ही पैदा हो जाती है। पर गुरु या देवता की गहरी याद आपके अंदर खुद पैदा नहीं होगी, क्योंकि वहां पर यौन आकर्षण नहीं है। इसलिए आपको यौन आकर्षण जैसा मजबूत आकर्षण पैदा करने के लिए तांत्रिक तकनीकों का सहारा लेना पड़ेगा। इसके लिए उपरोक्त ऊर्जा साधनाएं आपके काम आएँगी। फिर आप कहेंगे कि फिर यौन प्रेमी को ही क्यों न कुंडलिनी बना लिया जाए। पर यह श्रेष्ठ तरीका नहीं है। पहली बात, यौन विकार के कारण यौन कुंडलिनी को जगाना असम्भव के समान है। दूसरी बात, कोई नहीं चाहेगा कि अगला जन्म स्त्री का मिले, क्योंकि स्त्री को पुरुष से ज्यादा कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। आदमी जैसा सोचता है, वह अगले जन्म में वैसा ही बन सकता है। यह अलग बात है कि आजकल के वैज्ञानिक युग में स्त्री व पुरुष समान हैं, बल्कि कई जगह तो स्त्री पुरुष से ज्यादा मजे में है। पर ऐसा युग हमेशा नहीं रहेगा। आज के जैसी वैज्ञानिक सुविधाओं का युग तो असीमित काल का मात्र एक नगण्य जैसा अंश प्रतीत होता है। ये सुविधाएं भी हर जगह उपलब्ध नहीं होतीं। ये दृश्य सत्य पर आधारित मेरे अपने अनुभवात्मक विचार हैं, इसमें लैंगिक भेदभाव वाली कोई बात नहीं है, और न होनी चाहिए। ये पर्सनल ब्लॉग है, ख्याति या पैसे के लिए नहीं। वैसे भी, दुनिया में नजर भी आता है और तंत्र सम्प्रदायों में भी यह मान्यता है कि स्त्री केवल पुरुष की सहायता ही कर सकती है कुन्डलिनी जागरण में, स्वयं जागृत नहीं हो

सकती। यदि वह यह सहायता करती है, तो अगले जन्म में वह पुरुष बन कर जागृत हो जाती है। वैसे तो तन्त्र सम्प्रदायों में भी बहुत सी महान तांत्रिक महिलाएं हुई हैं, जिन्होनें अपने पुरुष साथी को भी जागृत किया है, और वे खुद भी जागृत हुई हैं। विशेष प्रयास करने वाले अपवाद के मामले तो हर जगह ही मिल जाते हैं। देवी माता का ध्यान तो बहुत से योगी करते ही आए हैं। योगी रामकृष्ण परमहंस माँ काली के उपासक थे। उन्हें ध्यान में काली माता स्पष्ट भौतिक रूप में दिखती थीं। वे उनसे खेलते, बातें करते। पर एक साधारण स्त्री और देवी स्त्री में फर्क है। शायद इसीलिए स्त्री को गुरु बनाए जाने के बारे में शास्त्रों में बहुत कम बताया गया है। वैसे परिवर्तन व विभिन्नता संसार का नियम है। आदमी को जैसे भी उपयुक्त लगे, वैसे ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। साथ में कहा था कि संयोगवश या शक्तिपात आदि से जो बिना प्रयासों के जागृति प्राप्त होती है, वह अल्प व अस्थायी होती है। अल्प का मतलब कि उससे पूर्ण संतुष्टि नहीं मिलती। ऐसा मन करता है कि एकबार और जागृति मिल जाए। उससे बना कुण्डलिनी चित्र भी कुछ वर्षों के बाद मिटने लगता है। हालांकि ऐसी जागृति आदमी को पूर्ण जागृति को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। इससे आदमी योग अभ्यास करने लगता है।

बिंदु शक्ति मूलाधार से सहस्रार की तरफ निर्देशित की जाती है

कुंडलिनी को बिंदु की शक्ति मूलाधार से स्वयं ही मिलती है। यदि किसी को बिंदु नाम से कुंडलिनी का अपमान लगे, तो शिवबिन्दु व ज्योतिर्लिंग या शिवलिंग नाम से ध्यान किया जा सकता है। इससे कुंडलिनी का अपमान भी नहीं होगा, और आदमी को शिव का स्वरूप भी मिलेगा। एकसाथ दो लाभ। एक और बढ़िया तरीका है कि अद्वैत के चिंतन को ही शिवबिंदु का नाम दे दो। इससे जैसे ही कुंडलिनी मन में आएगी, उसे एकदम से बिंदु की शक्ति मिल जाएगी। वैसे भी इस अद्वैतपूर्ण शरीर का मालिक शिव ही है। आदमी तो झूठमूठ का अहंकार करके इसका मालिक बन जाता है। इस तथ्य को शरीरविज्ञान दर्शन पुस्तक में वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया गया है। कुंडलिनी चक्रों पर शिवबिन्दु के ध्यान से सभी 12 चक्र शिव के बारह ज्योतिर्लिंग बन जाते हैं। ज्योतिर्लिंग शब्द में ज्योति का अर्थ कुंडलिनी की चमक से है। यही 12 ज्योतिर्लिंगों का आध्यात्मिक रहस्य है। इसीलिए मूलाधार को संकुचित करते रहने व वहाँ सिद्धासन में पैर की ऐड़ी का दबाव देने को कहते हैं। दरअसल बिंदु शक्ति को ले जाने वाली वज्र नाड़ी स्वाधिष्ठान चक्र व मूलाधार चक्र से होकर पीठ के बीचोंबीच ऊपर चढ़ती है। वह जननांग से शुरु होती है। इसका वर्णन मैंने एक पुरानी पोस्ट में किया है कि कैसे उस कुन्डलिनी नाड़ी को कुंडली लगाए नागिन की तरह दिखाया गया है, और कैसे वह कुन्डली खोलकर खड़ी हो जाती है। दरअसल कुन्डलिनी नागिन के आकार में नहीं है, जैसा कई लोग समझते हैं। यह कुन्डलिनी शक्ति को ले जाने वाली नाड़ी है। कुन्डलिनी नाम इसलिये पड़ा है, क्योंकि वह कुंडली लगाई हुई नागिन के जैसी नाड़ी में कैद रहती है। यह संस्कृत शब्द है। मूलाधार पर दबाव से वह नाड़ी क्रियाशील हो जाती है। इससे जाहिर है कि मूलाधार में जो शक्ति का निवास बताया गया है, वह बिंदु रूप में ही है। उसी बिंदु शक्ति को सहस्रार तक ले जाना होता है जागरण के लिए। वह धीरे धीरे करके रास्ते के सभी चक्रों को जागृत करते हुए भी वहाँ पहुंच सकती है, और सीधी भी। यह अभ्यास के प्रकार पर निर्भर करता है। साधारण अभ्यास से वह धीरे धीरे ऊपर पहुंचती है, पर तांत्रिक अभ्यास से एकदम सीधी सहस्रार में। उस बिंदु शक्ति को केवल आदमी ही ऊपर चढ़ा सकता है, अन्य जीव नहीं। क्योंकि केवल आदमी ही योगाभ्यास कर सकता है। साथ में, विशाल बिंदु शक्ति को झेलने लायक मस्तिष्क केवल आदमी के पास ही है, अन्य जीवों के पास नहीं।

साँस रोकने के बहुत से लाभ हैं

योगा वाली साँसों पर भी पिछली पोस्ट में व्यावहारिक चर्चा कर रहा था। दरअसल जो ड्रैगन को साँसों की आग उगलते हुए दिखाया गया है, वह कुंडलिनी की आग का ही प्रतीक है। उस साँस से जो कुंडलिनी नाड़ी लूप में घूमते हुए चमकती है, उसीको रहस्यात्मक आग के रूप में दर्शाया गया है। आदमी का वास्तविक आकार भी एक ड्रैगन के रूप जैसा ही है। यदि हम रीढ़ की हड्डी और मस्तिष्क को लें, तो एक नाग या ड्रैगन जैसा आकार बनता है। आदमी का असली रूप रीढ़ की हड्डी और मस्तिष्क में ही समाया हुआ है। बाहर के अन्य अंग तो मात्र बाहरी छिलकों की तरह है। इसका वर्णन मैंने एक पुरानी पोस्ट में किया था। यह मैंने कहीं पढ़ा नहीं और न ही इसका प्रमाण है मेरे पास, जो नीचे लिखा है। ऐसा लगता है कि साँस रोकने से रक्त वाहिनियों की दीवारों का लचीलापन बढ़ता है। क्योंकि उनकी मांसपेशियों को मजबूती मिलती है। खुद भी महसूस होता है, जब साँस रोकने से दिमाग की नसों में भारीपन व

कड़ापन सा महसूस होता है। पर ऐसा सावधानी से करना चाहिए। बहुत ज्यादा या बहुत देर तक नहीँ। इसीलिए जिन आसनों में पेट अंदर को दबता है, उन्हें साँस बाहर निकालकर रोककर करने को कहते हैं। जैसे कि शीर्षासन, सर्वांगासन, हलासन, नौकासन आदि। जिनमें पेट बाहर को फूलता है, उनमें साँस अंदर भरकर रोकने को कहते हैं। जैसे कि शलभासन, मकरासन, भुजंगासन आदि। वैसे नियंत्रित अवस्था में तो किसी भी आसन में सांस को भरकर या बाहर निकालकर अपनी रुचि के अनुसार रोककर रख सकते हैं। शीर्षासन, सर्वांगासन व हलासन में विशेष ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि उनमें मस्तिष्क में बहुत दबाव पैदा होता है। अगर साँस रोकने से विशेषकर योग के दौरान खून की नसों का लचीलापन बढ़ता है, तो इससे जाहिर है कि इससे स्ट्रोक, व दिल के रोगों से कुछ राहत मिल सकती है। जब तक रिसर्च से प्रूव नहीं होता, तब तक ऐसा विश्वास करके श्वास रोककर योग करते रहने में कोई बुराई नहीं है। वैसे भी यह तो वैज्ञानिक प्रयोगों से स्पष्ट हो चुका है कि साँस रोकने से दिमाग में ऑक्सीजन का स्तर बदलता रहता है। इसका सीधा सा मतलब है कि खून की नसें सिकुड़ती और फैलती रहती हैं। जाहिर है कि उनके सिकुड़ने से ऑक्सीजन का स्तर घटेगा, और फैलने से बढ़ेगा। कुंडलिनी जागरण के समय मस्तिष्क में काफी दबाव महसूस होता है। उस दबाव को सहने के लिए भी इससे दिमाग की नसें तैयार रहती हैं।

सिर का दबाव ऐसा लगता है कि माथे के किनारों वाली दिमाग की नसें फूली हुई हैं। ऐसे आसन जिसमें सिर शरीर से नीचे हो, उनमें ऐसा ज्यादा लगता है। अभी हाल ही में मेरे एक रिश्तेदार लड़के की ब्रेन हेमरेज से मृत्यु हुई। वह सिर्फ 30 साल का था। अंतर्मुखी, लाडला, परिवार पर ज्यादा ही निर्भर और परिवार के इलावा दूसरों से कम घुलने-मिलने वाला था। कुछ दिनों से उसके सिर में हल्का सा दर्द रह रहा था, और खून की उल्टी के साथ बेहोशी से आधा घण्टे पहले वह सिर की नसों को छूकर बता रहा था कि उसे लग रहा था कि उसकी दिमाग की नसें फूल रही थीं। उसकी माँ को तो हाथ से छूने पर वैसा कुछ नहीं लगा। इसलिए उसे सोकर आराम करने को कहा। आईसीयू में डॉक्टरों ने उसके बचने के सिर्फ 5% चांस बताए। उसका मस्तिष्क बहते और जमे खून के दबाव से पत्थर की तरह सख्त हो गया था। वह सिर्फ डेढ़ दिन ही आईसीयू में जिंदा रह सका। उसे 5 दिन पहले कोरोना वैक्सीन, एस्ट्रोजेनिका आधारित कोविशील्ड भी लगा था। डॉक्टरों ने कहा कि उसे ज्यादा ही इम्मयूनिटी पैदा हो गई थी। इससे डरने की जरूरत नहीं। इससे डरकर वैक्सीन लगाना बन्द नहीं करना चाहिए, जब तक कोई बेहतर वैक्सीन नहीं आ जाती। इससे बहुत सी जानें बची हैं। इसकी तुलना में तो साईड इफेक्ट नगण्य ही हैं। हाँ, सावधान रहकर हर स्थिति के लिए तैयार रहना चाहिए। अगर साइड इफेक्ट लगे, तो डॉक्टर से सम्पर्क में रहना चाहिए। ऐसे जीवनघातक दुष्प्रभाव की संभावना लाखों में केवल 1-2 को ही होती है। अब तो यह भी सामने आया है कि यदि गलती से इंजेक्शन माँस की बजाय खून की नस में लगे, तो भी खून में क्लॉट बन सकते हैं। मैं यह इसलिए बता रहा हूँ कि अगर योग, व्यायाम आदि से उसके दिमाग की नसों में ज्यादा फुलाव को झेलने की शक्ति होती, तो शायद रक्तस्राव न होता या कम रक्तस्राव होता, या एमरजेंसी ट्रीटमेंट से जान बच जाती।

बिंदु का अर्थ एक सुई की नोक जितना स्थान भी होता है

इसे अंग्रेजी में पॉइंट कहते हैं। यह पैन को एक स्थान पर रखकर उसकी स्याही का निशान लगाने से बनता है। पिछली पोस्ट में मैंने बताया था कि बिंदु का अर्थ बूँद होता है। पर इसका दूसरा अर्थ पॉइंट भी होता है। कुंडलिनी भी वास्तव में असीमित क्षेत्र के मन का एक सूक्ष्म स्थान होता है। यदि कागज के एक पृष्ठ या पूरी पुस्तक पर लिखे लेख को मन मान लिया जाए, तो कुंडलिनी सिर्फ एक पॉइंट जितने स्थान में आ जाएगी। एक पॉइंट से पूरे लेख के बारे में जानकारी मिल जाती है कि कौन सा पैन इस्तेमाल हुआ है, और कौन सी स्याही। यहाँ तक भी पता चल सकता है कि लेखक का हस्तलेख कैसा है। इसी तरह एक कुंडलिनी से पूरे मन के स्वभाव का अनुमान लग जाता है। जैसे एक बिंदु के पूर्ण ज्ञान से पूरा लेख नियंत्रित किया जा सकता है, इसी तरह एक कुंडलिनी के संपूर्ण ज्ञान से पूरा मन नियंत्रित हो जाता है। मैं यह उपमा दोनों के बीच में बाहरी सादृश्यता को देखकर दे रहा हूँ, भीतरी को नहीं।

योग सीखने की चीज नहीं, अभ्यास की चीज है

मुझे कई लोग बोलते हैं कि मुझे योग सिखा दो। जिसे 20 सालों को करते हुए मैं थोड़ा सा सीखा हूँ, उसे किसीको एकदम से कैसे सिखा सकता हूँ। योग वास्तव में कोई एक विशेष क्षेत्र की विद्या नहीं है, जिसे एकदम से सिखाया जा सके। यह एक विचारधारा है, एक जीवन दर्शन है, एक लाइफस्टाइल है। यह मन की एक अद्वैतमयी सोच है। इसे आप

सकारात्मक सोच भी कह सकते हैं। उस सोच को बना कर रखने और बढ़ाने के लिए आप जो मर्जी तरीका चुन सकते हैं। बहुत से तरीकों का भी एकसाथ इस्तेमाल कर सकते हैं। इसलिए पहले सोच पैदा करना जरूरी है। जिसके अंदर सोच ही नहीं है, वह उसे बना के क्या रखेगा, और उसे बढ़ाएगा क्या। सोच तो आदमी के अपने वश में है। इसीलिए प्रकृति ने आदमी को फ्री विल उन्मुक्त चिंतन शक्ति दी है। योग कोई सोच जबरदस्ती नहीं पैदा कर सकता। योग का सहारा उस सोच को बढ़ाने के लिए लिया जा सकता है। जिसके अंदर यह सोच है, उसे कुछ सिखाने की जरूरत ही नहीं। सोच अपना रास्ता खुद ढूंढती है। उन्हें सोच बनाने के लिए मैं शरीरविज्ञान दर्शन पुस्तक पढ़ने को कहता हूँ। उसके बाद उनकी तरफ से कोई संदेश ही नहीं आता। यदि संदेश आता, तो मैं उन्हें कहता कि अब इस सोच को पक्का करने के लिए कुछ सालों तक इस सोच के साथ कर्मयोग के रास्ते पर चलो। सोच को आप कुंडलिनी भी मान सकते हो, क्योंकि दोनों ही मन के विचार हैं। फिर जब कुछ वर्षों के बाद उनका संदेश आता तो मैं उन्हें कुंडलिनी योग के बारे में बताता, व उसके बारे में व्यावहारिक पुस्तकें सुझाता, बेशक वे मेरी लिखी हुई ही हों। यही असली तरीका है योग सीखने का। मैं भी ऐसे ही सीखा हूँ। यदि कोई व्यायाम की तरह का शारीरिक योग ही सीखना चाहे, तो उसके लिए आज बहुत से साधन हर जगह उपलब्ध हैं, ऑनलाइन भी और ऑफलाइन भी। असली योग सीखने में समय लगता है, पूरी उम्र भी लग सकती है।

आर्यसभ्यता की देवमूर्ति परम्परा से कुन्डलिनी साधना

आर्यन सभ्यता की रीति रिवाजों को देखकर उस समय की महान आध्यात्मिक वैज्ञानिकता वाली सोच का पता चलता है। शिव, गणेश आदि देवता बिल्कुल स्थाई व अजर अमर बना दिए गए थे। मूर्ति कला अपने चरम पर थी। इतनी जीवंत व आकर्षक मूर्तियां बनती थीं, जिनके आगे असली आदमी लज्जित हो जाते थे। असली आदमी, गुरु या प्रेमी से अधिक आसान तो देव मूर्तियों पर ध्यान लगाना होता था। उदाहरण के लिए यदि किसी के मन में शिव मूर्ति का रूप जागृत हो जाए, तो वह कभी नहीं भूल सकता था। वह इसलिए क्योंकि वह मूर्ति विशेष सहेज कर मन्दिर में हमेशा के लिए रखी जाती थी। वैसे भी देश के हरेक स्थान पर शिव मंदिर होने से शिव रूपी कुंडलिनी का कभी विस्मरण नहीं होता था। असली आदमी का तो सीमित जीवन होता है, पर ये देवमूर्तियाँ तो धर्म परंपरा से जुड़कर शाश्वत हो गई हैं। असली आदमी का तो वियोग भी हो सकता है। फिर ध्यान कैसे लगाए। देवमूर्तियां तो हर जगह और हर समय विद्यमान हैं। इसीलिए इनको बहुत सुंदर बनाया जाता था। स्वर्णमूर्ति सर्वश्रेष्ठ मानी जाती थी। क्योंकि वह सबसे आकर्षक, चमकदार और दीर्घजीवी होती थी। मैंने कई इतनी सुंदर मूर्तियां इतने जीवंत और सुंदर रूप में देखी हैं, कि आजतक मेरे मन में जीवंत हो जाती हैं। सोचो, जब एक बार देखने पर ही वे मन पर इतनी गहरी छाप छोड़ सकती हैं, तो बार बार उनका ध्यान करने से वे क्यों मन में जागृत नहीं होएंगी। यदि न भी जागृत होए, तो भी वे आदमी को अनासक्ति व अद्वैत के साथ जीना सिखाती हैं। वे हर हाल में फायदा ही करती हैं। वैसे भी देव मूर्ति तभी अस्तित्व में आई जब किसीने सबसे पहले उसको मन में जागृत किया और उसे दुनिया के सामने रखा।

कुंडलिनी वाला भला केवल मानसिक कुन्डलिनी ही कर सकती है, कोई स्थूल भौतिक रूप नहीं

आदमी का भला करना तो कुंडलिनी का स्वभाव है, चाहे वह पत्थर के रूप वाली ही क्यों न हो। इसीलिए यह कहावत बनी है कि मानो तो पत्थर में भी भगवान मिल जाते हैं। पर इसका श्रेय कुंडलिनी को न दिया जाकर देवता को दिया जाने लगा। इससे लोगों के मन में देवताओं के प्रति विश्वास बढ़ता गया, जो आज तक है। हालांकि वैज्ञानिक तौर पर मानव भलाई के सारे काम कुंडलिनी कर रही थी। देवताओं को श्रेय दिया जाना उचित भी है, क्योंकि वे वैसे भी भौतिक रूप से भी लोगों का भला करते रहते हैं। जैसे सूर्यदेव रौशनी देते हैं, और जलदेव पानी। हालांकि कुंडलिनी वाला भला तो कुंडलिनी ही कर रही है, देवता नहीं। दोनों प्रकार की भलाई को अपने अपने असली रूप में देखना चाहिए, इकट्ठे जोड़कर नहीं, तभी कुंडलिनी के बारे में भ्रम दूर होगा। इसी तरह, एक आदमी का भला प्रेमी के रूप से बनी उसके मन की कुंडलिनी करती है, उसका प्रेमी नहीं। अगर प्रेमी ही भला कर रहा होता, तो शादी के बाद परस्पर आकर्षण खत्म या कम न होकर बढ़ता। पर होता उल्टा है। दरअसल शादी के बाद जब प्रेमी का भौतिक रूप हर वक्त उपलब्ध हो जाता है, तब मन में उसके रूप की बनी हुई कुंडलिनी मिटने लगती है। इससे कुंडलिनी वाले लाभ खत्म हो जाते हैं। पर आदमी दोष देता है प्रेमी को। प्रेमी तो जैसा पहले था, वैसा ही होता है। इसीलिए भगवान कृष्ण कहते हैं कि राधा उनकी सबसे प्रिय है। राधा से विवाह नहीं, सिर्फ उनका प्रेम ही होता है। बात स्पष्ट है कि कृष्ण के मन में

राधा के रूप से बनी शाश्वत कुंडलिनी के कारण ही कृष्ण को राधा सबसे प्रिय है। यदि दोनों का विवाह हो जाता, तो शायद वैसा न होता। क्योंकि भौतिक रूप से तो उनकी पत्नी रुक्मिणी सबसे सुंदर हैं। दरअसल असली और सच्चा प्यार सिर्फ और सिर्फ कुंडलिनी से ही होता है, किसी भौतिक वस्तु से नहीं। "किसीकी याद के सहारे जीना" भी इसी कुंडलिनी के द्वारा किए जाने वाले भले का उदाहरण है। भला सुखी जीवन से बड़ा भला और क्या हो सकता है। शिव का दूसरा रूप पर्वत भी है, जो मैंने एक कविता पोस्ट में सिद्ध किया है। पर्वत आदमी का बहुत भला करते हैं। ये पानी, हवा, ठंडक, फल आदि देते हैं। इसलिए लोगों का देवताओं पर आसानी से ध्यान जम जाता है। इसीलिए ज्यादातर मामलों में देवताओं को ध्यान कुंडलिनी बनाया जाता था। इससे संसार में मानवता भी पनपी रहती थी। वैसे भी कुंडलिनी ही भगवान तक ले जाती है। भगवान तक पहुंचने के लिए सीधी उड़ान सेवा नहीं दिखाई देती। लगता यह अजीब है, पर यह सत्य है। यह मूर्ति विज्ञान है, जिसे जो नहीं समझेगा, वह तो दुष्प्रचार करेगा ही।

कुंडलिनी योग और शून्य आकाश~ आम मिथक का पर्दाफाश

कुंडलिनी तंत्र में चित्तवृत्तिनिरोध मूल धयेय न होने से यह पतंजलि योग से थोड़ा भिन्न प्रतीत होता है।

मित्रो, पतंजलि ने कहा है, योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। इसका शाब्दिक अर्थ है,"योग चित्त या मन की लहरों या विचारों को रोकना है"। इसका मतलब है कि पतंजलि ने मन को शून्य करके,अर्थात विपासना से ही जागरण को प्राप्त किया होगा। उन्होंने अकस्मात कुंडलिनी जागरण प्राप्त नहीं किया होगा। हुआ क्या कि निरंतर के कुंडलिनी ध्यान से विपासना का काम होता रहा। पुराने विचार उभरने लगे और कुंडलिनी के आगे डिम पड़ने लगे। वे मिटते रहे और शून्य बढ़ता गया। पूर्ण शून्य होने पर अकस्मात मूलाधार से ऊर्जा के ऊपर चढ़ने से समाधि महसूस हुई। यही कुंडलिनी जागरण है। इसमें तांत्रिक यौनबल और अन्य तांत्रिक तरीकों की सहायता नहीं ली गई थी। मैंने यह एक पिछली पोस्ट में भी वर्णित किया है कि जब किसी भावनात्मक आघात से मन अचानक निर्विचार होकर शून्य सा हो जाता है, तब अचानक मूलाधार से ऊर्जा की नदी पीठ से होकर सहस्रार तक चढ़ती है। मेरे साथ भी पहली बार ऐसा ही हुआ था, जिसका वर्णन मैं पहले कर चुका हूँ। इसमें कुछ भी रहस्यात्मक या चमत्कारिक नहीं है। यह शुद्ध वैज्ञानिक घटना होती है। इसीलिए यह घटना धर्म-मर्यादा की सीमाओं से भी नहीं बंधी हुई होती। ऐसा किसी के साथ भी हो सकता है। जैसे बादल और धरती के बीच विभवांतर या ऊर्जा के अंतर के बढ़ने से बादलों से बिजली निकलकर जमीन पर गिरती है, वैसे ही मस्तिष्क या सहस्रार और मूलाधार के बीच होता है। जब तंत्रयोग से मूलाधार में ऊर्जा इकट्ठी हुई हो, और तभी किसी मानसिक सदमे या झटके से मस्तिष्क की ऊर्जा अचानक कम हो जाए, तो मूलाधार से बिजली सहस्रार को गिरती है। वह बिजली रीढ़ की हड्डी के केंद्र से होकर गुजरती है। इसे ही सुषुम्ना का जागरण या कुंडलिनी जागरण कहते हैं। वह मानसिक सदमा बेवफाई, धोखे, परेशानी, हताशा आदि किसी भी प्रकार से लग सकता है। वह ऊर्जा मन के विचार को जागृत कर देती है, अर्थात समाधि पैदा करती है। तो इसका मतलब यह हुआ कि कुंडलिनी योग प्रतिदिन करना चाहिए। क्या पता कब मानसिक सदमे वाली स्थिति पैदा हो जाए। इससे जागृति की संभावना तभी ज्यादा होगी, जब सारे चक्र विशेषकर मूलाधार चक्र ऊर्जावान होगा। साथ में, इससे सभी नाड़ियाँ भी खुली हुई रहेंगी, जिससे ऊर्जा का गमन आसान होगा। विशेष बात यह है कि कुंडलिनी को बनाया ही इसलिए होता है ताकि शून्य आसानी से प्राप्त हो जाए। होता क्या है कि अन्य सभी विचारों की बजाय कुंडलिनी ज्यादा प्रभावी होती है। इसका मतलब है कि कुंडलिनी सभी विचारों के साथ जुड़ी होती है। जैसे ही किसी मानसिक झटके से कुंडलिनी नष्ट होती है, वैसे ही उससे जुड़े हुए सभी विचार भी साथ में एकदम से नष्ट हो जाते हैं। यदि कुंडलिनी न हो, तो सभी अलग-2 सैंकड़ों विचारों को नष्ट करना लगभग असंभव के समान हो जाए। तभी तो कहते हैं कि जागृति उन्हीं को मिलती है, जिनकी कुंडलिनी सक्रिय होती है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। मैं कई वर्षों से कुंडलिनी योग कर रहा था। फिर पुराने सहपाठियों से ऑनलाइन मुलाकात हुई। मैं बहुत खुश हुआ। फिर किन्हीं वजहों से मुझे अपने प्रति बेवफाई महसूस हुई जिससे मुझे अजीब सा मानसिक व भावनात्मक आघात लगा। वह आनन्द व शून्यता से भरा हुआ था। इतने वर्षों से क्रियाशील कुंडलिनी मुझे नष्ट होती हुई सी महसूस हुई। मैं शून्य, खाली और हल्का सा हो गया। मूलाधार और सहस्रार के बीच विभवांतर बहुत बढ़ गया क्योंकि मेरा मूलाधार कुंडलिनी योग से काफी सक्रिय बना हुआ था। एक ऊर्जा की चमकदार लकीर मुझे अपनी रीढ़ की हड्डी से चढ़ी हुई व सहस्रार से जुड़ी हुई महसूस हुई। वहाँ हल्की सी जागृति का आभास भी हुआ, पूर्ण नहीं। हालाँकि मैं उस समय आधी नींद में था, और उसी अर्धनिद्रा की अवस्था में मुझे रात को अपनी आंखों से भावनात्मक अश्रु भी महसूस होते रहे। क्षणिक आत्मज्ञान भी ऐसी ही शून्यता

से प्राप्त हुआ था। पर मुझे दुनियादारी में रहने वाले के लिए यह शून्यत्व वाला तरीका ठीक नहीं लगता। इससे आदमी पलायनवादी सा बन जाता है। यह वैज्ञानिक तरीका भी नहीं लगता मुझे। शून्यत्व तो बहुत से लोग महसूस करते रहते हैं, पर समाधि बहुत विरले लोग ही महसूस कर पाते हैं। लोग नशे से भी शून्यत्व जैसी स्थिति प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। मेरा जागृति का उपरोक्त पहला तरीका शून्यत्व जैसा लगता है लोगों को, पर वह भी पूरी तरह से शून्यत्व वाला नहीं था। वह भी हरफनमौला तांत्रिक वाला तरीका था। हालांकि वह दूसरी जागृति वाले तरीके से थोड़ा कम तांत्रिक था। जब भी मेरा झुकाव जागृति की तरफ होता था, या मुझे जागृति की याद आती थी, तो यहाँ तक कि अच्छे-खासे तथाकथित विद्वान लोग भी मुझे शून्यपरस्त सा समझकर मेरा मानसिक बहिष्कार जैसा कर देते थे, आम आदमी की बात तो छोड़ो। पता नहीं जागृति को लोग शून्यप्राप्त ही क्यों समझते हैं। ऐसा तंत्र विज्ञान की अनदेखी के कारण हुआ है। अब तो तंत्र विज्ञान लुप्तप्राय जैसा ही लगता है मुझे। तँत्रविज्ञान के मूल सिद्धांत के अनुसार तो जागृति और दुनियादारी, दोनों ही यथोचित गुणवत्ता से व यथोचित गति से एकसाथ दौड़ते हैं। यह कर्मयोग से काफी मिलता जुलता है।

पता नहीं मुझे अंतर्मन में क्यों लगता है कि शून्यत्व वाला कुंडलिनी तरीका कायरों के जैसा तरीका है। पता नहीं यह मुझे भिखारियों और लाचारों के जैसा तरीका क्यों लगता है। इसके लिए दूसरों के सहारे रहना पड़ता है। जब कोई भावनात्मक आघात देगा, तब जागृति होगी। जो भावनात्मक आघात दे, उसे उसके लिए धन्यवाद भी नहीं कर सकते। अजीब सा कंसेप्ट है। हो सकता है कि मुझे ही ऐसा लगता हो, क्योंकि सबकी शरीर संरचना भिन्न होती है। ये मेरे अपने विचार हैं, और अपने पर अनुभव करके उठे हैं। मैं कोई सिद्धांत प्रस्तुत नहीं कर रहा हूँ। जब आदमी हर तरफ से पिटेगा, तभी शून्यत्व महसूस होगा, और जागृति होगी। किसीके द्वारा पिटने का मतलब किसीके द्वारा दिया जाने वाला भावनात्मक आघात ही है। दोनों में कोई अंतर नहीं है। बल्कि भावनात्मक आघात तो भौतिक पिटाई से भी बुरा है, क्योंकि उससे मन-आत्मा की गहराई तक पिटाई होती है। इसी पिटाई-सिद्धांत की वजह से तो यह कहावत प्रचलित हुई है, "जिसका कोई नहीं है, उसका भगवान है"। इस तरीके में आदमी अपने शरीर को भी अक्सर नुकसान पहुंचाता है। वह संतुलित आहार नहीं लेता, संतुलित जीवन नहीं जीता। वह शरीर का बहुत दमन करता है। यह इसीलिए ताकि भावनात्मक आघात का असर ज्यादा से ज्यादा हो, और वह ज्यादा से ज्यादा शून्य बने। क्योंकि यदि आदमी शक्तिमय जीवन से शक्ति हासिल करेगा, तो शून्यत्व से बचने के लिए इधर-उधर हाथ-पैर मारेगा। यह तरीका तो कोयले की खान से हीरा निकालने की तरह है। यही तरीका मुझे ज्यादातर प्रचलित दिखता है। मुझे लगता है कि यह तरीका विशेष परिस्थितियों में ही काम करता है, पर लोगों ने इसे सामान्य बना दिया है। वास्तव में यह ध्येय या साध्य है, पर लोगों ने इसे साधन बना दिया है। यह शून्य, साधना की चरमावस्था में खुद पैदा होता है, पर लोग इसे साधना किए बिना ही जानबूझकर पैदा करके करते हैं। वास्तव में यह एक आभासिक शून्य की तरह होता है, असली शून्य नहीं, पर लोग अपने लिए एक असली शून्य जैसा पैदा कर लेते हैं, घौंसले की तरह, रहने के लिए। यह प्रकाशमान, आनन्दमयी, चेतन और कुंडलिनी से भरे शून्य की तरह होता है, पर कई लोग इसे अंधकारमयी, दुखमयी, जड़ और कुंडलिनी से रहित शून्य समझकर इसका मजाक उड़ाते हैं। यह शून्य बहुत थोड़े समय के लिए टिकता है और जागृति पैदा करके नष्ट हो जाता है, पर लोग इसे लगातार बना कर रखते हुए अपने मस्तिष्क को और अपनी इंद्रियों को जैसे लॉक रूम में जैसे बन्द कर देते हैं। अगर यह तरीका इतना कारगर होता, तो आज हर जगह जागृत लोग ही दिखते। पर आप को तो लैम्प लेके ढूंढने से भी बिरले ही मिलेंगे। दूसरे, वीरों और राजाओं वाले तांत्रिक कुंडलिनी तरीके वाले लोग भी विरले ही दिखते हैं मुझे। क्योंकि वे इसे ठीक ढंग से व खुल के नहीं करते। उनके मन में इस बारे संदेह रहता है। संदेहात्मा विनश्यति। इस तरीके में अपने आम रोजमर्रा के व्यावहारिक जीवन को नीचे नहीं गिराया जाता, बल्कि तांत्रिक शक्ति से कुंडलिनी को ही इतना ऊपर उठाया जाता है कि उसके सामने भरा-पूरा भौतिक जीवन शून्य जैसा हो जाता है। यह ऐसे ही होता है जैसे सूर्य के सामने दीपक की ज्यादा अहमियत नहीं होती। शून्य बनने की नौबत ही नहीं आती। कुंडलिनी-सूर्य को संसार-दीपक से ज्यादा चमकाने के लिए दो ही तरीके हैं। या तो संसार-दीपक को बुझा दो, या फिर कुंडलिनी-सूर्य को इतना अधिक चमका दो कि संसार-दीपक फीका पड़ जाए। इससे भौतिक व सामाजिक जीवन भी साथ में तरक्की करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि शक्ति हरेक काम करती है, भौतिक भी और आध्यात्मिक भी। मैं अपनी बात बताऊँ, तो अपने प्राणोत्थान व कुंडलिनी जागरण के दौरान मैं सांसारिक रूप से काफी क्रियाशील था। मैं कुंडलिनी जागरण के लिए जंगल की किसी गुफा की तरफ नहीं भागा। मैं एक मशहूर योगी की बहुचर्चित कुंडलिनी सम्बन्धी किताब पढ़ रहा था। उसमें वे कहते हैं कि वे महानगर को छोड़कर हिमालय के

सुनसान व भयानक जंगल में कई महीनों तक साधना करते रहे। अंत में उन्हें जाल बुनती हुई मकड़ी का स्पष्ट चित्र मन में दिखा। आंखें खोली तो बाहर भी हूबहू वही दृश्य था। फिर लिखते कि फिर वे साधना पूर्ण करके अपने घर आ गए। माना कि यह एकाग्रता की उच्च अवस्था है, पर साधना की पूर्णता में कुंडलिनी का और कुंडलिनी जागरण का कहीं जिक्र नहीं था, जिसके लिए वह पुस्तक मूलरूप में बनी थी। पता नहीं वह साधना की पूर्णता क्या थी? मन की आंखों से मकड़ी को जाला बुनते हुए देखने के लिए इतना ज्यादा संघर्ष? मैं यहाँ किसी की आलोचना नहीं कर रहा हूँ, बल्कि तथ्य सामने रख रहा हूँ। आध्यात्मिक विकास इसलिए भी रुकता है जब आदमी तथ्यों की छानबीन इस डर से नहीं करता कि कहीं यह किसी की आलोचना न बन जाए। इसी तरह एक अन्य महोदय अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में लिखते हैं कि वे खंडहरनुमा अंधेरे कमरे में सुनसान अकेले में कुंडलिनी साधना करते थे। कई महीनों बाद उन्हें पीठ के आधार पर अंडे जैसे के फूटने और उससे प्रकाशमय तरल पीठ के बीचोंबीच ऊपर चढ़ता हुआ महसूस हुआ। इसी अनुभव के साथ वह कुंडलिनी पुस्तक समाप्त हो जाती है। हालाँकि ये हैरानी भरे अनुभव हैं, पर कुंडलिनी और कुंडलिनी जागरण का कुछ पता नहीं। मैं अपने कुंडलिनी जागरण की झलक के दौरान पूरी तरह से विकसित और सभ्य समाज के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रहा था। मैं अपने सांसारिक कर्मों औऱ दायित्वों का निर्वहन पहले की तरह कर रहा था। अत्याधुनिक सुविधाओं का उपभोग कर रहा था। अत्याधुनिक गाड़ी में अत्याधुनिक मार्गों और स्थानों का सपरिवार भ्रमण-आनन्द ले रहा था। अत्याधुनिक बड़े पर्दे पर उच्च गुणवत्ता की फिल्में सपरिवार देखने अक्सर लॉन्ग ड्राइव पे चला जाता। प्राकृतिक और कृत्रिम, दोनों किस्म के नजारों का भरपूर लुत्फ उठाते हम लोग। और तो और, अंतरराष्ट्रीय कुंडलिनी फोरम पर पूरी तरह से सक्रिय था। अब इससे बढ़कर क्या दुनियादारी हो सकती है। मुझे रंगीन दुनिया से कभी अलगाव महसूस नहीं हुआ। साथ में ज्यादा लगाव भी महसूस नहीं हुआ। चमकदार दुनिया के साथ तांत्रिक शक्ति से कुंडलिनी को भी सबसे अधिक चमका भी रखा था। इससे सारा संसार पूरी तरह से चमकता हुआ भी अद्वैतकारी कुंडलिनी के आगे फीका ही रहता था। अद्वैत से सबकुछ एकजैसा लगता था। शायद ड्राइविंग का और भ्रमण का भी अद्वैत को पैदा करने में कुछ योगदान है। कुंडलिनी हर समय मस्तिष्क में रहती थी। ऐसा लगता था कि सबकुछ कुंडलिनी के अंदर है। इसका मतलब यह नहीं कि ऐसे भोगविलास से ही कुंडलिनी जागरण होता है। मैं तो बस उदाहरण दे रहा हूँ। आप शून्यत्व वाले पहले कुंडलिनी तरीके को नेगेटिव प्रेशर तरीका कह सकते हैं। इसका मतलब है कि इसमें शून्यत्व का वैक्यूम कुंडलिनी ऊर्जा को ऊपर की तरफ चूसता है। यह ऐसे ही है जैसे हम स्ट्रॉ से जूस चूसते हैं, या वैक्यूम कलीनर डस्ट को चूसता है। इसी तरह दूसरे वाले तांत्रिक कुंडलिनी तरीके को पॉजिटिव प्रैशर तरीका कह सकते हैं। इसका मतलब है कि इसमें तांत्रिक शक्तियों से कुंडलिनी को नीचे से ऊपर की तरफ बलपूर्वक पम्प किया जाता है। यह ऐसे ही है जैसे नदी के पानी को पहाड़ी की चोटी तक विद्युतचालित मोटर पम्प से चढ़ाया जाता है। कई लोग दोनों तरीकों का संतुलित इस्तेमाल करते हैं। वे मस्तिष्क में भी थोड़ा सा शून्य बनाते हैं, और तांत्रिक शक्ति से चालित कुंडलिनी पम्प से मूलाधार से भी कुंडलिनी ऊर्जा को ऊपर चढ़ाने के लिए अतिरिक्त बल प्रदान करते हैं। सम्भवतः मेरा कुंडलिनी जागरण की झलक प्रस्तुत करने वाला तरीका भी यही था। अद्वैत भाव से मेरे अंदर हल्का सा आभासिक शून्य बना होगा। इसीलिए इतनी आसानी से हो गया। बेशक यह कुंडलिनी जागरण की दस सेकंड की झलक थी, पर था तो कुंडलिनी जागरण ही। एक लीटर पानी और पांच लीटर पानी के बीच में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है। वह झलक इसलिए खत्म नहीं हुई कि मैं उसके योग्य नहीं था या मैं उसके लिए तरसता था। उस झलक को मैंने खुद जानबूझकर खत्म किया। ऐसा इसलिए क्योंकि मैं पारलौकिक आयाम में प्रविष्ट नहीं होना चाहता था। मैं अपने पिछले अनुभव से हताश हो गया था। आजकल इस आयाम का कोई सम्मान नहीं है। ऐसे आदमी को पागल व पलायनवादी समझा जाता है। ऐसे आदमी की वैज्ञानिक व प्रगतिशील सोच को भाँति-2 की अति रूढ़िवादी और अति भौतिकवादी धारणाओं से एकसाथ दबा दिया जाता है। ऐसी धारणाओं वाले लोग समझते हैं कि इसे अंधेरे बिल में सोते-2 ही जागरण प्राप्त हो गया। वे यह नहीं देख-समझ पाते कि इसे इसके लिए इसे बहुत से भौतिक संघर्ष करने पड़े हैं। इसे शून्य पद की उपाधि तब मिली है, जब इसने सबसे ज्यादा भौतिक व सामाजिक उपलब्धियां हासिल की हैं, और यह फिर से विकासवादी भौतिक जगत में प्रविष्ट होने के लिए तैयार है, पर जागृति के साथ। वास्तव में जागृति एक ऐसा पारलौकिक आयाम है, जो किसी को नहीं दिखता, सिर्फ शून्य ही नजर आता है। इसी तरह अधिकांश लोगों को यह पता ही नहीं होता कि जो कुंडलिनी आध्यात्मिक विकास के लिए जरूरी है, वही कुंडलिनी भौतिक विकास के लिए भी जरूरी है। यदि जागरण का आनन्द कुंडलिनी से मिलता है, तो भौतिक भोग-विलास भी कुंडलिनी की सहायता से ही उपलब्ध होता है। उन्हें कुंडलिनी महसूस तो होती रहती है,

क्योंकि अपने अनुभव को कोई नहीं झुठला सकता। पर उन्हें उसके बारे में विस्तार से जानकारी नहीं होती। यह ऐसे ही होता है जैसे एक चीनी से अनजान आदमी उसकी मिठास तो अनुभव कर सकता है, पर उसे उसके बारे में विस्तार से पता नहीं होता, जैसे चीनी का रंग-रूप क्या है, यह कहाँ से आई, कैसे बनी, कैसे काम करती है, इसके क्या-2 फायदे हैं, और कहाँ-2 इस्तेमाल होती है। जागृति के बाद आदमी के अपने प्यारे लोग भी बेगाने हो जाते हैं। क्योंकि उसका रूपांतरण होता है। ऐसे आदमी की दिल की गहराई को कोई नहीं समझता। कई मामलों में तो जिगरी दोस्त भी जिगरी दुश्मन बन जाते हैं। ईश्वरीय शक्ति हाथ लगने से आदमी क्रांतिकारी कदम उठाता है। उसे हिंसक क्रांतिकारी तो नहीं कह सकते पर शांतिपूर्ण रेबेलियन या समाज सुधारक कह सकते हैं। पर आम आदमी उसे क्रांतिकारी ही समझते हैं, क्योंकि उनकी नजर ही वैसी होती है। रिवोल्यूशनिस्ट और रेबेलियन के बीच में जो अंतर ओशो ने बताए हैं, वे पढ़ने लायक हैं। इससे जान का ख़तरा हमेशा बना रहता है। मैंने खुद इन्हें पहली जागृति के बाद अनुभव किया है। इतना कुछ करने के बाद भी अगर अपने आदमी ही पराए हो जाएं, तो क्या फायदा। इसलिए इस दुनिया में खुलकर मजे करने चाहिए। जो जितना ज्यादा मूर्ख है, वह इस दुनिया में उतना ही ज्यादा सुखी है। रूपांतरण के झटकों से मूर्ख ही सुरक्षित रहता है। उसके सभी अपने हैं। अध्यात्म और भौतिकता का संतुलन ही सर्वोत्तम है। मध्यमार्ग ही सर्वोत्तम है। ये मेरे अपने विचार हैं, इसीलिए व्यक्तिगत ब्लॉग पर लिख रहा हूँ। यह कोई कथा-उपदेश सुनाने वाला ब्लॉग तो है नहीँ। मुझे लगता है कि नेगेटिव प्रेशर वाला कुंडलिनी तरीका उनके लिए है, जो कमजोर, बीमार, वृद्ध, ऊर्जाहीन और दुनियादारी से दूर हैं। पोजिटिव प्रेशर वाला कुंडलिनी साधना का तरीका उनके लिए है, जो ताकतवर, स्वस्थ, जवान, ऊर्जावान और दुनियादारी में डूबे हुए हैं।
असली और वैज्ञानिक तरीका तो कुंडलिनी ध्यान ही है। इसमें मूलाधार की ऊर्जा-नदी को ऊपर चढ़ाने के लिए विचारों की शून्यता का नहीँ, बल्कि विचारों (कुंडलिनी विचार/चित्र) की प्रचंडता का सहारा लिया जाता है। इसलिए यह मानवीय व प्रेम से भरा तरीका है। यह व्यवहारवादी व लौकिक तरीका है, जो सबके अनुकूल है। भौतिकवादी प्रकार के लोगों के लिए तो यह तरीका सर्वोत्तम ही है। दूसरी ओर, शून्यत्व वाला तरीका जँगली सा तरीका लगता है। मुझे तो लगता है कि सम्भवतः ऋषि पतंजलि के अष्टांग योग के इसी मूल सूत्र के गलतफहमी से भरे प्रचलन से ही हिंदुओं का स्वभाव पलायनवादी जैसा रहा होगा। हालाँकि दोनों ही तरीके कुंडलिनी चालित हैं, पर छोटा सा अहम अंतर है, जिसे लोग आसानी से नहीँ देख पाते। शून्यत्व वाले कुंडलिनी तरीके में कुंडलिनी से शून्यत्व पैदा किया जाता है। इसमें बहुत समय लग जाता है। इसमें तांत्रिक यौनबल का सहारा भी नहीं लिया जाता है। यह शुद्ध अष्टांगयोग वाला या राजयोग वाला तरीका है। तांत्रिक कुंडलिनी तरीके में कुंडलिनी को तांत्रिक यौनबल देकर इतना मजबूत कर दिया जाता है कि कुंडलिनी शून्यत्व को बाईपास करके सीधे ही मूलाधार की ऊर्जा-नदी को सहस्रार तक खींच लेती है। इसीलिए तांत्रिक कुंडलिनी जागरण हमेशा कुंडलिनी से शुरु होता हुआ अनुभव होता है। शून्यत्व वाला जागरण किसी भी विचार या चित्र से शुरु हो सकता है, हालांकि ज्यादातर कुंडलिनी से ही शुरु होता है, और ज्यादा भूमिका कुंडलिनी की ही होती है, क्योंकि उसका ध्यान करने की आदत होती है। तांत्रिक कुंडलिनी जागरण के दौरान तो आदमी दुनियादारी के मजे उड़ा रहा होता है, घूम-फिर रहा होता है। पर शून्यत्व वाले कुंडलिनी जागरण के दौरान वह दुनिया की नजरों में अकेले जैसा, निवृत्त जैसा, और अवसादग्रस्त जैसा होता है। एक सामाजिक प्राणी के लिए शून्यत्व पैदा करना आसान नहीं है। अगर पैदा हो गया, तो उसे बना कर रखना आसान नहीं है, क्योंकि ऐसा तो नहीं है कि शून्यत्व पैदा होते ही जागरण हो जाए। मुझे लगता है कि हिन्दू धर्म में जो भौतिक व बौद्धिक विकास की रफ़्तार कम हुई, उसके लिए कहीँ न कहीं यह शून्यत्व साधना भी जिम्मेदार है। पतंजलि के चित्तवृत्ति या मन के विचारों के रोधन से लोग यह मतलब लगाने लगे होंगे कि दिमाग का जितना कम प्रयोग करेंगे, उतनी ही जल्दी और बढ़िया जागृति होगी। पर वे पतंजलि के गूढ़ भाव को नहीं समझे होंगे, जिसके अनुसार कुंडलिनी साधना खुद शून्यत्व पैदा करती है, जानबूझकर दिमाग को बंधक बनाने की जरूरत नहीं। पतंजलि योग में यम-नियम आदि चित्त-विरोधी विधियों से दिमाग की बैकग्राउंड सीनरी की डार्कनेस को बढ़ाकर कुंडलिनी चित्र को चमकाने की कोशिश की जाती है। कुंडलिनी को अतिरिक्त ऊर्जा देने के लिए इसमें ऊर्जाघन पदार्थों जैसे कि तांत्रिक पंचमकारों के सेवन का प्रावधान नहीं है। जबकि कुंडलिनी योग में बैकग्राउंड सीनरी की चमक को बढ़ाकर कुंडलिनी को चमकाने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा प्रदान की जाती है। साथ में, तांत्रिक तकनीकों से बैकग्राउंड सीन की चमक को भी कुंडलिनी के ऊपर स्थानांतरित किया जाता रहता है। इससे लौकिक ऐशोआराम भी दुष्प्रभावित नहीं होता। हालांकि यह एक वैश्विक

सत्य है कि कुछ न होने से कुछ होना बेहतर है। मेरे कहने का मतलब है कि जिस किसी भी मानवीय तरीके से कुंडलिनी जागरण की संभावना हो, उसे झटक लेना चाहिए।

कुंडलिनी योग से सतोगुण और तमोगुण के बीच का रजोगुण रूपी विभवांतर कम हो जाता है

आदमी चाह कर भी अपने गुणों की हलचल को नहीं रोक सकता। प्राणवायु गुणों में ऐसे ही लहरें पैदा करती रहती है, जैसे वायु समुद्र में तूफान पैदा करती है। हालांकि जिन योगियों ने प्राणायाम आदि से प्राणवायु को वश में कर लिया होता है, वे काफी हद तक इन लहरों को नियंत्रित कर के अपने असली व गुणों के आधारभूत स्तर वाले जीवात्म स्वरूप को जान भी लेते हैं। एक आदमी को लें जिसने हमेशा तूफान वाला समुद्र ही देखा है, और कभी भी शांत और निश्चल समुद्र नहीं देखा है। वह समझेगा कि समुद्र हमेशा ऐसा ही होता है और वही उसका असली स्वरूप है। उसे समुद्र के, बिना लहर वाले, असली व आधारभूत रूप के जैसे निश्चल जीवात्मा रूप का कोई ज्ञान नहीं होगा। उसे अगर उसकी जगह कभी बिल्कुल शांत समुद्र दिख गया या मान लो कि पोलर रीजन का ठंड से जमा हुआ समुद्र दिख गया, तो वह कहेगा कि समुद्र सूख गया या खत्म हो गया। ऐसे ही जिंदा आदमी को मरा हुआ देखने पर लोग कहते हैं कि वह तो मर गया, पर आदमी कभी नहीं मरता। यहां यह उल्लेखनीय है कि यह शरीर के प्रति लापरवाही जैसे कि स्वयं को नुकसान पहुंचाने की प्रवृत्ति या आत्महत्या आदि का सकारात्मक मूल्यांकन नहीं है। शरीर तो मरता ही है। फिर पता नहीं कब नया शरीर मिले, कैसा जैसा मिले, क्या पता कितनी कठिनाइयों के साथ मिले, मिलने के बाद भी पता नहीं कितने समय जिंदा रहे, किसको पता। इसलिए शरीर का भलीभांति ख्याल तो रखना ही चाहिए। इस बात का असली मतलब यह है कि आदमी की आत्मा कभी नहीं मरती, क्योंकि आत्मा ही आदमी का असली रूप है। यह ऐसे ही है, जैसे एक आदमी ने हमेशा मन की लहरों के रूप वाले अर्थात बदलते गुणों वाले अपने स्वरूप को ही महसूस किया है। उसे पता ही नहीं है कि यह लहरों वाला स्वरूप उसका आधारभूत स्वरूप नहीं है। उसने कभी योग, ध्यान आदि से मन को शांत नहीं किया। तूफान वाले सभी समुद्र एक जैसे ही लगते हैं, क्योंकि उनमें पानी ढंग से नजर नहीं आता। पर जब तूफान शांत हो जाता है, तब किसी का पानी नीला तो किसी का हरा नजर आता है। किसी का पानी कम तो किसी का ज्यादा नमकीन होता है। किसी में शैवाल आदि समुद्री वनस्पति कम होती है तो किसी में ज्यादा। किसी में किसी किस्म के समुद्री जलचर होंगे तो किसी में किसी अन्य किस्म के। इसी तरह ताबड़तोड़ मानसिक तूफान वाले आदमी भी एक जैसे लगते हैं। जैसे ही हम उनके किसी गुण पर ध्यान केंद्रित करने लगते हैं, वह गुण उसी पल बदल जाता है। इसी वजह से तो मृत्यु के बाद की आत्मा के साक्षात्कार से ही उसके आधारभूत गुणों वाले स्वरूप के बारे में सही और विस्तृत सूचना मिल सकती है। हालांकि ऐसा नहीं कि टीवी की तरह सबकुछ दिखता है, पर उसके औसत सूक्ष्म स्वरूप का अनुभव होता है। बेशक वह रूप हमें कुछ घुटन भरा लग सकता है, क्योंकि हमें उसकी आदत नहीं है। पर उस जीवात्मा को तो ऐसा नहीं लगेगा क्योंकि वह तो अपने उस स्वरूप की अभ्यस्त हो चुकी होगी।

सृष्टि में जितनी जीवात्माएं हैं, समुद्र भी उतने ही हैं

यह बहुत रोचक विषय है और लिखते रहने से नई से नई गुत्थियां सुलझती रहती हैं। और अगर साथ में थोड़ा बहुत अनुभव भी हो तब तो कहने ही क्या। ऊंची उठी लहर को सुख या सतोगुण मान लो और समुद्र की सामान्य सतह से नीचे गिरी हुई लहर को दुख या तमोगुण मान लो। जीवन भर मन में ऐसा ही चलता रहता है। मरने के बाद मन या आत्मा समुद्र की सामान्य सतह जैसा हो जाता है। न लहर ऊपर को और न नीचे को। न सुख, न दुख। पर ऐसा नहीं है, क्योंकि अगर गुण हैं तो सुख और दुख तो साथ रहेंगे ही। यह तो त्रिगुणातीत परमात्मा ही है जिसमें न सुख है न दुख, सिर्फ़ निरपेक्ष आनंद है। ऐसा समझ लो कि इसमें सतोगुण और तमोगुण दोनों ही हैं। हालांकि दोनों कम मात्रा में हैं क्योंकि उनको उठाने या गिराने वाला अर्थात उनमें लहरें पैदा करने वाला शरीर नहीं है। यही गुणों की साम्यावस्था है। मतलब सतोगुण भी एक बराबर और तमोगुण भी एक बराबर। कोई कहेगा कि फिर सभी लोगों में तीनों गुणों की मात्रा अलग अलग कैसे होगी। देखो, जिसमें मृत्यु के समय ज्यादा सतोगुण होगा, वह मृत्यु के बाद वहीं फिक्स हो जाएगा मतलब बाद में भी ज्यादा बना रहेगा। यह ऐसे ही कि अगर ध्रुवीय समुद्र के जमते समय उसकी लहर ऊपर को उठी होगी तो वह जमने के बाद भी उतनी ही ऊपर उठी रहेगी, वहां से बदलेगी नहीं। यह भी सत्य है कि मृत्यु के समय अक्सर गुण वैसे ही रहते हैं जैसे उसके पिछले सारे गुणों और कर्मों का औसत रूप होता है। मतलब सब लोगों की आत्मा में अंधेरे की अलग अलग मात्रा होगी। चाहे दो व्यक्ति आपस में कितने ही ज्यादा नजदीकी क्यों न हों, दोनों की आत्माओं में अंधेरे की मात्रा एकसमान हो ही नहीं सकती। यह असंभव है। कुछ न कुछ फर्क तो रहेगा ही। इसीलिए तो कभी आत्मा के मामले में धोखा नहीं होता कि फलां की आत्मा गलती से फलां के शरीर में चली गई। जो कथा कहानियों में होता है, वो शिक्षात्मक रूपक ही लगता है। जब किसी के शरीर पर प्रेत आदि का कब्जा होता है तो वह

साफ बताता है कि वह प्रेत है। इसीलिए उसे तांत्रिक आदि से भगाया जाता है। अगर किसी की आत्मा की फोटोकॉपी बनने की किसी में ताकत होती तो प्रेत भी बन जाता। फिर किसी को पता न चलता और उसे दूसरे के शरीर से कोई भगाता भी न। पर ऐसा नहीं होता। इसीलिए कहते हैं कि मृत्यु के समय की मानसिक स्थिति मृत्यु के बाद की गति को निर्धारित करती है। इसीलिए कई लोग मरने के लिए काशी जैसे तीर्थों में जाते हैं, कई मृत्यु के समय गीता आदि आध्यात्मिक ग्रंथ सुनते हैं। यहां पर एक पेच और खुलता है। बेशक मरने के बाद जीवात्मा परमात्मा के जैसा परिवर्तनरहित और हलचल से रहित, शांत और व्यापक बन जाता है, पर दोनों में बहुत बड़ा अंतर है। जीवात्मा निर्गुण जैसा लगता हुआ भी तीनों गुणों से बंधा होता है, पर परमात्मा असली निर्गुण अर्थात गुणातीत होता है। इसीलिए वह जीवात्मा से भी ज्यादा और यूं कहो कि परम सूक्ष्म, परम व्यापक, परम परिवर्तनरहित, परम शांत, और परम सच्चिदानंद रूप होता है। यह खासकर उन लोगों को समझना चाहिए जो परमात्मा और जीवात्मा को करीब एकजैसा मानने के धोखे में पड़े होते हैं। कई दफनाए हुए मृत शरीर आदि की पूजा करते हैं। कई ऐसा समझते हैं कि मरने के बाद उनका जन्नत का टिकट कटा हुआ है।

कुंडलिनी योग कामयाब संभोग में मदद करता है

कुंडलिनी योग सेक्स का एक अभिन्न अंग है

एक और रहस्यपूर्ण तथ्य जो मैं आपको बताता हूँ, वह यह है कि यौन संपर्क के दौरान भी यह मूल स्तर की आत्मा का संपर्क सबसे गहरा होता है। ऐसा इसलिए क्योंकि सेक्स के समय व्यक्ति दो यौन साथियों को छोड़कर पूरी तरह से अकेला रहना चाहता है। न दुनिया की और न ही दुनियावी विचारों की दखलंदाजी चाहता है। यह प्रवृत्ति ही यौन मामलों में शर्मीलेपन की उत्पत्ति करती है। कोई भी सार्वजनिक रूप से सेक्स नहीं करना चाहता क्योंकि तब वह सेक्स नहीं बल्कि केवल एक नाटक होता है। यहाँ तक कि कोई भी अपने वास्तविक यौन अनुभव के बारे में बात नहीं करना चाहता, धोखेबाज़ों द्वारा प्रचारित यौन नाटक की तो बात ही छोड़िए। तो सोचो कि सांसारिक अराजकता से पूरी तरह से दूर मूल आत्मा के रूप से अधिक अकेलापन क्या हो सकता है। यहाँ तक कि संभोग के समय यौन ऊर्जा भी इतनी अधिक होती है कि यह उस अल्पकालिक मूल आत्मा के संपर्क के समय पर्याप्त से अधिक आनंद प्रदान करती है। इस तरह प्रेम भी बढ़ता है। यह आम तौर पर देखा जाता है कि दिवंगत आत्मा का संपर्क अक्सर तांत्रिक मिश्रित यौन वातावरण में होता है। इसका कारण एक ही है कि तंत्र की तीव्र यौन ऊर्जा उस अल्पकालिक घुटन भरे आत्मिक संपर्क को झेलने के लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान करती है। साधारण सेक्स पर्याप्त नहीं होता, क्योंकि इसमें मन पर कम नियंत्रण होता है और साथ ही, यह कम अवधि का होता है। कुंडलिनी योग आधारित तंत्र यौन अनुभव को बढ़ाता है क्योंकि यह कुंडलिनी ध्यान की मदद से अकेलेपन के स्तर को और ज्यादा बढ़ाता है जो आनंदमय और सफल सेक्स के लिए आवश्यक है। कुंडलिनी ध्यान एक मानसिक कुंडलिनी छवि को छोड़कर हर सांसारिक अराजकता को खत्म कर देता है। यह आवश्यक भी है क्योंकि हम मानसिक शक्ति को रोक कर नहीं रख सकते हैं, और ऐसा करते समय यह घुटन भरा होता है और आनंद भी रुक सा जाता है। फिर आनंद के बिना सेक्स कैसा। लेकिन कुंडलिनी छवि को ध्यान में रखते हुए, यह गहन आनंद का स्रोत बन जाता है। यह पूरी तरह से अकेलेपन के समान है क्योंकि मानसिक कुंडलिनी छवि कुछ भी भौतिक नहीं बल्कि केवल एक मानसिक रचना है। इसीलिए कहते हैं कि असली प्रेम एकबार में एक से ही हो सकता है, दो से नहीं। तंत्र भी लंबे समय तक एक ही साथी के साथ रहने की वकालत करता है। हालांकि यह जानना महत्वपूर्ण और दिलचस्प है कि एक व्यक्ति जिसे कई साथियों द्वारा बुरी तरह से फटकार लगाई जाती है, वही केवल एक ही साथी के साथ पूर्ण शांति में रहना चाहता है। शायद संभोग में आनंद भी इसीलिए है क्योंकि यह आत्मा की सर्वाधिक गहराई तक जाने का प्रयास करता है, और आत्मा तो आनंद का खजाना है ही। वास्तव में सेक्स विज्ञान जितना जाना जाता है उससे कहीं अधिक गहरा और विशाल है जैसा कि ओशो महाराज ने सच ही कहा है।

आत्मा और जगत प्रकाश और अंधकार का परस्पर खेल है

मुझे तो लगता है कि जिसे हम सतोगुण समझते हैं, वही नेपथ्य में तमोगुण बन रहा होता है। यह ऐसे है जैसे धूप से ही छांव बनती है। इसका मतलब है कि जीवात्मा ने शुरु से जो कुछ भी अनुभव किया है, वह सभी कुछ उसमें तमोगुण अर्थात अंधेरे के रूप में मौजूद है। आगे भी वह जो महसूस करती रहेगी, वह भी अंधेरे के रूप में दर्ज होता रहेगा। यह ऐसे ही है जैसे जितनी अधिक और जैसी धूप होगी, छांव भी उतनी ही ज्यादा और वैसी ही बनेगी। वृक्ष की जैसी

पत्तियां होंगी, छांव भी वैसी ही बनेगी। अर्थात जैसा शरीर या मन या मस्तिष्क होगा, तमोगुण रूपी छांव भी उसकी वैसी ही बनेगी। मतलब कि छांव में उसको बनाने वाली धूप या रौशनी या उसकी पत्तियों से छनकर आई हुई धूप के बारे में पूरी सूचना दर्ज है। सतोगुण तो आत्मा का अपना शुद्ध रूप है ही। वह तो रहेगा ही। वह तो मिट नहीं सकता। यह हो सकता है कि तमोगुण की मात्रा के अनुसार वह कम या ज्यादा महसूस होए। अगर तमोगुण ज्यादा होगा तो सतोगुण कम होगा और अगर तमोगुण कम होगा तो सतोगुण ज्यादा होगा। रजोगुण भी आत्मा की उस स्वाभाविक चेष्टा के रूप में होगा जिसके तहत वह तमोगुण से सतोगुण की तरफ जाना चाहती है। इसका मतलब है कि हम अगर दुनिया को महसूस न करें, तो वह आत्मा में तमोगुण के रूप में दर्ज नहीं होगी। पर दुनिया से किनारा कर पाना भी संभव नहीं है। तमोगुण की बात तो बाद में आएगी, पहले भूखे मरने की नौबत आ सकती है। बीच वाला मध्य मार्ग है अनासक्ति का। मतलब दुनियादारी को बिना आसक्ति के अनुभव करना है। इससे दुनियादारी भी चलती रहेगी और उसकी छांव भी आत्मा पर नहीं जम पाएगी या कम जमेगी। ऐसा योग से आसानी से संभव है। शास्त्रों में आसक्तिरहित सात्त्विक तरीकों को अपनाने के लिए इसलिए बोला जाता है ताकि इसके सात्त्विक संस्कार मन में पड़ते रहें। सात्विक संस्कारों को मन से निकालने में कम मेहनत लगती है जिससे मुक्ति की संभावना बढ़ जाती है। यदि इनको मन में न डाला जाए तो ऊटपटांग संस्कार मन में पड़ते रहेंगे क्योंकि मन खाली नहीं रह सकता। इन्हें बाहर निकालना बहुत मुश्किल होता है जिससे मुक्ति की संभावना काफी घट जाती है। पर इसी से बात नहीं बनेगी। पिछले अनगिनत जन्मों की दुनियादारी की छाप की कालिख जो आत्मा पर जमी है, उसे भी साफ करना पड़ेगा। वह भी कुंडलिनी योग से ही होगा, खासकर एग्रेसिव तांत्रिक कुंडलिनी योग से। इससे आत्मा में सतोगुण बढ़ेगा और तमोगुण और रजोगुण कम हो जाएगा। रजोगुण इसलिए कम होगा क्योंकि अब नाममात्र के तमोगुण में इतना पोटेंशल नहीं है कि वह तेज गति से सतोगुण की तरफ जा सके। यह लेटेंट रजोगुण भी बिजली के दो विपरीत ध्रुवों के बीच के विभवांतर की तरह होता है। जितना ज्यादा अंतर उनके विपरीत आवेश के बीच में होगा, उतनी ही रफ्तार और अधिकता से विद्युत प्रवाह उनको जोड़ने वाले परिपथ में दौड़ेगा। शुद्ध आत्मा का सतोगुण तो सर्वोच्च और निश्चित निर्धारित है। बद्ध जीवात्मा के तमोगुण की मात्रा ही निर्धारित करेगी कि उनके बीच में रजोगुण रूपी विभवांतर कम होगा या ज्यादा। देखो, दोनों के बीच परिपथ तो तभी जुड़ेगा जब जीवात्मा को शरीर मिलेगा। फिर उनके बीच में मानसिक विचारों के रूप में खूब विद्युत प्रवाह बहेगा। वह जीवात्मा के तमोगुण के अनुसार कम ज्यादा होता रहेगा। इसीलिए तो पार्टी आदि में ड्रिंक आदि करने के बाद लोग तरोताजा होकर नई उमंग और जोश से अपने काम धंधे में पहले से भी ज्यादा लग जाते हैं। यह तो सिर्फ एक उदाहरण है और अध्यात्म के मामले में हानिकारक भी हो सकता है। कई लोग लंबे समय तक अकेलापन बिताने के बाद नई और बढ़ी हुई शक्ति के साथ दुनियादारी में उतरते हैं। यह अकेलेपन की तमोगुण की ही शक्ति होती है। कुंडलिनी योग से तमोगुण घट जाता है। इससे सतोगुण और तमोगुण के बीच रजोगुण रूपी विभवांतर कम हो जाता है। इसीलिए योगी का व्यवहार इंपलसिव या तुनकमिजाजी या अंध प्रगतिशील नहीं होता, बल्कि धीर, गंभीर और व्यवस्थाशील होता है। कई बार तंत्रयोगी देशकाल की मांग के अनुसार अस्थायी इंपलसिव व्यवहार प्राप्त करने के लिए अस्थाई रूप से तमोगुण को स्वीकार भी कर सकते हैं। बिना शरीर की जीवात्मा में यह रजोगुण लेटेंट विभवांतर के रूप में रहता है। मतलब अंधेरे से प्रकाश की तरफ जाने का बल तो लग रहा होता है, पर शरीररूपी विद्युत परिपथ न होने के कारण अंधकार प्रकाश तक जा नहीं पाता। मतलब तमोगुण सतोगुण नहीं बन पाता।

कुंडलिनी तंत्र की अनियंत्रित शक्ति ही बांग्लादेश में मुस्लिम जिहादियों की भीड़ से अल्पसंख्यक हिंदुओं पर अत्याचार करवा रही है

सभी प्रिय पाठकों को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी की हार्दिक बधाई

दोस्तो, इस पोस्ट में बहुत से रहस्य छिपे हुए हैं। मुझे तो यह गागर में सागर की तरह लग रही है। मूलाधार चक्र सिर्फ मेरुदंड के आधार पर कोई स्थान विशेष नहीं है। यह आत्मा या मन की अवस्था भी है, जिसमें सांसारिकता का कचरा नगण्य सा बचा होता है। सहस्रार चक्र पर ज्ञान या सात्त्विकता से जुड़े अहंकार का कचरा होता है। आज्ञा चक्र पर बुद्धिमत्ता का कचरा होता है। विशुद्धि चक्र पर वाणी से संबंधित कचरा होता है। अनाहत चक्र पर भावनाओं से जुड़ा कचरा होता है। मणिपुर चक्र पर भोजन से संबंधित सांसारिक विचारों का कचरा होता है। स्वाधिष्ठान चक्र पर प्रजनन व यौनता से जुड़ा कचरा होता है। मूलाधार चक्र पर शौच से जुड़ा सांसारिक कचरा होता है। मतलब कि जब

मन पर जमा हुआ संसार का सारा कचरा नष्ट हो जाता है, तब मन अपने असली पुरातन रूप में आ जाता है। मन का वह आदिम या आदिकालिक रूप मूल प्रकृति ही है। यही मूल आधार मतलब मूलाधार है। यह चेतना का सबसे निचला स्तर होता है। इसीलिए इसको शरीर का सबसे निचला स्थान दिया गया है। मूलाधार से अगर यह क्रमवार चक्रों से होकर धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता है, तब यह पुनः सांसारिक कचरा इकट्ठा करने लगता है। अक्सर आदमी के साथ ऐसा ही होता है। आपने सुना भी होगा। जैसे कि फलां आदमी बिल्कुल दिवालिया या कंगाल हो गया था या सड़क पर आ गया था। फिर उसने धीरे-धीरे तरक्की करते हुए अपार धन संपदा इकट्ठी कर ली। वह दरअसल मूलाधार में पहुंच गया था, सब कुछ खोकर। मूलाधार में अपार ध्यान शक्ति होती है। यह इसलिए क्योंकि वहां सांसारिक कचरे का व्यवधान नहीं होता। उस ध्यान शक्ति को उसने कुंडलिनी योग साधना में नहीं लगाया, पर प्रचुर धन संपत्ति इकट्ठा करने में लगाया। सब कुछ तो नहीं मिल सकता न। शक्ति की भी एक सीमा होती है। इधर लगाओगे, तो उधर के लिए नहीं बचेगी। उधर लगाओगे, तो इधर के लिए नहीं बचेगी। अगर थोड़ा थोड़ा दोनों तरफ लगाओगे, तो न इधर कुछ हासिल होगा, न उधर। ऐसा इसलिए, क्योंकि हर एक उपलब्धि के लिए एक मुक्तिगामी वेग अर्थात एस्केप वेलोसिटी की जरूरत होती है। यह अधिकतम शक्ति से ही हासिल होती है। कई लोग जानबूझकर कुंडलिनी साधना को ठुकराते हैं, क्योंकि उनकी मजबूरी होती है। पेट का भरण पोषण ज्यादा महत्वपूर्ण है, कुंडलिनी जागरण बाद में। कई लोग जीवन जीने का भरपूर गुजारा होते हुए भी धन के लालच में आकर इसे मूर्खतापूर्वक ठुकराते हैं। पर अधिकांश लोगों को तो कुंडलिनी साधना का ज्ञान ही नहीं होता। यह इसलिए क्योंकि इसे आदि काल से आम आदमी से छुपाया जाता रहा है। खासकर बालकों और किशोरों से तो पूरी तरह से छुपाया गया है। युवावस्था में वह काम धंधों की उलझनों में फंस कर इस बारे जानकारी हासिल नहीं कर पाता। जब वह परिपक्व और बूढ़ा होने लगता है, तब उसे इसकी जानकारी दी जाती है। पर तब शरीर की अशक्तता के कारण तांत्रिक कुंडलिनी साधना हो नहीं पाती। अपनी बूढ़ी उम्र में अगर आदमी मूलाधारवासिनी नागिन का मुंह हमेशा ऊपर की ओर मोड़ के रखेगा तो प्रोस्टेट तो बढ़ेगा ही। महाराज ओशो ने इसीलिए तांत्रिक संभोग से पर्दा उठा कर उसे सार्वजनिक किया। मैं उस काम के लिए उन्हें दाद देता हूं।

तांत्रिक कुंडलिनी योग को छिपाने की मुख्य वजह मुझे यह लगती है कि कई बार इससे मिलने वाली शक्ति को नियंत्रित करना कठिन हो जाता है। उससे आदमी हिंसक भी बन सकता है, पागल भी बन सकता है। बांग्लादेश में क्या हो रहा है? मुझे तो लगता है कि जिहादियों के पास वही अनियंत्रित कुंडलिनी शक्ति है, जो वहां के अल्पसंख्यक हिंदुओं को इसका निशाना बनाते हुए उनसे अनगिनत कुकर्म करवा रही है। इस्कॉन कृष्ण मंदिर का हाल ही देख लीजिए, सबकुछ टूटा फूटा हुआ और देव मूर्तियां तहस नहस। साथ में, उनका कुंडलिनी तंत्र को अपनाने का तरीका भी तो गलत और अधूरा जैसा ही है। लिटल नॉलेज इज ए डेंजरस थिंग। इसलिए हिंदुओं के वेदपुराण बने थे ताकि लोग उनके अनुसार प्रारंभिक जीवन जीते हुए आराम और सुरक्षा के साथ कुंडलिनी तंत्र तक पहुंचकर उसे अपनाते और बिना दुष्प्रभाव के उसमें सफल होते। पर ये क्या, जेहादी मानसिकता के लोग तो सीधे ही मतलब वेदों की सहायता लिए बिना ही साधना के अंतिम पायदान मतलब निराकार ब्रह्म तक पहुंच जाते हैं, वह भी तांत्रिक क्रियाओं जैसे कृत्यों के साथ। इससे नुकसान तो होगा ही। वेदपुराण न पढ़ने होते तो शरीरविज्ञान दर्शन ही पढ़ लेते, क्योंकि यह वेदपुराणों का आधुनिक और संक्षिप्त स्पष्टीकरण ही लगता है मुझे। आप ही सोचो कि क्या कोई आदमी एबीसी सीखे बिना ही अंग्रेजी में पीएचडी कर सकता है? करने लगेगा तो कन्फ्यूज या पागल तो होगा ही। मतलब कि छिपाने का प्रयास करते हुए भी यह विद्या छिपी कहां है, साथ में यह इसके सुपात्र लोगों को भी नहीं मिल पा रही है। ऐसे भी अतिवादी इसे गलत ढंग से भी तो सीख ही रहे हैं, यदि विद्वान इसे न छिपाते तो सही ढंग से तो सीखते। इससे अच्छा होता कि इसे नियंत्रण करने के तरीके खोजे जाते और सार्वजनिक किए जाते।

लोकतंत्र के अनेक लाभ हैं, पर यह बहुसंख्यक आबादी मुख्यतः कट्टरपंथी जिहादियों द्वारा किए जाने वाले जुल्मों पर लगाम नहीं लगा पा रहा है। शेख हसीना ने कोशिश की तो उसे जान बचा कर भागना पड़ा। अगर लगाम लगा भी देती तो बहुसंख्यक आबादी उसे चुनाव में हरा देती, और फिर विपक्ष पर दबाव डालकर आजीवन कारावास या मृत्युदंड दिलवा देती या साजिशन खुद ही मरवा देती। इसी डर से राष्ट्राध्यक्ष उग्र भीड़ से मनमानी भरा तांडव करने देते हैं। आखिर जान तो सबको प्यारी होती है।

मूलाधार पर कुंडलिनी साधना करने वाले भी दो किस्म के लोग होते हैं। पहले किस्म के लोग कुंडलिनी का हर एक चक्र पर लंबे समय तक या महीनों तक एक ही चक्र पर ध्यान करते हुए धीरे-धीरे ऊपर चढ़ाते हैं। लगता है, आजकल

ऐसे लोग कामयाब नहीं हो सकते। आज के आपाधापी के युग में सालों तक शांत व व्यवधानरहित जीवन नसीब नहीं हो सकता। गनीमत है अगर एक दो महीना या एक दो साल भी मिल जाए। ऐसे में कुंडलिनी बीच के ही चक्रों में फंसी रह सकती है। दूसरे किस्म के लोग बुलेट ट्रेन की तरह होते हैं। वे एकदम से संभोग आधारित तांत्रिक कुंडलिनी योग से कुंडलिनी को सीधे ही एकदम से मूलाधार से सहस्रार तक चढ़ा देते हैं। ऐसे लोगों के लिए तो एक महीने का समय भी काफी होता है। अगर एक दो साल का उपयुक्त जीवन मिल जाए, तब तो कहने ही क्या।

स्पष्ट है कि आम आदमी मूलाधार और सहस्रार के बीच झूलता रहता है, विभिन्न चक्रों से होते हुए, जागृति को पाए बिना ही। वह कभी मुक्त नहीं हो पाता। कुंडलिनी जागरण भी मुक्ति की गारंटी नहीं है। मुक्ति तो सन्यासी की तरह मन को पूरी तरह से त्यागने से मिलती है, जो कि व्यवहारिक जीवन में संभव नहीं है। यह अलग बात है कि किसी चमत्कारिक व अनजाने तरीके से मुक्ति खुद ही मिल जाती हो, बेशक इसके लिए प्रयास तो करना ही चाहिए। मूलाधार और मूल प्रकृति की समकक्षता को देखकर तो यही लगता है कि आदमी का सांसारिक बंधन अनादि है, बेशक इसका अंत हो सकता है।

कुंडलिनी तंत्र का मूल आधार शिव-लिंग

मित्रों, शिवपुराण की एक कथा के अनुसार एकबार कुछ शिष्यों ने कथावक्ता से पूछा कि क्या शिवलिंग लिंग होने के कारण ही हर जगह पूजित है या कोई अन्य कारण है। इस पर वे एक कथा सुनाते हैं कि दारुक नाम के एक श्रेष्ठ वन में शिवजी के ध्यान में नित्य तत्पर शिवभक्त रहा करते थे। किसी समय वे समिधा लेने वन में गए हुए थे। उसी समय शिव उन्हें शिक्षा देने और उनकी परीक्षा लेने के लिए एक तांत्रिक अवधूत के वेष में आए, जो लिंग को हाथ में धारण कर के दुष्ट चेष्टा कर रहे थे। उनको देखकर ऋषिपत्नियां बहुत डर गईं। और अन्य बेताब और आश्चर्यचकित होकर वहां चली आईं। कुछ अन्य स्त्रियों ने एकदूसरे का हाथ पकड़कर परस्पर आलिंगन किया। कुछ स्त्रियां उस आलिंगन के घर्षण से आनंदमग्न हो गईं। उसी समय ऋषिवर आ गए और उस आचरण को देखकर दुखी और क्रोध से व्याकुल हो गए। वे आपस में कहने लगे, यह कौन है, यह कौन है। जब तांत्रिक अवधूत ने कुछ नहीं कहा तो उन्होंने उसे यह कहते हुए श्राप दिया कि वह वेदविरुद्ध आचरण कर रहा था इसलिए उसका लिंग भूमि पर गिर जाए। ऐसा ही हुआ। उस लिंग ने अग्नि की तरह सामने स्थित सभी वस्तुओं को जला दिया। जहां वह जाता, वहां सबकुछ जला देता। वह पाताल में गया, स्वर्ग में गया, भूमि पर भी सर्वत्र गया, पर कहीं स्थिर नहीं हुआ। सभी लोक व्याकुल हो गए, और वे ऋषिगण भी बहुत दुखी हुए। किसी भी देवता या ऋषि को शांति नहीं मिली। जिन देवों और ऋषियों ने शिव को नहीं पहचाना, वे ब्रह्मा की शरण में गए। ब्रह्मा ने यह कहते हुए उन्हें खूब लताड़ा कि आम आदमी अगर शिव को न पहचान पाए तो बात समझ आती है पर उनके जैसे ज्ञानी लोग शिव को कैसे नहीं पहचान पाए, और कहा कि अगर देवी पार्वती योनिरूपा बन जाए तो यह स्थिर हो जाएगा। देवी को प्रसन्न करने को यह निम्न विधि उनको बताई। अष्टदल वाला कमल बनाकर उसके ऊपर एक कलश स्थापित कर उसमें दूर्वा तथा यवांकुरों से युक्त तीर्थ का जल भरना चाहिए। फिर वेदमंत्रों के द्वारा उस कुंभ को अभिमंत्रित करना चाहिए। फिर वेदोक्त रीति से उसका पूजन करके शिव का स्मरण करते हुए शतरुद्रीय मंत्रों से कलश के जल से उस शिवलिंग का अभिषेक करना चाहिए। फिर उन्हीं मंत्रों से लिंग का प्रोक्षण मतलब छिड़काव करें, तब वह शांत हो जाएगा। फिर गिरिजायोनि रूपी बाण को स्थापित करके उस पर लिंग को स्थापित करना चाहिए, और फिर उसको अभिमंत्रित करना चाहिए। फिर षोडशोपचार मतलब सोलह किस्म की सामग्रियों से परमेश्वर का पूजन करना चाहिए, और फिर उनकी स्तुति करनी चाहिए। इससे लिंग स्थिर और स्वस्थ हो जाएगा, तथा तीनों लोक विकार से रहित और सुखी हो जाएंगे।

वैसे इस कथा का स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। यह आस्था से जुड़ा हुआ एक संवेदनशील धार्मिक मामला है। इसे खुद ही समझा जा सकता है। हां इतना जरूर कह सकते हैं कि हरेक आदमी अपने यौनसाथी की खोज में कभी न कभी जरूर भटकता है। उस दौरान उसके मन में जो समाधि चित्र बना होता है, वह उसे चिड़चिड़ा सा और जलाभुना सा जरूर बना सकता है। ऐसा इसलिए क्योंकि समाधि के लिए अतिरिक्त ऊर्जा की जरूरत होती है, जो किसी नजदीकी साथी के सहयोग से ही मिल सकती है। अष्टदल कमल अनाहत चक्र का प्रतीक है, और प्रेम उस पर ही उपजता है। उस पर तीर्थों के जल से भरे कलश को रखने का मतलब उस पर ध्यान शक्ति को इकट्ठा करके केंद्रित करना है। विभिन्न तीर्थ मतलब विभिन्न चक्र। दूर्वा घास प्रजनन, वृद्धि और विकास का प्रतीक है। यव अंकुर मतलब अंकुरित हुए जौ चढ़दी कला मतलब चहुंमुखी विकास का प्रतीक हैं, क्योंकि उसमें हर किस्म के टॉनिक, विटामिंस और मिनरल्स होते हैं, इसीलिए इसे ग्रीन ब्लड भी कहते हैं। इसका आम भाषा में यही मतलब लगता है कि दिल पर अर्थात प्यार पर अपना सबकुछ न्यौछावर कर देना। जोगी भी ऐसे ही होते हैं, जो घरबार छोड़कर अपने देवता की पूजा अर्चना में लग जाते हैं, और ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। उस कलश के पूजन का मतलब है, हृदय से शक्ति के साथ जुड़े देवरूप आदि ध्यानचित्र का पूजन। जिससे वह ज्यादा प्रकाशित अर्थात प्रसन्न होता है, जैसे किसी आदमी की सेवा से वह आदमी प्रसन्न हो जाता है। वेदमंत्रों से पूजन का मतलब है, उस चित्र को और ज्यादा धार देते हुए और स्पष्ट, शुद्ध और प्रकाशमान बनाना। बीजमंत्र भी ऐसा ही करते हैं। वह मानसिक ध्यान चित्र गुरु, प्रेमिका, देवता, बीजमंत्र आदि किसी का भी हो सकता है। उस पूजित चित्र से मिश्रित शक्ति को फिर अनाहत चक्र से स्वाधिष्ठान और मूलाधार चक्र को उतारा जाता है। यही कलश के जल से उस दिव्य लिंग का अभिषेक है। अभिषेक में पवित्र जलरूपी शक्ति की धारा निरंतर चलती है। प्रोक्षण जल के छिड़काव को कहते हैं। हृदयकलश से शक्ति को सुबहशाम की साधना से बारंबार नीचे उतारना ही ही दिव्य प्रोक्षण है। शतरुद्रीय मंत्र में विभिन्न बीजमंत्र आदि हैं, जो विभिन्न अदृश्य तरंगें छोड़ते हैं, जो आदमी के मन पर अदृश्य दिव्य आध्यात्मिक प्रभाव डालते हैं। वैसे कुदरती बाणलिंग नर्मदा नदी में मिलते हैं, पर लगता है कि कथा

में बाण को लिंग के आसन अर्थात पीठ के रूप में कहा गया है। मैंने जब बिंग एआई से पता किया तो उसने जवाब दिया कि एक अभिमंत्रित बाण को जमीन के अंदर गाड़ा जाता है, और उसके ऊपर शिवलिंग को स्थापित किया जाता है। हो सकता है कि यह ठीक कह रहा हो। क्योंकि कई स्थानों पर ऐसे शिवलिंग देखे जाते हैं जिनकी पीठ या आधार ही नहीं होता। पूछने पर वहां के पुजारी आदि बताते हैं कि यह शिवलिंग जमीन में गहराई तक गढ़ा होता है। हो सकता है, जमीन के अन्दर बाण ही उसकी पीठ हो। वैसे पीठ का आकार भी बाण से मिलता जुलता सा होता है। फिर उसके आगे तो आम आदमी की भाषा में तांत्रिक या दैवीय संभोगयोग ही लगता है। वैसे सबकी अपनी अपनी सोच हो सकती है। उससे तीनों लोक मतलब पूरा शरीर शांत और स्वस्थ मतलब अपने शुद्ध आत्मरूप में स्थित हो जाता है, क्योंकि सब लोक शरीर में ही हैं। यह दुनिया में अक्सर देखा जाता है इसीलिए बिगड़े हुए या बिगड़ रहे नौजवानों का विवाह उनके परिवार वाले जल्दी में करते हैं। उसके बाद मैंने बहुत से सुधरते हुए देखे हैं। पर कुछ नहीं भी सुधरते। इसमें उनकी पत्नियों का कसूर भी लगता है मुझे, शायद हालांकि ज्यादा कसूरवार तो पुरुष ही होते हैं। इसीलिए कहा है कि शिवलिंग को पार्वती रूपी पीठ ही धारण कर सकती है। इसीलिए तो स्त्री को अध्यात्मिक संस्कार देना पुरुष से भी ज्यादा जरूरी समझा जाता था, क्योंकि स्त्री ही पूरे परिवार की नींव होती है। मैंने एक व्यस्क आदमी को अपनी निजी राय जाहिर करते सुना था कि अगर पुरुषों का विवाह न हुआ करता तो वे एकदूसरे को कच्चा ही खा जाया करते, क्योंकि पत्नियां ही पुरुषों को नियंत्रित करती हैं। उन्होने खुद अपनी पहली पत्नि की मृत्यु के बाद एक अन्य महिला से विवाह क्रिया हुआ था। बात सही भी है। एक मित्र भी कह रहे थे कि तांत्रिक संभोग तो संभोग ही नहीं लगता, वह तो कोई और ही अति पवित्र अध्यात्मिक कर्म बन जाता है। मुझे लगता है कि मूर्ख, नकारात्मक, असफल और विधर्मी लोग ही दोनों को एक श्रेणी में रखकर अपने दिल की भड़ास निकालते हैं। एक पुस्तक लव स्टोरी ऑफ ए योगी में तो लेखक एक महिला के द्वारा उसके कुंडलिनी जागरण की मुख्य वजह पूछे जाने पर अपना अनुभव प्रश्नकर्ता को चिह्नित करने की बजाय सबको सुनाते हुऐ कहता है कि उसने वज्रशिखा की संवेदना पर कुंडलिनी चित्र का ध्यान करते हुए उसे उसके पूरक अंग में अंदरबाहर करते हुए ही जागृति प्राप्त की, पर जो उसने किया वह संभोग नहीं था। इस पर ऑनलाइन कुंडलिनी ग्रुप पर मौजूद वह प्रश्न पूछने वाली पाश्चात्य या संभवतः अमेरिकन महिला प्रेमभरी हैरानी और कुछ मजाकिया लहजे से उसे पिनपोइंट करते हुए उससे कहती है कि हमारे देश में तो उसे संभोग ही कहते हैं, वह पता नहीं कौनसी अचरजभरी संस्कृति या भूमि से ताल्लुक रखता है। उसके बाद उस विषय पर उस ग्रुप में सबके संवाद बंद हो गए थे, और तंत्र की उपयोगिता का विषय सामने आ गया था, जिसमें जागृति के लिए तंत्र की सर्वाधिक महत्ता को सभी स्वीकार कर रहे थे। मतलब लेखक ने अपने दिल की बात भी रख दी थी और अप्रत्यक्ष तौर पर मुख्य प्रश्न का जवाब भी दे दिया था। वैसे यह कथा मिस्र की अंखिंग तकनीक की तरह भी लग रही है।

मतलब यह साफ है कि इस कथा में विधर्मियों या हिंदु विरोधियों द्वारा फैलाए गए दुष्प्रचार का खंडन किया गया है। ऋषि बहुत दूरदर्शी होते थे। उन्हें पता था कि आने वाले समय में ऐसा हो सकता था। यह कथा भी समाज में घटने वाली आम घटना को दर्शाती है, कोई दिव्य पारलौकिक आदि नहीं। अविवाहित किशोर व्यक्ति ऐसे ही होते हैं। वे मौका मिलने पर युवतियों से लिंगोन्मुखी मजाक करते रहते हैं। उनमें से कोई शिव किस्म का तंत्र का असली हकदार भी होता है। पर लोग तो सबको एक जैसा लंपट बदमाश समझते हैं। कहते हैं कि दाने के साथ घुन भी पिसता है। उन्हें क्या पता कौन सच्चा है और कौन झूठा। इसलिए औरों के साथ वे शैव का भी अपमान करके शाप दे देते हैं, मतलब उसे भी बुरी नजर से देखते हैं। वस्तुतः शैव का लिंग कोई सामान्य लिंग नहीं होता। शैवतंत्र के प्रभाव से वह साक्षात इष्ट देवता होता है। एक प्रकार से साधना के प्रभाव से वह शैव व्यक्ति लिंगरूप बन जाता है। वह जहां भी जाता है, एक किस्म से उसके रूप में उसका इष्टदेवरूपी लिंग ही जा रहा होता है। उस इष्टदेव की नाराजगी सबको परेशान करती है, मतलब जलाती है। ऐसा भी हो सकता है, क्योंकि सारा विश्व लोगों के भटकते मन में है, और उस शैवलिंगरूपी इष्टदेव के सान्निध्य से उनका अपने भटकते मन से मोहभंग हो रहा होता है, इसीको जगत का जलना कहा गया हो सकता है। उस माहेश्वर लिंग को पार्वती के जैसी तंत्रयोगिनी ही सही से धारण कर सकती है, ताकि उसके साथ इष्टदेव रूपी ध्यानचित्र का ध्यान भी हो सके। आम महिला तो ध्यान में सहयोग कर ही नहीं पाएगी। मतलब इससे इष्टदेव नाराज मतलब बिना जागृति के ही रहेगा। बिना जागृति की कुंडलिनी क्रियाशीलता नुकसानदायक भी हो सकती है, क्योंकि वह नियंत्रण से बाहर भी हो सकती है। अनियंत्रित शक्ति सबको जलाएगी ही। जागृति आदमी को शक्ति का असली और पूर्ण रूप दिखाती है। और वह रूप सबसे सुंदर और शक्तिशाली होने पर भी परम शांत होता है। इससे आदमी शांत रहता है, मतलब जागृति के नियंत्रण में रहता है।

यह कथा मुझे शिवपुराण की सबसे सारगर्भित कथा लगी। इस पर कोई जितना चाहे लिख सकता है। ऋषियों ने जो शुरु में पूछा था कि क्या शिवलिंग लिंग होने के कारण ही पूजित है, या कोई अन्य कारण है, इसका उत्तर बहुत सभ्य तरीके से दिया गया है इसमें। यह ऐसा ही है जैसा उत्तर उपरोक्त लेखक ने दिया था। मतलब शिवलिंग सामान्य लौकिक लिंग नहीं है, जैसा कि मूर्ख, दुष्ट, लंपट बदमाश, भौतिकवाद की मोहमाया में उलझे हुए, अति कर्मप्रधान, धर्मविरोधी या सैक्सी किस्म के लोग समझते हैं या बोलते हैं। हैरानी तब होती है जब बहुत से हिंदु भी उनके बहकावे और उकसावे में आ जाते हैं, और वैसा ही समझने लगते हैं। वे सोशल मीडिया आदि पर हर जगह शिवलिंग को शिव के शरीर का अंग समझने पर ही पाबंदी लगा देते हैं, कहने लगते हैं कि यह तो केवल शिव का चिह्न या प्रतीक है, या केवल शिवशक्ति मिलन का प्रतीक है, किसी शारीरिक कर्म आदि का नहीं आदि आदि। वैसे अपनी जगह पर और अध्यात्मवैज्ञानिक सोच के हिसाब वे सही ही कह रहे होते हैं, क्योंकि साधारण सांसारिक वस्तु या अंग जैसी इसमें कोई बात ही नहीं है। उनसे सीखकर बिंग एआई भी ऐसा ही कहता है। इस मामले में अगर विधर्मी लोग अति नीचे गिरते हैं, तो वे तथाकथित हिंदुरक्षक अति ऊपर उठ जाते हैं। व्यावहारिक दुनिया के बीच में अर्थात मध्यमार्ग पर कोई नहीं रहते। अति सर्वत्र वर्जयेत। मध्यमार्ग ही सर्वोत्तम है। इसको एक उदाहरण से समझ सकते हैं। एक ही बंदूक होती है। एक सभ्य आदमी उससे आतंकवादी को मारता है, तो दूसरा सिरफिरा व्यक्ति आम जनता को। इसमें बंदूक का क्या दोष। इसी तरह शिवनियंत्रित शिवलिंग अज्ञानरूपी राक्षस को मारता है, तो इसके विपरीत आमजनप्रयुक्त इसका साधारण रूप ज्ञानरूपी देवता को। एकबार मेरी मुलाकात एक तांत्रिक व्यक्ति से हुई थी, जो मेरे मित्र का मित्र था। उसने कामाक्षी मंदिर में गुरु से दीक्षा ली हुई थी। वह बता रहा था कि उसके सामने एक तांत्रिक ने भीड़ भरी सड़क से गुजर रही आम व अनजानी महिला पर अपनी वशीकरण विद्या चलाई थी, जिससे वह उसके बुलाने पर उसके पीछे आकर उसके साथ कुछ भी करने को तैयार थी। हालांकि वह तो अपनी विद्या का परीक्षण कर रहा था, इसलिए उसने वशीकरण को बंद कर दिया, जिससे वह महिला वापिस अपने रास्ते चली गई। सच्चे तांत्रिक तो कभी गलत काम करते भी नहीं हैं, अगर करते हैं तो सीधे नरक को जाते हैं। बोलने का मतलब है कि उपरोक्त पौराणिक कथा के अन्दर भी कोई ऐसा ही वशीकरण रहस्य छिपा हुआ, क्योंकि पुराने जमाने के लोगों के लिए तो जागृति ही सबसे अहम उपलब्धि हुआ करती थी, जिसके लिए वे सबसे अधिक प्रयास किया करते थे। आजकल तो और भी बहुतेरी विद्याओं और कलाओं का बोलबाला है, जिसके लिए लोग बहुत संघर्ष करते हैं। फिर भी वे पौराणिक विद्याएं अभी भी गुरुपरंपराओं में जीवित हो सकती हैं, जिन्हें यदि राजसहायता मिले तो उन्हें खोजा जा सकता है, और उन्हें भविष्य के लिए संरक्षित किया जा सकता है।

कुंडलिनी ही वह औरोबोरस सांप है जो अपने मुंह में अपनी पूँछ दबाकर यब-युम जैसा लूप बनाता है

श अक्षर दिल का अक्षर है~ श्री बीजमंत्र

दोस्तों, स या श अक्षर इसलिए भी कुंडलिनी प्रभाव को पैदा करता है, क्योंकि नाग की आवाज भी हिसिंग या स जैसी ही होती है। इसी तरह श्री में भी सर्प की सर सर चलने का शब्द भी समाहित है। श व स शब्द से ही श्री शब्द या श्रीं बीजमंत्र बना है, जो देवी का मुख्य बीज मंत्र है। इसमें शं, रं, और ह्रीं तीनों बीजमन्त्रों की सम्मिलित शक्ति होती है। सम्भवतः अंग्रेजी का शी शब्द इसी श्री से बना है। मुझे तो श अक्षर से शक्ति हृदय चक्र को उतरी हुई महसूस होती है। श से ही शंकर और शम्भु शब्द बने हैं। शं का अर्थ ही शांति होता है। पुरुष में भी श अक्षर मुख्य है। मुझे तो श अक्षर भावनाओं का और दिल का अक्षर लगता है। बीजमंत्र का ध्यान करते समय मन के विचारों को रोकना नहीं चाहिए, तभी उनकी शक्ति कुंडलिनी को लगती है। यदि विचारों को बलपूर्वक रोक दिया जाए, तब उनकी शक्ति खत्म हो जाएगी, फिर वो कुंडलिनी को कैसे लग पाएगी।

अंधेरा अल्प अवधि का होता है, जबकि प्रकाश चिर अवधि तक रहता है~ नॉनवेज और ड्रिंक

फिर मैं बता रहा था कि कैसे हिंसक जीव शिकार के समय खूंखार हो जाते हैं। शिकार को मारकर उसे भोजन के तौर पर खाते समय तो शेर आदमखोर भी हो जाता है, जैसा हम बड़े बुजुर्गों से सुना करते थे। दरअसल ननवेज में शक्ति तो होती है पर उसे पचाने के लिए भी बहुत शक्ति लगती है। यह ऐसे ही है जैसे गढ़े हुए पत्थर से बनी इमारत शक्तिशाली या मजबूत तो होती है, पर पत्थर गढ़ने के लिए भी ज्यादा शक्ति लगती है, साथ में गढ़े हुए बड़ेबड़े पत्थरों को इमारत तक ढोने और उन्हें सही जगह पर फिट करने में भी ज्यादा ऊर्जा खर्च होती है। ननवेज आदि का बेवजह उपयोग करने वाले का हाल उस कृपण सेठ की तरह होता है, जो अपना कीमती और दुर्लभ जीवन बेवजह धन सम्पत्ति इकट्ठा करने में बर्बाद कर देता है, पर वह कुछ भी उसके उपयोग में नहीं आती। या कह लो कि यह ऐसे ही है जैसे कोई सिरफिरा व्यक्ति अपना घर बन जाने के बाद भी सारी उमर पत्थर ही गढ़ता रहे। शिकारभोज के समय तेन्दुए की शक्ति पेट को चली जाती है, और मस्तिष्क में शक्ति की कमी से सोचने समझने की शक्ति नहीं रहती, जिससे वह अपने नजदीक हर किसी को उकसावा समझकर उस पर हमला बोल देता है, जवाबी हमले की परवाह किए बगैर। यह अलग बात है कि आदमी का व्यवहार उससे भी गिरा हुआ प्रतीत होता है क्योंकि उसने बिना उकसावे के ही चीते का इतना शिकार किया कि वे देश से विलुप्त ही हो गए, इसीलिए उन्हें पुनः बढ़ावा देने के लिए नामीबिया से आठ चीते विशेष विमान से यहाँ पहुंचा दिए गए हैं। सम्भवतः इसीलिए किसी भोजन करते हुए से मिलने या बात करने से मना किया जाता है। एकबार मैं बचपन में अपनी खाना खाती हुई मुख्याध्यापिका के कक्ष में प्रविष्ट होकर किसी काम के सिलसिले में बात करने लगा। मुझे वे उस समय एक शेरनी की तरह लगीं और मैं एकदम बाहर दौड़ आया। हमेशा के लिए अच्छी सीख भी मिल गई थी। मेरा एक दोस्त था। जिस दिन वह बाजार से ननवेज खाकर या ड्रिंक करके आता था, सीधा बिस्तर में जाकर सो जाता था, और किसीसे भी बात नहीं करता था, अगले दिन तक। सम्भवतः उसे एहसास था कि ऐसे समय में थोड़ी सी कहासुनी से बात बढ़ जाती, क्योंकि मस्तिष्क में शक्ति की कमी से अंधेरा होने से भले-बुरे का भान नहीं रहता। सम्भवतः इस वजह से भी यह धार्मिक मान्यता बनी हो कि ननवेज से मन में अंधेरा छाता है, और पाप लगता है।

रूपान्तरण ही जीव की नियति है जो उसे परम तक ले जाती है~ क्या योग ज़ेलेंस्की और पुतिन की मदद कर सकता है

रूपान्तरण धीरेधीरे होता है। इसे हम ऐसे समझ सकते हैं कि जब दो लोग बहुत वर्षों बाद मिलते हैं, तो आपसी दुश्मनी भूलकर दोस्त बन जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अलगाव के दिनों में उन्होंने बहुत कुछ नया सीख लिया होता है, जिससे पुरानी भावनाएं कमजोर पड़ जाती हैं। यह ऐसे ही है जैसे यदि लिखे हुए ब्लैकबोर्ड पर आप जितना ज्यादा नया लिखेंगे, पुराने लिखे शब्द उतने ही मिटते जाएंगे। रूपान्तरण की यह रफ़्तार योग से इसलिए बहुत तेज हो जाती है क्योंकि इससे मन का कचरा बहुत जल्दी साफ हो जाता है। योग को आप मन रूपी ब्लैकबोर्ड का डस्टर कह सकते हैं। जैसे डस्टर के प्रयोग से पुराना लेख ज्यादा मिटता है, और नया लेख ज्यादा स्पष्ट हो जाता है, उसी तरह योग के प्रभाव से पुरानी भावनाएँ ज्यादा मिटती हैं, और नई स्वस्थ भावनाएँ ज्यादा स्पष्ट हो जाती हैं।

यदि जैलेंस्की और पुतिन अगले जन्म में मिले तो सम्भवतःआपस में दुश्मनी बिल्कुल न रखें, पर यदि एक-दो महीने भी ढंग से योगाभ्यास कर लें, तो सम्भवतः तुरंत ही दुश्मनी भूलकर लड़ना बंद कर दें।

सभी धार्मिक गतिविधियां योग धारणा को बढ़ावा देने के कारण योग की प्राथमिक सीढ़ी की तरह हैं~ जब ध्यान शुरू होता है

जितनी भी धार्मिक गतिविधियां हैं, वे इसी योग धारणा को बनाए रखने के लिए है, जो मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था। इससे स्पष्ट होता है कि सभी धर्म योग विज्ञान के अंतर्गत ही आते हैं। धारणा से ही ध्यान की शुरुआत होती है, और ध्यान से ही समाधि अर्थात कुंडलिनी जागरण की।

धमाके में चेतना का आनंद ढूंढती आधुनिक मानव संस्कृति~ महा विस्फोट (big bang) इतना आध्यात्मिक है

बम का धमाका भी कुंडलिनी जागरण का तुच्छ और पापपूर्ण और अमानवीय विकल्प लगता है मुझे। इसमें वैसी ही प्रकाश, गर्मी, चेतनता और आनंद की अनुभूति होती है, जैसी कुंडलिनी जागरण में, हालांकि उससे बहुत कम और क्षणिक रूप में। समारोह, त्यौहार आदि में चलाए जाने वाले पटाखे इसका अच्छा उदाहरण है। हालांकि यह मानवीय है अगर सीमा में रहे। सम्भवतः इसीलिए कई सिरफिरे चेतना की इसी क्षुद्र झलक की प्राप्ति के लिए युद्धाभ्यास के नाम पर धमाके करने लग जाते हैं। इससे जाहिर होता है कि योग से इस पर लगाम लग सकती है।

गंगास्नान से जो पाप धुलते हैं, वे योग से ही धुलते हैं~ सहस्रार के लिए एक अद्भुत मार्ग

गंगा में स्नान करने से पाप धुलते हैं, ऐसा कहा जाता है। दरअसल ऐसा कुंडलिनी शक्ति के मूलाधार से सहस्रार की तरफ चढ़ने से होता है। कहते हैं कि उन पापों को वहाँ आने वाले ऋषिमुनि ग्रहण कर लेते हैं। इसका मतलब है कि जब मस्तिष्क में शक्ति के पहुंचने से वह बहुत शक्तिशाली हो जाता है, तब उसमें किसी देवता या गुरु का जो चित्र कुंडलिनी चित्र अर्थात ध्यान चित्र के रूप में उभरता है, उसमें उन तपस्वी लोगों का बहुत ज्यादा योगदान होता है। वही कुंडलिनी चित्र पापों को जलाता है, सीधा गंगास्नान नहीं। मतलब कि पापों का नाश गंगास्नान से हो रहे योग से ही होता है। यदि ध्यान चित्र नहीं बनेगा, तब मस्तिष्क की बेकाबू शक्ति अमानवीय कामों या लड़ाईझगड़े की तरफ भी जा सकती है। पुतिन बर्फीले पानी में आराम से नहा लेते हैं, पर कुंडलिनी जागरण के लिए नहीं, लड़ने के लिए। इसलिए योग के साथ ध्यान भी जरूरी है। मैं यह भी बता रहा था कि यदि कमजोरी या ठंड महसूस होए तो ठंडे पानी से नहीं नहाना चाहिए। इसी तरह यदि समय की कमी हो तो भी ठंडे पानी से नहीं नहाना चाहिए। कम से कम आधा घंटा तो चाहिए ही शीतजल स्नान के लिए। नहाते समय बीचबीच में मांसपेशियों की सिकुड़न के साथ कुंडलिनी शक्ति को घुमाते रहना पड़ता है, ताकि उससे गर्मी पैदा होती रहे और ठंड का असर कम होए। स्नान के एकदम बाद योग व व्यायाम कर लेना चाहिए ताकि जल्दी से जल्दी शरीर को पर्याप्त गर्मी मिल सके। शाम के समय अतिरिक्त समय भी ज्यादा होता है, और दिनभर की क्रियाशीलता से गर्मी भी चढ़ी होती है, इसलिए शाम को नहाया जा सकता है।

दिल दा मामला है~ इसे बहुत ठंड से बचाएं

सबसे ज्यादा ठंड का प्रभाव दिल पर पड़ता है। इसलिए दिल पर विशेष रूप से कुंडलिनी चित्र का ध्यान करते रहो, ताकि पूरे शरीर की शक्ति वहाँ विशेष रूप से केंद्रित होती रहे। इससे हृदय क्षेत्र की मांसपेशियों में सिकुड़न होगी जिससे वहाँ गर्मी बढ़ेगी और रक्तसंचार बढ़ेगा। साथ में शक्ति को घुमाते भी रहें माइक्रोकोस्मिक औरबिट में। वैसे भी दिल शरीर के बीच में ही प्रतीत होता है, अगर सभी चक्रौँ को लेकर चलें तो। नाभि चक्र तो तब शरीर के केंद्र में महसूस होता है, जैसा कि कहा भी जाता है, यदि टांगों को भी चक्रौँ के साथ जोड़ा जाए। दिल से ही शक्ति को शक्ति मिलती है, और शक्ति ही दिल को भी शक्ति देती है। हिसाब बराबर। इसीलिए दिल केंद्र में है। जब शीर्ष चक्र को शक्ति चढ़ने से दिल कुछ थक सा जाता है, तब उस शक्ति का कुछ हिस्सा दिल की ओर वापिस मुड़कर उसे भी शक्ति देता है। इससे जुड़ा मैं दो तीन साल पुराना एक वाकया सुनाता हूँ। एकबार मैं किसी समारोह दावत आदि से घर आ रहा था। ठंड का मौसम था। दावतकक्ष में तो गर्मी के सारे इंतजाम थे, जिससे मेरी स्किन की रक्तवाहिनियाँ खुली हुई थीं। पर रात को एक जंगली घाटी से गुजरते हुए मोटरसाइकल पर मुझे बहुत ठंड लगी। ठंड का मौसम शुरु ही हुआ था इसलिए मैंने गर्म कपड़े भी नहीं पहने थे। चलती बाईक पर तो ठंडी हवा के थपेड़े ज्यादा ही लगते हैं। आसपास घर भी

नहीं थे जहाँ रुक जाता। जानवरों से भरा हुआ रात का डरावना जंगल ही था चारों तरफ। तभी मुझे दिल में अजीब सी धड़कनें महसूस हुईं। ऐसा लगा जैसे मेरी छाती का दौड़ता हुआ घोड़ा कभी छलांगें लगा रहा है, और कभी रुक रहा है। कुदरती चेष्टा से मैंने बाइक रोकी और मैं घुटनों को बाजुओं से घेरकर बैठ गया ताकि हृदय को गर्मी और राहत मिल सके। फिर दिल सामान्य हो गया। जैसे ही मैं उठने लगा, वैसे ही मेरा दिल फिर वैसे ही नखरे करने लगा। मैं फिर से दिल को ढक कर बैठ गया। मैंने उसी हालत मैं जेब से फोन निकाला और एक दोस्त को कार लेकर आने को कहा। वो खुद ही मुझे सहारा देकर कार के अंदर ले गए। उन्होंने मेरी बाइक खुद ही सही जगह पर लगा दी क्योंकि मैं कुछ नहीं कर पा रहा था। जैसे ही मैं जरा सा भी अपने को खुला छोड़कर ठंडी हवा के सम्पर्क में आता था वैसे ही दिल वैसी ही हरकत शुरु कर देता था। मैंने अपने आपको ऐसे पैक किया हुआ था कि कम से कम हवा के सम्पर्क में आऊं। उन्होंने कार का हीटर चलाया जिससे मैं एकदम सामान्य हो गया। फिर वो कहने लगे कि डॉक्टर को दिखा लो, चेकअप करा लो आदि। मैंने कहा वह घटना बिमारी से नही, ठंड से थी, इसलिए अल्पकालिक थी, क्योंकि मैं फिर अपने को पहले से भी ज्यादा स्वस्थ महसूस कर रहा था। ठंड के मौसम में लेट नाइट दावतों से बचना चाहिए। उनमें ड्रिंक का प्रयोग तो बिल्कुल भी नहीं करना चाहिए। इससे चमड़ी की रक्तवाहिनियाँ और ज्यादा खुल जाती हैं। इससे दो नुकसान होते हैं। एक तो आदमी को बाहर की ठंड का अहसास ही नहीं होता, क्योंकि चमड़ी में झूठी गर्मी बनी रहती है। दूसरा, इससे शरीर की बहुत सारी गर्मी बाहर निकल जाती है। मेरे मामा के एक प्रोढ़ उम्र के चचेरे भाई को ड्रिंक करने की आदत थी। वे सर्दियों के मौसम में एक सुनसान जैसे रास्ते पर मृत मिले। दरअसल वे ड्रिंक करके देर रात की ठंड में अकेले रास्ते से गुजर रहे थे। वहाँ ठंड लगने से वे गिर पड़े होंगे। नशे की हालत में अपने को गर्मी देने के उनके सारे प्रयास विफल रहे होंगे। देर रात होने की वजह से उन्हें किसी की सहायता भी नहीं मिली होगी।

योग-साँसों से वीर्यशक्ति ऊपर चढ़ती है~ नासिकाग्र (nose tip) टिप ध्यान का आसान तरीका

गहरे और धीमे सांस योगविधि से पेट से लेने से और नाक से आतीजाती हवा पर ध्यान देने से जो योगलाभ मिलता है, वह दरअसल वीर्य शक्ति के मूलाधार और स्वाधिष्ठान चक्रों से ऊपर चढ़ने से ही मिलता है। इसमें सांसों का कोई प्रत्यक्ष योगदान नहीं लगता मुझे। कोई ऑक्सीजन वगैरह का रोल भी नहीं लगता ज्यादा। सम्भोगयोग के समय भी अधिकांशतः इन्हीं सांसों के बल पर ही वीर्यशक्ति के आधोगमन को रोकते हुए उसे ऊपर चढ़ाया जाता है। नाकों से आतीजाती सांसों पर ध्यान देने से नाक या नासिका शिखा पर खुद ही ध्यान चला जाता है, जो शरीर के ठीक बीचोंबीच है। इससे बीच वाली नाड़ी सुषुम्ना के क्रियाशील होने से वीर्यशक्ति के रूपान्तरण से बनने वाली प्राणशक्ति शरीर के बीचोंबीच चारों तरफ ज्यादा अच्छे से घूमने लगती है।

शक्ति को प्रेरित करने वाला चेतन आत्मा ही है और हम सभी औरोबोरस सांप जैसे हैं~ कुंडलिनी शक्ति मूलाधार में क्यों रहती है

योग का जो जलंधर बंध होता है, वह इसलिए लगाया जाता है ताकि मस्तिष्क तक चढ़ी हुई कुंडलिनी शक्ति आगे के चैनल से नीचे उतर सके और इस तरह एक बंद लूप में गोलगोल घूमती हुई सभी चक्रों को एकसाथ शक्ति देती रह सके। ठंडे पानी से नहाते समय सिर खुद ही आगे को नीचे झुक जाता है। इससे स्वाधिष्ठान चक्र का दबाव भी कम हो जाता है। यह ऐसे ही है जैसे एक विशालकाय और अनेक फनों वाला नाग अपनी दुखती पूँछ को मुंह से पकड़ने के लिए आगे को झुक जाता है और उसे अपने केंद्रीय फन से पकड़ने का प्रयास करता है। मिस्र और यूनान का Ouroboros अर्थात औरोबोरस सांप भी इसीको दर्शाता है। लगता तो है कि पुराने समय में गंगास्नान करते हुए जब आध्यात्मिक लोगों को इन स्वयं होने वाली शरीरवैज्ञानिक प्रक्रियायों का बोध हुआ, तो उन्होंने इनके आधार पर कृत्रिम हठयोग का निर्माण कर दिया होगा। वैसे भी शक्ति को मूलाधार में स्थित बताया जाता है। उस शक्ति को दिमाग तक पहुंचाना होता है, क्योंकि मस्तिष्क ही पूरे शरीर और मन का मुखिया है। अगर मस्तिष्क में शक्ति है, तो पूरे तनमन में खुद ही शक्ति रहेगी। औरोबोरस की पूंछ उसके मुंह में होने का मतलब है कि योगी तांत्रिक कुंडलिनी योग से शक्ति को मुलाधार से मस्तिष्क तक पहुंचा रहा है। पर ऐसा भी नहीं है कि मूलाधार के इलावा कहीं शक्ति नहीं है। अगर ऐसा होता तो नपुंसक या बच्चे बिल्कुल शक्तिहीन होते। पर ऐसा नहीं है। सामान्य शक्ति तो उनमें भी होती है। इसका सीधा सा मतलब है कि मूलाधार में अतिरिक्त शक्ति होती है, जो मस्तिष्क को प्राप्त हो सकती है। वही अतिरिक्त शक्ति कुंडलिनी के लिए बहुत जरूरी होती है, क्योंकि सामान्य शक्ति से वह ढंग से क्रियाशील नहीं हो पाती, जागरण तो दूर

की बात है। सम्भवतः कुंडलिनी शक्ति को ही मुलाधार में रहने वाली बताया गया है, सामान्य शक्ति को नहीं। हालांकि अपवाद तो हर जगह है। मूलाधार शक्ति के बिना भी कुंडलिनी जागृत हो सकती है, बेशक विरले मामलों में ही।

यब-युम जैसा यौनक्रीड़ामय आसन ही औरोबोरस सांप है~ सूक्ष्म ब्रह्मांडीय कक्षा (microcosmic orbit) का सबसे आसान तरीका

इसमें वैसे ज्यादा विस्तार से जाने की जरूरत नहीं है, क्योंकि इस पैराग्राफ की हैडिंग से ही बात स्पष्ट है। फिर भी इससे जुड़ा वैज्ञानिक सिद्धांत तो डिस्कस कर ही सकते हैं। क्योंकि सांप की पूँछ पूरा झुकने पर भी काफी नीचे रह जाती है, जिससे वह उसे अपने मुंह में नहीं ले सकता, इसलिए वह सर्वोपयुक्त चीज को अपनी पूँछ से जोड़कर उसे इतना लम्बा करता है, ताकि वह उसके मुंह तक आसानी से पहुंच सके। इससे सांप का ऊर्जा चक्र पूर्ण हो जाता है, जिससे वह आनंद के साथ अतिरिक्त शक्ति प्राप्त करता है। उस रूपकात्मक नर सांप की पूँछ में जोड़ने के लिए सर्वोत्तम चीज क्या हो सकती है, यह सबको ही पता है। मादा सांप के जुड़ने से यिन-यांग भी आपस में जुड़ जाते हैं, इससे अद्वैत और कुंडलिनी अभिव्यक्त होने से और अतिरिक्त आनंद प्राप्त होता है, और आध्यात्मिक विकास भी होता है, जिसका चरम कुंडलिनी जागरण है। हैरतङ्गेज सृष्टि रचने वाले से बढ़कर बुद्धिमान भला कौन हो सकता है। इसका अनुभव के अतिरिक्त एक और प्रमाण है, कई जगह इस सांप को यिन-यांग के रूप में दिखाना। इसके लिए सांप का ऊपर वाला हिस्सा काले और नीचे वाला आधा हिस्सा सफेद रंग का दिखाया जाता है। इससे तो काफी स्पष्ट हो जाता है कि यब-युम को ही ओरोबोरस सांप के रूप में दिखाया गया है, क्योंकि इसी आसन में काला रंग मतलब यिन मतलब स्त्री भाग ऊपर होता है, और श्वेत रंग मतलब यांग मतलब पुरुष भाग निचली साइड होता है। कुछ सांप हकीकत में विरले मामले में अपनी पूँछ को खाते हैं, खासकर तब जब वे बाहरी वातावरण की बहुत ज्यादा गर्मी से और भूख से परेशान होते हैं। हो सकता है कि वे किसी कुशल तांत्रिक की तरह ही मूलाधार से ऊर्जा लेते हों, और उसे गोलगोल घुमाते हों, ताकि शरीर की ऊर्जा की कमी को पूरा कर के स्थिर हो सकें। पर दिमाग़ की कमी से वे मजबूरन पूँछ को निगल ही जाते हैं, और आगे बढ़ते हुए खुद को भी। सम्भवतः सर्प की यह ऊर्जा-ट्रिक भी विभिन्न धर्मों में उसका महत्त्व बनाने में जिम्मेदार हो।

अध्यात्मवैज्ञानिक खोजों और अविष्कारों का युग शुरु हो गया है~ यौन उपकरण ज्यादा बन रहे हैं

लगता है कि अति आदर्शवादी मध्ययुग और आधुनिक युग में उपरोक्त यब-युम जोड़े से यब भाग गायब सा हो गया, और युम ही बचा रहा। उसकी जगह पर साधारण कुंडलिनी योग का प्रचलन बढ़ा, जिसमें यब की कमी को कुंडलिनी को आगे के चक्रौं से नीचे उतार कर किया गया। हालांकि यब के साथ भी कुंडलिनी ऐसे ही उतरती थी, यद्यपि यब से इस प्रक्रिया को बहुत बल मिलता था, और जीवंतता मिलती थी। आदर्शवादी योग में यम के अंदर ही यब को कल्पित कर दिया गया। एक ही व्यक्ति में यब को यम के साथ स्थायी तौर पर जोड़ दिया गया, असरदारी की कीमत पर। फिर यब-युम गठजोड़ का असर बढ़ाने वाले अन्य बहुत से कृत्रिम उपायों का सहारा लिया गया हो, जैसे कि दोनों हाथों को एकसाथ जोड़कर नमस्कार मुद्रा बनाना, ऊर्ध्व-त्रिपुण्ड लगाना, जनेऊ धारण करना आदि। हो सकता है कि वैज्ञानिक इस पोस्ट को पढ़कर इस कमी का फायदा उठाकर यब अर्थात यिन की कृत्रिम डम्मी बना कर बाजार में पेश कर दे। विज्ञान आज व्यवसाय से जुड़ा है, और पैसा कमाने का कोई भी तरीका नहीं छोड़ना चाहता। आज अधिकांश भौतिक खोजें हो चुकी हैं। अधिकांश वैज्ञानिकों के पास अतिरिक्त समय है। वे भौतिक खोजों से ऊब भी चुके हैं, विशेषकर इनके पर्यावरणीय दुष्प्रभावों से तंग आकर। इसीलिए आज अध्यात्मवैज्ञानिक खोजें बहुत हो रही हैं। कोई कुंडलिनी को घुमाने वाली मशीन बना रहा है, तो कोई मूलाधार की संवेदना बढ़ाने वाले विशेष और यौन प्रकार के यंत्र या औजार बना रहा है।

हरेक व्यक्ति के अंदर पुरुष और स्त्री दोनों भाग समाहित हैं~ चार बराबर हिस्सों से एक पूरा शरीर बनता है

दरअसल हम सब यब-युम जोड़े के रूप में ही हैं, पर उसे भूल चुके हैं। उसे याद दिलाने के लिए ही पुरुष और स्त्री की अलगअलग रचना हुई है। पुरुष स्त्री का आलिंगन करना चाहता है, अपने शरीर के यब हिस्से को जगाने के लिए। उसके शरीर का केवल युम हिस्सा ही क्रियाशील होता है। हमारे शरीर का पीठ वाला भाग युम है। वह युम या पुरुष भाग वज्र नाड़ी से शुरु होकर, सुषुम्ना के रूप में मेरुदण्ड से होता हुआ सहस्रार चक्र पर समाप्त होता है। यब या स्त्री

भाग भी वज्र नाड़ी को घेरने वाली लिंग संरचना से शुरु होकर शरीर के आगे के चक्रों से ऊपर होता हुआ सहसरार चक्र पर खत्म होता है। पुरुष और स्त्री भाग वज्र शिखा पर, जिसे प्रकारान्तर से मूलाधार चक्र भी कह सकते हैं, और सहस्रार चक्र पर पूरी तरह से आपस में जुड़े होते हैं, यह मान के चल सकते हैं। बाकि चक्रों पर भी ये आपस में जुड़ने की कोशिश करते हैं। चित्रों में भी ऐसा ही दिखाया जाता है। वहाँ आगे और पीछे के चक्र आपस में एक रेखा से जुड़े दिखाए जाते हैं। चित्रों में तो शरीर के बाएं और दाएं भाग में इड़ा और पिंगला दिखाए जाते हैं। ये भी सही है। इड़ा यब है, और पिंगला युम है। सुषुम्ना मेरुदण्ड के बीच में है। पर सम्भोग योग से तो शक्ति सीधी ही सुषुम्ना से होते हुए सहस्रार में ली जाती है। मेरे को लगता है कि इड़ा और पिंगला वाले टोटके तो साधारण किस्म के योगों में होते हैं। तांत्रिक सम्भोग योग तो शोर्टेस्ट रूट है, क्योंकि इसमें इड़ा और पिंगला आती ही नहीं, शक्ति सीधी सहस्रार में पहुंच जाती है। कमजोरी की अवस्था में कई बार इड़ा और पिंगला की वजह से व्यवधान आ तो सकता है, पर वह हल्का होता है, और आसानी से काबू में आ जाता है। इसीलिए तो सम्भोग के प्रति दुनिया में सबसे ज्यादा आकर्षण दिखाई देता है। पर आम आदमी इसकी अध्यात्मवैज्ञानिकता को समझ नहीं पाता। वह इसीमें उलझा रहकर अपना जीवन समाप्त कर लेता है। पर योगी इससे योग-लाभ उठाकर अपने शरीर में ही यब-युम को पूरी तरह से अभिव्यक्त करके उभयलिंगी अर्थात अर्धनारीश्वर बन जाते हैं, और पृथक स्त्री अर्थात यब के आकर्षण के बंधन से मुक्त हो जाते हैं। इसका यह मतलब नहीं कि वे फिर सम्भोग योग नहीं करते। वे करते हैं, पर उन्हें इसकी कम जरूरत पड़ती है। उससे वे अपने स्वसम्भोग योग अर्थात एकलिंगी सम्भोग योग को बल देते रहते हैं। कई तो इतने अभ्यस्त, कार्यकुशल और निपुण हो जाते हैं कि वे कभी भी मूलाधार स्थित वीर्यशक्ति को नहीं गिराते, और हमेशा उसे ऊपर चढ़ाकर अपने शरीर में आत्मसात कर लेते हैं। उपरोक्त चर्चा से यह बात तो स्पष्ट हो ही जाती है कि जैसे शरीर का बायां और दायां भाग यब और युम है, उसी तरह से शरीर का आगे और पीछे का भाग भी यब और युम ही है। मतलब कि पूरा शरीर चारों तरफ से दो विपरीत टुकड़ों को जोड़कर बना है। सम्भवतः त्रिआयामी स्वस्तिक चिह्न का यही मतलब हो। सम्भवतः शक्ति को स्त्री के रूप में इसीलिए दिखाया जाता है, क्योंकि शरीर का आगे का भाग जो स्त्रीरूप है, वही आकर्षक है, और उसीकी शक्ति इकट्ठी होकर और नीचे जाकर मूलाधार क्षेत्र में स्थित हो जाती है, जहाँ से वह पीठ से होते हुए ऊपर चढ़ने का प्रयास करती है।

शीतजल स्नान से यबयुम जनित कुंडलिनी लाभ कैसे मिलता है~ मांस शरीर तंत्रिका शरीर पर मढ़ा हुआ

जब पूरे शरीर पर ठंडा जल गिरता है, तो उसकी संवेदना नाड़ियों के द्वारा ग्रहण कर ली जाती है, क्योंकि पूरे शरीर में नाड़ियों का जाल है। इससे नरम बाहरी शरीर और सख्त आंतरिक शरीर आपस में जुड़ जाते हैं, मतलब यब और युम एक हो जाते हैं। इससे अद्वैत भाव और उससे कुंडलिनी शक्ति क्रियाशील हो जाती है, कुंडलिनी चित्र के साथ। प्रत्येक संवेदना समान प्रभाव डालती है, इसलिए किसी भी दर्द की अनुभूति के बाद अद्वैत के साथ आनंद की अनुभूति होती है।

प्रकृति स्त्री-रूप है और आत्मा पुरुष-रूप है~ दो महत्वपूर्ण कोष या शरीर

नाड़ी संरचना पुरुष है और उस पर मृदु व सुंदर पेशीय संरचना नारी है। बेसिक नर्वस स्ट्रक्चर सेंसिटिव लाइफ पाने के लिए सॉफ्ट बाहरी स्ट्रक्चर को आकर्षित करता है। अंत में, आत्मा ही पुरुष है क्योंकि यही तंत्रिका तंत्र की सभी संवेदनाओं का आनंद लेती है। सारा दृश्यमय जगत स्त्री या प्रकृति रूप है, क्योंकि यह पुरुष को संवेदना प्रदान करता है। सांख्य दर्शन में भी ऐसा ही कहा गया है। इसमें प्रकृति को भोग्या और पुरुष को भोक्ता कहा गया है। क्यों न इन दो मुख्य आवरणों को ही दो मुख्य कोष न मान लें, जटिल पांच कोशों के विपरीत।

हिंदू स्वस्तिक चिह्न का अध्यात्मवैज्ञानिक रहस्य~ स्वस्तिक का केंद्रीय बिंदु एक पूर्ण और संतुलित इंसान का प्रतिनिधित्व करता है

त्रिआयामी स्वस्तिक चिह्न में आगे की तरफ की छोटी डंडी यम है, और पीछे की तरफ की छोटी डंडी यब है। दोनों डंडियां सीधी खड़ी लम्बी डंडी से जुड़ी हैं, मतलब यब और युम एक होकर बढ़ी हुई जागृति का निर्माण कर रहे हैं। इसी तरह दो छोटी डांडियां शरीर के बाएं भाग के यब और शरीर के दाएं भाग के युम को दर्शाती हैं, क्योंकि वे दोनों इसी दिशा में थोड़ी लम्बी व तिरछी डंडी से आपस में जुड़ी हैं। यह भी बढ़ी हुई जागृति दिखाती है। फिर खड़ी और

तिरछी दोनों लम्बी डंडीयां केंद्र में एक बिंदु पर आपस में जुड़ी हैं। इसको दोनों तरफ के यब-युम जोड़ों की बराबर शक्ति मिल रही है, इसलिए यह बिंदु सबसे शक्तिशाली है। इसका मतलब है कि अपने शरीर के अंदर के दाएं-बाएं भाग के यब-युम को संतुलित करने के साथ ही स्त्री-पुरुष जोड़े वाला अर्थात शरीर के आगे-पीछे के भागों वाला यब-युम भी संतुलित होना चाहिए। और दोनों किस्म के यब-युम जोड़े भी आपस में संतुलित होने चाहिए। यह अलग बात है कि क्या कोई अपने शरीर के अंदर ही स्त्री-पुरुष जोड़ा ढूंढ लेता है, तो कोई बाहर से किसी यौन साथी की सहायता लेता है।

पुरुष के लिए स्त्री स्त्री है और स्त्री के लिए पुरुष स्त्री है~ यौन भेदभाव भ्रमपूर्ण और सापेक्ष है, सत्य और निरपेक्ष नहीं है

दरअसल स्त्री का अस्तित्व ही नहीं है। हर जगह पुरुष ही पुरुष है। स्त्री हमें भ्रम से दिखाई देती है। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि सम्भोग योग के समय स्त्री भी अपनी रज शक्ति को इसी तरह अपनी पीठ से ऊपर खींचती है जिस तरह पुरुष वीर्य शक्ति को अपनी पीठ से ऊपर खींचता है। मेरुदण्ड ही दरअसल पुरुष है, जो पुरुष और स्त्री में एकसमान है। इसी तरह आत्मा ही पुरुष है जो दोनों में एकसमान है। इसी तरह शरीर का अगला हिस्सा ही स्त्री है, और वह भी दोनों में एकसमान है। जो स्त्री सम्भोग योग के लिए पहल करती है, वह पुरुष की तरह लगती है। ऐसा इसलिए क्योंकि वह यौन योग से अपनी मूलाधारनिवासिनी शक्ति को ऊपर खींचना चाहती है। जो पुरुष सम्भोग योग से शर्माए, वह स्त्री की तरह प्रतीत होता है। वह इसलिए क्योंकि वह इसलिए सम्भोग योग से दूर भाग रहा है, क्योंकि वह शक्ति को ऊपर नहीं खींच पाएगा, और उसे नीचे की ओर गिरा देगा, शरीर के स्त्रीरूप अगले भाग की तरह। इसलिए स्त्री को स्त्रीरूप समझना मुझे ऐतिहासिक साजिश लगती है, जिसके अनुसार स्त्री अपनी शक्ति गिराती रहे, और पुरुष अपनी शक्ति उठाता रहे। पर तंत्र में ऐसा नहीं है। तंत्र में अपनी शक्ति उठाने का दोनों को समान अधिकार है। इसीलिए तंत्र में स्त्री पुरुष दोनों बराबर हैं। हालांकि यह अलग मामला है कि पुरुष को यौन शक्ति के संरक्षण की ज्यादा आवश्यकता है, क्योंकि तुलनात्मक रूप में उससे स्त्री साथी से कहीं ज्यादा शक्ति की बर्बादी होती है।

स्त्रीपुरुष का जोड़ा जितना बराबर उतना अच्छा, हालांकि बेमेल जोड़ यिन-यांग गठबंधन को बढ़ावा देते हैं

मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि एकसमान कद-काठी होने से पूरे शरीर में व्याप्त यिन और यांग आपस में ज्यादा अच्छे से घुलमिल जाते हैं, जिससे ज्यादा अच्छा अद्वैत भाव पैदा होता है। इससे ज्यादा कुंडलिनी लाभ मिलता है। वैसे तो पुरुष और स्त्री दोनों अपने एक ही शरीर में होते हैं, पर उसे पाने के लिए बाहर से मदद लेनी ही पड़ती है। देखा जाए तो यौन शक्ति के आध्यात्मिक रूपान्तरण के लिए दो-चार इंच का क्षेत्र ही काफी होता है, पर यिन-यांग के गठजोड़ के लिए तो भरापूरा और विपरीतता के साथ मिलताजुलता शरीर चाहिए होता है। इससे अतिरिक्त लाभ मिलता है। लगता है कि पुराने जमाने में इसपर ज्यादा गौर नहीं किया जाता था, इसीलिए विवाह से पहले शरीर मिलाने की बजाय नवग्रह-जन्मपत्री मिलाई जाती थी। पता नहीं इसमें क्या विज्ञान है कि प्रत्यक्ष को नजरन्दाज करके अनुमान पर भरोसा किया जाए। सम्भवतः यह नियम सामाजिक समरसता बनाए रखने के लिए भी था, ताकि सभी मर्द चंद खूबसूरत औरतों पर ही न टूट पड़ते, और कुरूप औरतें अविवाहित ही न रह जातीं या उन्हें निम्न दर्जे के मर्द से ही संतुष्ट न होना पड़ता। दरअसल व्यवहार में होता क्या है कि यदि यिन-यांग अच्छे से मैच हो जाए, तो कदकाठी मैच नहीं करते, और यदि कदकाठी अच्छे से मैच हो जाए, तो यिनयांग अच्छे से मैच नहीं होते। इसलिए समझौता करना पड़ता है। यदि दोनों गुण सर्वोत्तम रीति से मैच हो जाए, तो सर्वोत्तम जोड़ी मानी जाए। मेरे साथ भी ऐसा ही होता था। यिनयांग बहुत जबरदस्त ढंग से मैच होता था, पर कदकाठी जरा भी मैच नहीं होते थे। अंततः जन्मपत्री के ऊपर ही सभी कुछ छोड़ना पड़ा। इससे सब ठीक ही रहा। बोलने का मतलब है कि यदि प्रत्यक्ष से काम न बने, तभी पूरी तरह से अदृश्य के सहारे होना चाहिए। वैसे कुल मिलाकर यह निष्कर्ष भी निकलता है कि छोटी कद-काठी यिन है, और बड़ी कद-काठी यांग होता है। इसलिए लम्बू-छोटू जोड़ी बनना भी स्वाभाविक और योगानुसार ही है।

चाइनीज यिन सुस्त और यांग चुस्त है, जबकि तांत्रिक यिन चुस्त और यांग सुस्त है~ दो प्रकार के यौन तंत्र

इसका मतलब है कि चाइनीज सिस्टम में विषमवाही तंत्र को ज्यादा मान्यता है, जबकि भारतीय तंत्र में समवाही तंत्र को। विषमवाही तंत्र मतलब औरत को एक तांत्रिक मशीन समझा जाता है। उसकी इससे ज्यादा अपनी कोई अहमियत नहीं। इसलिए वह सुस्त और दबी हुई सी रहती है। उसकी सहायता से प्रकाश अर्थात कुंडलिनी को घुमाया जाता है। उस कुंडलिनी के रूप में कोई भी मानसिक चित्र हो सकता है, पर वह स्त्री नहीं। इसके विपरीत समवाही तंत्र में स्त्री को कुंडलिनी अर्थात देवी का रूप दिया जाता है। इससे वह अपनी मनमोहक छटाएं प्रदर्शित करती है। इससे स्त्री को भरपूर सम्मान मिलता है। उसे पुरुष के बराबर या उससे भी बढ़कर माना जाता है। आपने देखा होगा कि कैसे भगवान विष्णु देवी लक्ष्मी की, भगवान शिव देवी पार्वती की और भगवान ब्रह्मा देवी सरस्वती की सेवा में लगे रहते हैं। बाकि अपवाद तो हर सिस्टम में ही देखे जाते हैं।

क्या हम स्वाधिष्ठान चक्र के जागरण को बिमारी तो नहीं मान रहे? प्रोस्टेट संभोग शिश्न संभोग से बेहतर है

यहाँ पर बेनाइन प्रॉस्टेट हाइपरट्रॉफी मतलब बीएचपी या प्रॉस्टेट की जलन अर्थात इन्फलेमेशन का जिक्र हो रहा है। परमात्मा शिव ने पूर्वोक्त कार्तिकेय जन्म की कथा में कबूतर बने अग्निदेव को कहा था कि तेरी जलन ठंडे जल से स्नान करने वाली ऋषिपत्नियां हर लेंगी। उस जलन को ही विज्ञान की भाषा में प्रॉस्टेट इंफ्लेमेशन अर्थात प्रॉस्टेटाइटिस या बीएचपी नामक रोग कहते हैं। कहीं यही स्वाधिष्ठान चक्र का जागरण तो नहीं, जिसे शीतजल स्नान से व कुंडलिनी योग से ठीक किया जा सकता हो। वैसे स्वास्थ्य विशेषज्ञ भी मान रहे हैं कि ज्यादातर प्रॉस्टेट प्रॉब्लम चिंता या अवसाद से होती है, जिसे दूर करने के लिए योग एक रामबाण उपाय है। बात कुल मिलाकर वही है। ठंडे जल के स्पर्ष से वह जलन दूसरे चक्रौं पर चली जाती है, मतलब वे जागृत हो जाते हैं। इसमें सबसे ज्यादा सम्भावना मणिपुर चक्र के जागृत होने की होती है, क्योंकि चक्र क्रमवार ही जागृत होते हैं। पर ऐसा भी नहीं हमेशा। यह जलन सीधी विशुद्धि चक्र और अनाहत चक्र को भी जा सकती है। उक्त कथा के अनुसार महादेव एक हजार वर्षों तक देवी पार्वती के साथ एक गुफा में विहार करते रहे, और अंततः उनका मूलाधार चक्र और फिर स्वाधिष्ठान चक्र जागृत हो गया। जब स्वाधिष्ठान चक्र जागृत हुआ, तब वे गुफा से बाहर आए मतलब आध्यात्मिक कामक्रीड़ा से विरत हुए। मेरे बोलने का मतलब है कि स्वाधिष्ठान चक्र के जागरण के रूप में जो कुदरत का तोहफा मिलता है, लोग उसे दूर करने के लिए इलाज करवाने भागते हों या उससे परेशान होते हैं, जबकि उसकी ऊर्जा अन्य चक्रौं को देकर कुंडलिनी लाभ भी मिलता हो, और वह शांत भी रहता हो। ये मैं इसलिए भी कह रहा हूँ क्योंकि आजकल प्रॉस्टेट की उत्तेजना या जलन से प्राप्त प्रॉस्टेट आर्गेस्म प्राप्त करने की होड़ सी लगी है। बहुत से यंत्र और तकनीकें विकसित हो रही हैं इसके लिए। अनुभवी लोग बताते हैं कि पेनाइल आर्गेस्म के विपरीत प्रॉस्टेट आर्गेस्म बहुत ज्यादा चिरस्थायी होता है, और आनंद भी ज़्यादा देता है। पेनाईल आर्गेस्म तो स्खलन के कुछ क्षणों तक ही मौजूद रहता है। इसमें वाकई अध्यात्मवैज्ञानिक शोध की जरूरत है।

यौन संयम क्यों न अपनाया जाए~ वामपंथी और दक्षिणपंथी जीवन शैली के बीच एक स्वस्थ संतुलन

जैसा कि शिवपुराण में रहस्यात्मक रूप में कहा गया है कि वीर्यपात-अवरोधी सम्भोग से प्रॉस्टेट में स्थायी जलन अर्थात इन्फलेमेशन हो सकती है, हालांकि उसे दूर करने का उपाय भी बताया गया है, तब क्यों न यह मान लिया जाए कि वैष्णवों का दक्षिणाचार ही अच्छा है। या कम से कम यह मान लो कि मध्यमार्ग अच्छा है, जिसमें पुरुष-स्त्री के बीच में असीम सात्विक प्रेम होता है, पर शारीरिक संबंध नहीं होता। इससे यब-युम लाभ मिलने से कुंडलिनी भी घूमेगी, और स्वास्थ्य समस्या भी पैदा नहीं होगी। मतलब हर तरफ लाभ ही लाभ। तो मेरा मानना है कि विवाह न होने तक ऐसा ही परहेज रखना चाहिए। इससे स्वस्थ सामाजिकता भी बनी रहेगी और कुंडलिनी भी बनी रहेगी। विवाह के बाद तो प्रेम के साथ ज्यादा संयम रखना मुश्किल हो जाता है। साथ में, मुझे यह भी लगता है कि कुंडलिनी जागरण को प्राप्त करने के लिए बहुत शक्ति की जरूरत होती है, इसलिए भगवान शिव की तरह अविरत सम्भोग योग जरूरी है। जब एक-दो महीने के भीतर जागरण हो जाए, तो स्वास्थ्य सुरक्षा को देखते हुए सम्भोग कम कर दे। यदि जागरण न होए, तो भी 1-2 महीने ही प्रयास करे, क्योंकि इसका मतलब है कि व्यक्ति जागरण के लिए परिपक्व नहीं है, और अतिरिक्त प्रयास अधिकांशतः विफल ही जाएगा, व स्वास्थ्य समस्याएं भी पैदा करेगा। फिर कुछ वर्षों तक साधारण तांत्रिक कुंडलिनी योग का अभ्यास करते हुए जागरण के लिए पात्र बनाने वाला लाइफस्टाइल अपनाए, और उचित समय और अवसर और एकांत मिलने पर जैसे कि शांति, तनाव व काम के बोझ में कमी महसूस होने पर और

शक्ति का अहसास होने पर फिर 1-2 महीने के लिए अविरत व समर्पित सम्भोग योग करे। इस तरह करता रहे। या दूसरा तरीका यह अपनाए कि भगवान शिव की तरह सर्व-आनंदमयी सम्भोग योग में सालों तक अर्थात तब तक दिनरात इच्छानुसार लगा रहे, जब तक कि प्रॉस्टेट में जलन न होने लगे अर्थात जब तक स्वाधिष्ठान चक्र जागृत न हो जाए, और उससे खुद ही सम्भोग से मन न ऊबने लगे। उस अवस्था के बाद आदमी उभयलिंगी सा बनकर अपने साथ ही संभोग योग करने लगता है। कामकाज के बोझ से उसके आगे के स्वाधिष्ठान चक्र पर जलन के रूप में शक्ति इकठ्ठा होती रहती है, जिसे वह योग व शीतजल स्नान की सहायता से पीठ से ऊपर चढ़ाता रहता है। यह चक्र चलता रहता है। इससे वह अंततः धीरेधीरे क्रमवार चक्रौँ को जागृत करते हुए सहस्रार को जागृत करके पूर्ण जागृति प्राप्त कर लेता है, उपरोक्त प्रथम उपाय की तरह एक-दो महीने के ताबड़तोड़ सम्भोग योग से एकदम से जागृति प्राप्त नहीं करता। इस पर भी मनोवैज्ञानिक शोध की जरूरत है।

शक्ति का प्रवाह नाड़ियों के माध्यम से होता है, जिसे विज्ञान की भाषा में नर्व कहते हैं~ कैसे शिव तक पहुँचती है शक्ति

कोई भी काम शक्ति से ही होता है। यदि सड़क पर गाड़ी चल रही है तो कहेंगे कि इंजन शक्ति से गाड़ी चली। अगर टांगा चल रहा है तो कहेंगे कि यह अश्व शक्ति से या संक्षेप में शक्ति से चल रहा है। शक्ति का भी कोई प्रेरक जरूर होता है। इंजन शक्ति और अश्व शक्ति, दोनों का प्रेरक ईंधन या अग्नि है। हमारा शरीर भी नाड़ी शक्ति या सिर्फ शक्ति से चलता है। यदि नाड़ी शक्ति न हो, तो हट्टाकट्टा शरीर भी किसी काम का नहीं है। आपने देखा होगा कि पक्षाघात के बाद कैसे बाजू या टांग काम करना बंद कर देती है। वैज्ञानिक रूप से शक्ति या नाड़ी शक्ति नर्व फाइबर्स की क्रियात्मक उत्तेजना के रूप में ही होती है। शरीर की इसी नाड़ी शक्ति को ही संक्षेप में शक्ति कहते हैं। क्या आपने कभी सोचा कि इस शक्ति को प्रेरित करने वाली क्या चीज है? दार्शनिकों ने ऐसा सोचा भी और लिखा भी, जो धर्मशास्त्रों में पढ़ने को मिल जाता है। इंजन की गति रूपी नाड़ी शक्ति को भोजन रूपी ईंधन के सहयोग से प्रेरित करने वाला तत्त्व अग्नि-चिंगारी रूपी चेतन आत्मा ही है। मूलाधार में जो आनंदपूर्ण संवेदना महसूस होती है, वही इस शक्ति को प्रेरित करती है। अर्थात यह सबसे बड़ी मात्रा वाली शक्ति को प्रेरित करती है, जिसे हम कुंडलिनी शक्ति कहते हैं। जब इसे प्राण वायु का विशेष बल भी साथ में मिले, तब इसे ही प्राण शक्ति भी कहते हैं। वैसे तो हर प्रकार का चेतन अनुभव हमारी शक्ति को प्रेरित करता रहता है, जिससे हम जीवित बने रहते हैं, पर क्योंकि मूलाधार की अनुभूति सबसे अधिक आनंददायक और चेतना से भरी है, इसीलिए इसे ही शक्ति या कुंडलिनी शक्ति या प्राण शक्ति का स्रोत कहा जाता है। मुझे आज यह बात समझ में आई कि शास्त्रों में ऐसा क्यों कहा गया है कि परमात्मा अर्थात चेतना ही शक्ति का मूल स्रोत है। शास्त्रों में वैज्ञानिक रूप से ज्यादा विस्तार नहीं लगता मुझे तथ्यों का, सम्भवतः इसीलिए क्योंकि पुराने युग में तथ्य विश्वास के आधार पर समझे या माने जाते थे, वैज्ञानिक जाँचपड़ताल के आधार पर नहीं। चेतना के इसी शक्तिप्रेरक योगदान के कारण ही डोपामीन अर्थात रिवार्ड कैमिकल काम करता है। जो चढ़दी कला में होते हैं, उनके आगे सफलता के द्वार एक के बाद एक खुलते जाते हैं। पर कई बार ज्यादा ही चढ़दी कला से उच्च रक्तचाप और तनाव आदि से संबंधित समस्याएं भी पैदा हो जाती हैं। यह ऐसे ही होता है जैसे बिजली की जरूरत से ज्यादा वोल्टेज से बल्ब ही फ्यूज हो जाता है। मूलाधार की संवेदना पर पैदा हुई शक्ति तो चढ़ेगी ही चक्र तक, क्योंकि उसके साथ चक्र पर चेतन कुंडलिनी का ध्यान किया जा रहा होता है। जिस रास्ते से शक्ति गुजरती है, उसे नाड़ी या चैनल कहते हैं। चक्र पर वह शक्ति ज्यादा प्रभाव पैदा करती है, क्योंकि वहाँ जड़ जैसी संवेदना के साथ चेतन कुंडलिनी चित्र का भी ध्यान होता है। इसीलिए कहते हैं कि शक्ति शिव की ओर गमन करती है। कई लोग कुंडलिनी योग से तृप्त नहीं होते। इसकी मुख्य वजह है कि उनके मूलाधार पर शक्ति ही पैदा नहीं हुई होती है। मूलाधार को हम शक्ति उत्पादक यंत्र कह सकते हैं। वे चक्रौँ पर कुंडलिनी चित्र का ध्यान भी करते हैं, पर फिर भी प्यासे से बने रहते हैं। शक्ति की प्यास को तो मूलाधार ही बुझा सकता है। प्रजनन से सृष्टि के विस्तार के लिए ही मूलाधार को विशेष शक्ति दी गई है। होता तो सब नर्व फाइबर से ही। मतलब कि मूलाधार में यह उत्तम गुणवत्ता का है। यह तो मुर्गी और अंडे के जैसी कहानी है। पहले मूलाधार में नर्व फाइबर की उत्तेजना से शक्ति पैदा होती है, फिर वह शक्ति मेरुदण्ड से होकर मस्तिष्क तक जाती है, और उससे मस्तिष्क में आनंदमयी संवेदना महसूस होती है, फिर वह आनंदमयी संवेदना भी नर्व फाइबरस को उत्तेजित करती है, जिससे और शक्ति पैदा होती है। मस्तिष्क से वह शक्ति नाड़ीजालों के माध्यम से पूरे शरीर में और मूलाधार तक फैल जाती है। मतलब शक्ति एक बंद लूप जैसा बनाती है। शक्ति का लूप में घूमना ही माईक्रोकोस्मिक

औरबिट के आधार में है। यही बंद लूप ही औरोबोरस सांप है। चिकित्सा विज्ञान की भाषा में इसे रिफ़लेक्स आर्क कहते हैं। यदि उस समय हम किसी विशेष चक्र पर कुंडलिनी चित्र का ध्यान करें, तो शरीर के अन्य हिस्सों की अपेक्षा शक्ति उसी चक्र पर ज्यादा पहुंचती है, जिससे वहाँ कुंडलिनी चित्र और अधिक चमकने लगता है। मतलब कि शक्ति मानसिक चित्र को ज्यादा से ज्यादा चमकाने की कोशिश करती है, ताकि वह जागृत होकर शिव बन सके। यही शक्ति का शिव की तरफ गमन है। कुंडलिनी चित्र का मतलब किसी के ऊपर प्रेम न्योछावर करना नहीं है, बल्कि उसकी मदद से शक्ति को काबू करना है। कहीं ज़ख्म वगैरह हो जाए तो वहाँ दर्द और लाली पैदा हो जाती है। दर्द वह चेतन संवेदना है जो लाल रंग की शक्ति को अपनी ओर खींचती है। फिर कहेंगे कि जिन अंगों की दर्द महसूस नहीं होती, वहाँ शक्ति कैसे पहुंचती है और उनकी हीलिंग कैसे होती है। इसमें चेतना द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से काम होता है। जब दर्द वाले हिस्से से नाड़ी ऊर्जा मस्तिष्क को पहुंचती है, तो मस्तिष्क के अनुभव न होने वाले हिस्से में संवेदना पैदा करती है। इससे वहाँ बहुत सी नाड़ी ऊर्जा और उससे जुड़े रसायनों की खपत हो जाती है। इससे मस्तिष्क के चेतन अनुभव पैदा करने वाले हिस्से में नाड़ी ऊर्जा की कमी हो जाती है। इससे आदमी आनंदहीन सा रहने लगता है। इसलिए चेतना के आनंद को पैदा करने के लिए यही रास्ता बचता है कि शरीर की गहराई में दबे ज़ख्म को जल्दी से जल्दी भरा जाए। इसके लिए नाड़ी ऊर्जा उस ज़ख्म पर केंद्रित होने लगती है। दरअसल रक्त प्रवाह के आधार में यही नाड़ी ऊर्जा होती है। रक्त प्रवाह अगर गाड़ी है, तो उसे नियंत्रित करने वाली नाड़ी ऊर्जा उसका चालक है। चेतन आत्मा को आप स्टेशन मास्टर कह सकते हैं। जब हम नाड़ी ऊर्जा को मूलाधार से मेरुदण्ड के रास्ते ऊपर चूसते हैं, तब रक्त प्रवाह भी खुद ही ऊपर चला जाता है। इससे ही मूलाधार के आसपास का दबाव घटा हुआ महसूस होता है। रक्त तो मेरुदण्ड से ऊपर नहीं चढ़ सकता, क्योंकि उसमें नर्व फाइबर की एक रस्सी है, कोई रक्त की नलिका नहीं है। इसलिए कुंडलिनी योग का साधारण सा सिद्धांत है कि गाड़ी चालक को नियंत्रित करो, गाड़ी खुद नियंत्रित हो जाएगी।

नाड़ियों का जाल ही शिव पर लिपटे सर्प हैं~ नागों से भरा मानव शरीर

भगवान शिव पर लिपटे सर्प आदि को देखकर पार्वती की मां मैना डर गई थीं। दरअसल शिव एक महा योगी थे। उनके शरीर की हरेक नाड़ी जागृत थी, केवल सुषुम्ना ही नहीं। इससे वे हरेक नाड़ी में सरसराहट के साथ कुंडलिनी को महसूस करते रहते थे हमेशा। स्वाभाविक है कि उन सरसराहटों को अनुभव करते हुए उनके अंगों का स्वभाव व उनकी चाल भी सर्प की तरह हो गई हो, जिसे मैना महसूस कर पा रही हो। शायद योगी गोपीकृष्ण के साथ भी ऐसा ही होता था। उन्हें अपने शरीर की हरेक नाड़ी की गति महसूस होती थी। इससे वे परेशान भी हो गए थे। फिर वे उसके अनुसार ढल भी गए थे। इसी पर आधारित सुंदर रचना है शिवपुराण में, त्रिपुरासुर वध की, जो मैं निचले पैराग्राफ में लिख रहा हूँ, संक्षेप में।

त्रिपुरासुर राक्षस प्रकृति के तीन गुण हैं, और कुंडलिनी जागरण ही उनको मारना है~ एक शिव पुराण कथा का रहस्योद्घाटन

एक राक्षस का पुर सोने का, एक का चांदी का और एक का लोहे का था। ये क्रमशः सत्त्व, रजस और तमो गुण के प्रतीक हैं। राक्षस मतलब इन गुणों के साथ उठने वाली आसक्तिपूर्ण भावनाएँ। इनको मारने के लिए शिव मतलब आत्मा ने शरीर रूपी रथ बनाया, मंन्द्राचल मतलब मेरुदण्ड को धनुष बनाया, और वासुकि नाग मतलब सुषुम्ना नाड़ी को बाण बनाया। राक्षसों से युद्ध किया मतलब मूलाधार से कुंडलिनी शक्ति को योगसाधना से सुषुम्ना के रास्ते ऊपर चढ़ाया और उसे सहस्रार में जागृत किया। उससे प्रकृति के तीनों गुणों के प्रति सारी आसक्ति खत्म हो गई मतलब त्रिपुरारि राक्षस मर गए। इससे शरीर में बसने वाले देवता खुश हो गए क्योंकि वे शरीर के बंधन से मुक्त हो गए। कभी समय लगा तो इस पर और प्रकाश डालूंगा, पर मूल चीज यही है।

उज्जैन का महाकाल ज्योतिर्लिङ्ग

उज्जैन में महाकाल मंदिर में यह त्रिपुरासुर वाली घटना घटी थी, ऐसा कहते हैं। इसीलिए अभी हाल ही में निर्मित भव्य महाकाल कोरिडोर में इसको दर्शाती मूर्तियां और कलाकृतियाँ प्रमुखता से सबसे मुख्य स्थान पर लगाई गई हैं। त्रिपुरासुरों को मारने के कारण ही महादेव शिव को त्रिपुरारि भी कहते हैं।

शक्ति का गमन बिना सीधी नाड़ी के भी होता है~ मन एक विद्युत चुम्बकीय तरंग के रूप में और कुंडलिनी छवि एक इलेक्ट्रॉन के रूप में तंत्रिका रूपी विद्युत तार में यात्रा करती है

वैसे शक्ति का गमन बिना सीधी नाड़ी के भी होता है, हालांकि लगता है कि पीठ की सुषुमना नाड़ी से ही सबसे ज्यादा शक्ति का गमन होता है, जिससे कुंडलिनी जागरण होता है। शरीर के आगे के भाग के चैनल में तो पीठ की तरह सीधी नाड़ी होती ही नहीं। वहाँ तो कुंडलिनी चित्र की मदद से ही स्टेप बाय स्टेप चक्रौं से होते हुए गमन होता है। अगर आप फ्रंट आज्ञा चक्र पर कुंडलिनी चित्र का ध्यान करो तो आपका पेट अंदर की ओर सिकुड़ेगा, मतलब शक्ति फ्रंट आज्ञा चक्र से फ्रंट मणिपुर चक्र तक पहुंच गई। यह एकदम कैसे हुआ जबकि दोनों चक्रौं को जोड़ने वाली कोई सीधी नाड़ी नहीं है। दरअसल योगाभ्यास में हम ऊपर से नीचे तक बारीबारी से सभी चक्रौं पर कुंडलिनी चित्र का ध्यान करते हैं। जिस चक्र पर कुंडलिनी चित्र होता है, वहाँ शक्ति क्रियाशील हो जाती है, क्योंकि चेतन शिव शक्ति को नचाता है अर्थात उसे क्रियाशील करता है, और शक्ति फिर बदले में शिव को भी नचाती है मतलब उसे ज्यादा अभिव्यक्त करती है। इससे वहाँ सिकुड़न सी महसूस होती है, और कुंडलिनी चित्र भी ज्यादा चमकने लगता है। शक्ति तो पहले भी वहाँ होती है, पर वह सोई जैसी अवस्था में होती है। विज्ञान की भाषा में इसे ऐसे कह सकते हैं कि वहाँ नाड़ी चलाने वाले कैमिकल अर्थात न्यूरोट्रान्समिटर तो मौजूद हैं, पर क्रियाशील अवस्था में नहीं हैं। बिल्कुल विद्युत तरंग की तरह काम होता है। जैसे वास्तव में इलेक्ट्रोन तो बहुत धीमी गति से चलते हैं, एक घंटे में कुछ मीटर ही, पर उन इलेक्ट्रोनों को धक्का देने वाली विद्युतचुम्बकीय तरंग प्रकाश की गति से चलती है, इसलिए धरती के एक छोर पर स्विच ऑन करने पर धरती के दूसरे छोर पर उसी क्षण विद्युत करेंट पहुंच जाता है। उसी तरह नाड़ी चलाने वाले रसायन तो घूम फिर कर निचले चक्र पर पहुंचने में कुछ सेकंड लगा सकते हैं, क्योंकि सभी नर्व फाइबर्स आपस में कहीं न कहीं से जुड़े हैं, बेशक अगले चक्रौं को कोई सीधी नाड़ी आपस में नहीं जोड़ती, पर मन से सोचा गया कुंडलिनी चित्र एक क्षण में ही निचले चक्र पर पहुंच जाता है। वह कुंडलिनी चित्र ही वहाँ की स्थानीय नाड़ियों को क्रियाशील करके वहाँ चमक के साथ संकुचन पैदा करता है। यह ऐसे ही है जैसे विद्युतचुंबकीय तरंग अपने दायरे में आने वाले इलेक्ट्रोनों को गति देते हुए एक क्षण में ही हजारों किलोमीटर लम्बी विद्युत तार में फैल जाती है। इसलिए हम मन की तुलना विद्युतचुम्बकीय तरंग से कर सकते हैं।

कुंडलिनी-ध्यानचित्र का वाममार्गी तांत्रिक यौनयोग में महत्त्व

मित्रो, मैं इस पोस्ट में शिवपुराण में वर्णित राक्षस अंधकासुर, दैत्यगुरु शुक्राचार्य, देवासुर संग्राम और शिव के द्वारा देवताओं की सहायता का रहस्योदघाटन करूंगा।

शिवपुराणोक्त अन्धकासुर कथा

एक बार भगवान शिव पार्वती के साथ काशी से निकलकर कैलाश पहुंचते हैं, और वहाँ भ्रमण करने लगते हैं। एकदिन शिव ध्यान में होते हैं कि तभी देवी पार्वती पीछे से आकर उनके मस्तक पर हाथ रखती हैं, जिससे शिव के माथे की गर्मी से उनकी अंगुली से एक पसीने की बूंद जमीन पर गिर जाती है। उससे एक बालक का जन्म होता है, जो बहुत कुरूप, रोने वाला और अंधा होता है। इसलिए उसका नाम अंधकासुर रखा जाता है। उधर राक्षस हिरण्याक्ष पुत्र न होने से बहुत दुखी रहता है। वह शिव को प्रसन्न करने के लिए घोर तप करता है, और उनसे पुत्र-प्राप्ति का वर मांगता है। शिव अंधक को उसे सौंप देते हैं। वह शिवपुत्र अंधक की प्राप्ति से अति प्रसन्न और उत्साहित होकर स्वर्ग पर चढ़ाई कर देता है, जिससे देवता स्वर्ग से भागकर धरती पर छिप कर रहने लगते हैं। वह धरती को समुद्र में डुबोकर पाताल लोक में छुपा देता है। फिर भगवान विष्णु देवताओं की सहायता करने के लिए वाराह के रूप में अवतार लेकर हिरण्याक्ष को मार देते हैं और धरती को अपने दाँतों पर रखकर पाताल से ऊपर उठाकर पूर्ववत यथास्थान रख देते हैं। उधर बालक अंधक जब अपने भाई प्रह्लाद आदि अन्य राक्षस बालकों के साथ खेल रहा होता है, तो वे उसे यह कह कर चिढ़ाते हैं कि वह अंधा और कुरूप है इसलिए वह अपने पिता हिरण्याक्ष की जगह राजगद्दी नहीं संभाल सकता। इससे अन्धक दुखी होकर भगवान शिव को खुश करने के लिए घोर तप करने लगता है। वह धुएं वाली अग्नि को पीता है, अपने मांस को काटकाट कर हवनकुण्ड में हवन करता है। इससे वह हड्डी का कंकाल मात्र बच जाता है। शिवजी उससे प्रसन्न होकर उसके मांगे वर के अनुसार उसे बिल्कुल स्वस्थ व आँखों वाला कर देते हैं, और कहते हैं कि वह केवल तभी मरेगा जब किसी महान योगी की पतिव्रता स्त्री को अपनी स्त्री बनाने का प्रयास करेगा। वर से खुश और दंभित होकर अन्धक उग्र भोगविलास में डूब जाता है, अनेकों कामिनियों के साथ विभिन्न रतिवर्धक स्थानों में रमण करता है, और अपनी आयु का दुरुपयोग करता है। वह साधुओं और देवताओं पर भी बहुत अत्याचार करता है। वे सब इकट्ठे होकर भगवान शिव के पास जाते हैं। शिव उनकी मदद करने के लिए कैलाश पर पार्वती के साथ विहार करने लगते हैं। एकदिन अन्धक के सेवक की नजर देवी पार्वती पर पड़ती है, और वह यह बात अन्धक को बताता है। अंधक पार्वती पर आसक्त होकर शिव को गंदा तपस्वी, जटाधारी आदि कह कर उनका अपमान करता है और कहता है कि उतनी सुंदर नारी उसी के योग्य है, न कि किसी तपस्वी के। फिर वह सेना के साथ शिव से युद्ध करने चला जाता है। उसे शिव का गण वीरक अकेले ही युद्ध में हरा कर भगा देता है, और उसे शिवगुफा के अंदर प्रविष्ट नहीं होने देता। फिर शिव पाशुपत मंत्र प्राप्त करने के लिए दूर तप करने चले जाते हैं। मौका देखकर अंधक फिर हमला करता है। पार्वती अकेली होती है गुफा में। उसे वीरक भी नहीं रोक पा रहा होता है। डर के मारे पार्वती सभी देवताओं को सहायता के लिए बुलाती है, जो फिर स्त्री रूप में अस्त्रशस्त्र लेकर पहुंच जाते हैं। स्त्री रूप इसलिए क्योंकि देवी के कक्ष में पुरुष रूप में जाना उन्हें अच्छा नहीं लगता। घोर युद्ध होता है। अंधक का सैनिक विघस सूर्य चन्द्रमा आदि देवताओं को निगल जाता है। चारों ओर अंधेरा छा जाता है। हालांकि वे किसी दिव्य मंत्र के जाप से उसके मुंह में घूँसे मारकर बाहर भी निकल आते हैं। तभी शिव भी वहाँ पहुँच जाते हैं। उससे उत्साहित गण राक्षसों को मारने लगते हैं। पर राक्षस गुरु शुक्राचार्य अपनी संजीवनी विद्या से सभी मृत राक्षसों को पुनर्जीवित कर देते हैं। शिव को यह बात शिवगण बता देते हैं कि शुक्राचार्य उनकी दी हुई विद्या का कैसे दुरूपयोग कर रहा है। इससे नाराज होकर शिव उसे पकड़ कर लाने के लिए नंदी बैल को भेजते हैं। नंदी राक्षसों को मारकर उसे पकड़कर ले आता है। शिव शुक्राचार्य को निगल जाते हैं। वह शिव के उदर में बाहर निकलने का छेद न पाकर चारों तरफ ऐसे घूमता है, जैसे वायु के वेग से घूम रहा हो। वह वहाँ से निकलने का वर्षों तक प्रयास करता है, पर निकल नहीं पाता। फिर शिव उसे शुक्र अर्थात वीर्य रूप में अपने लिंग से बाहर निकालते हैं। इसीलिए उनका नाम शुक्राचार्य पड़ा।

दरअसल संजीवनी विद्या उन्हें एक बहुत पुराने समय में शिव ने दी होती है। वह एक बहुत सुंदर स्थान पर शिव का लिंग स्थापित करते हैं। उस पर वे शिव की कठिन अराधना करते हैं। अग्निधूम को पीते हैं, और कठिन तप करते हैं। उससे शिव लिंग से प्रकट होकर उन्हें संजीवनी विद्या देते हैं, और वर देते हैं कि वे भविष्य में उनके उदर में प्रविष्ट

होकर उनके वीर्य रूप में जन्म लेंगे। वे लिंग का नाम शुक्रेश और उनके द्वारा स्थापित कुएँ का नाम शुक्रकूप रख देते हैं। वे भक्तों द्वारा उस कूप में स्नान करने का अमित फल बताते हैं।

अंधकासुर कथा का कुंडलिनी-आधारित विश्लेषण

शुक्र मतलब ऊर्जा या तेज। शुक्र, ऊर्जा और तेज तीनों एकदूसरे के पर्याय हैं। शुक्राचार्य को निगल गए, मतलब योगी शिव ने खेचरी मुद्रा में जिह्वा तालु से लगाकर कुंडलिनी ऊर्जा को आगे के नाड़ी चैनल से नीचे उतारा, जिससे वीर्यशक्ति के रूपान्तरण से निर्मित कुंडलिनी ऊर्जा मूलाधार चक्र से पीठ की सुषुम्ना नाड़ी से होते हुए ऊपर चढ़ गई। वायु के वेग से वे इधरउधर भटकने लगे, मतलब साँसों की गति से कुंडलिनी ऊर्जा माइक्रोकोस्मिक औरबिट लूप में गोल-गोल घूमने लगी। शुक्राचार्य को बहुत समय तक घुमाने के बाद योगी शिव ने उन्हें वीर्य मार्ग से बाहर निकाल दिया, मतलब बहुत समय तक शक्ति को चक्रों में घुमाते हुए व उससे चक्रों पर इष्ट देव या गुरु आदि के रूप में कुंडलिनी चित्र का ध्यान करने के बाद जब वह शक्ति क्षीण होने लगी मतलब शुक्राचार्य शिथिल पड़ने लगे, तब उसे वीर्यरूप में बाहर निकाल दिया। उन्हें योगी शिव ने पुत्र रूप में स्वीकार किया, मतलब कि जिसे ओशो महाराज कहते हैं, 'संभोग से समाधि', वह तरीका अपनाया। इस यौनतंत्र में सहस्रार चक्र के समाधि चित्र को स्खलन-संवेदना के ऊपर आरोपित किया जाता है। इससे वही बात हुई जैसी एक पिछली पोस्ट में लिखी गई है कि गंगा नदी के किनारे पर उगी सरकंडे की घास पर शिववीर्य से बालक कार्तिकेय का जन्म हुआ, मतलब शुक्राचार्य ने कार्तिकेय के रूप में शिवपुत्रत्व प्राप्त किया। उपरोक्त कथा के ही अनुसार सबसे प्रसिद्ध, प्रिय व शक्तिशाली लिंग शुक्रलिंग ही माना जाएगा, क्योंकि यह पूरी तरह से असली है, अन्य तो प्रतीतात्मक ज्यादा हैं, जैसे कोई पाषाणलिंग होता है, कोई पारदलिंग, तो कोई हिमलिंग आदि। शुक्रकूप आसपास में एक ठंडे जल का कुआँ है, जो संभोगतंत्र में सहयोगी है, क्योंकि जैसा एक पिछली पोस्ट में दिखाया गया है कि कैसे ठंडे जल से स्नान यौनऊर्जा को गतिशील व कार्यशील बनाने का काम करता है।

शुक्राचार्य जो राक्षसों को जिन्दा कर रहे थे, उसका यही मतलब है कि वीर्यशक्ति बाह्यगामी होने के कारण संसारमार्गी मानसिक दोषों, आसक्तिपूर्ण भावनाओं और विचारों को बढ़ावा दे रही थी। शिव ने नंदी को शुक्राचार्य को पकड़ कर लाने को कहा, इसका मतलब है कि नंदी अद्वैत भाव का परिचायक है क्योंकि वह एक ऐसा शिवगण है जिसमें बैल के रूप में पशु और गण के रूप में मनुष्य एक साथ विद्यमान है। वह एक यिन-यांग मिश्रण है। अद्वैत से कुंडलिनी शक्ति को मूलाधार से ऊपर चढ़ने में मदद मिलती है।

देवी पार्वती ने महादेव शिव की आँखें बंद कीं, इससे वे अंधे जैसे हो गए। इसको यह समझाने के लिए कहा गया है कि कोई भावी योगी अज्ञान वाली अवस्था में था, न तो उसे लौकिक व्यवहार का ज्ञान था, और न ही आध्यात्मिक ज्ञान। फिर वह इश्कविश्क के चक्कर में पड़ गया। उससे उसकी शक्ति तो घूमने लगी, पर वह बिना कुंडलिनी चित्र के थी। कुंडलिनी चित्र माने ध्यान चित्र आध्यात्मिक ज्ञान की उच्चावस्था में बनता है। आध्यात्मिक ज्ञान लौकिक ज्ञान व अनुभव के उत्कर्ष से प्राप्त होता है। ऐसा होने में जीवन का लम्बा समय बीत जाता है। ज्ञानविज्ञानरहित प्यार-मोहब्बत से क्या होता है कि आदमी यौन शक्ति को ढंग से रूपान्तरित और निर्देशित नहीं कर सकता, जिससे उसका क्षरण या दुरुपयोग होता है। वही दुरुपयोग अंधक नाम वाला पुत्र है। इसका सीधा सा अर्थ है कि अमुक भावी योगी ने शक्ति को घुमाया तो जरूर। ऐसा उक्त कथानक की इस बात से सिद्ध होता है कि पार्वती ने दोनों नेत्रों को एकसाथ बंद किया, मतलब यिन-यांग संतुलित हो गए। पर परिपक्वता की कमी से इस संतुलन से किंचित चमक रहे कुंडलिनी चित्र को समझ नहीं पाया और उसे जानबूझकर व्यर्थ समझ कर त्याग दिया। चमक बुझने से स्वाभाविक है कि अंधेरा छा गया, जिसे आँखों को बंद करने के रूप में दिखाया गया है। क्योंकि शक्ति से मस्तिष्क में जो उच्च स्पष्टता के साथ छवि बनती है, उसे ही पुत्र कहा जाता है, जैसे कि इस ब्लॉग की एक पोस्ट में सिद्ध भी किया गया था। बिना किसी भौतिक सहवास के असली या भौतिक पुत्र तो पैदा हो ही नहीं सकता, वह भी मिट्टी-पत्थर से भरी जमीन के ऊपर या सरकंडों के ऊपर। क्योंकि इस पोस्ट के भावी योगी के मस्तिष्क में उस शक्ति से अंधेरा ही घनीभूत हुआ, इसलिए उसे पुत्र अंधक के रूप में दिखाया गया। चूंकि अँधेरे से भरा व्यक्ति किसी को प्रिय व कार्यक्षम नहीं लगता, इसलिए इसे ऐसा दिखाया गया है कि वह अंधकासुर सबको अप्रिय था और उसके बालमित्र उसे राजगद्दी के अयोग्य बताकर उसका मजाक उड़ाते थे। स्वाभाविक है कि भावी योगी दुनिया में सम्मान, सुखसमृद्धि और यहाँ तक कि जागृति के रूप में

सम्पूर्णता को प्राप्त करने के लिए भरपूर प्रयास करता है, क्योंकि उसमें बहुत शक्ति होती है, केवल स्थिर ध्यानचित्र की ही कमी होती है। उसे दुनिया में ठोकरें खाने के बाद इस कमी का अप्रत्यक्ष अहसास हो ही जाता है, इसलिए वह कुंडलिनी ध्यानयोग के लिए एकांत में चला जाता है। इसे ही ऐसे दिखाया गया है कि अंधक फिर वन में जाकर शिव या ब्रह्मा का ध्यान करते हुए घोर तप करता है। अपने मांस को टुकड़ों में काटकाट कर वह उन्हें अग्नि में होम करता रहता है। साथ में अग्निधूम का पान करता है। इसका मतलब है कि भावी योगी कठिन हठयोग करता है, जिससे उसकी अतिरिक्त चर्बी तो घुलती ही है, साथ में मांसल शरीर भी योगाग्नि से जलकर दुबला हो जाता है। इस दहन से जो कार्बन डायक्साइड गैस निकलती है, उसे ही धुआँ कहा है। क्योंकि योग में अक्सर सांस को अंदर रोक कर रखा जाता है, इसलिए उसे ही धुएं को पीना कहा गया है। जब वह इतना कमजोर हो जाता है कि वह हड्डी का ढांचा जैसा दिखने लगता है, तब भगवान शिव उसे दर्शन दे देते हैं। इसका मतलब है कि जब हठयोगाभ्यास करते हुए काफी समय हो जाता है, जिससे योगी को अपने सहस्रार चक्र में बढ़ी हुई सात्विकता के कारण अपना शरीर अस्थिपंजर की तरह हल्का लगने लगता है, तब कुंडलिनी जागृत हो जाती है। मतलब अदृश्य या सुप्त कुंडलिनी शक्ति मानसिक शिवचित्र के रूप में जागृत हो जाती है। अब शिव अंधक को बिल्कुल स्वस्थ व सुंदर बना देते हैं। ठीक है, कुंडलिनी जागरण से ऐसा ही अकस्मात और सकारात्मक रूपान्तरण होता है। अब वह शिव से वर मांगता है कि वह कभी न मरे। शिव कहते हैं कि ऐसा सम्भव नहीं। विश्व की रक्षा के लिए भी यह जरूरी है। अमरता पाकर तो कोई भी अत्याचारी बनकर दुनिया को तबाह कर सकता है, क्योंकि उसे रोकने व डराने वाला कोई नहीं होगा। इसलिए ब्रह्मा उससे कोई न कोई मौत का कारण चुनने को कहते हैं, बेशक वह असम्भव सा ही क्यों न लगे। इस पर ब्रह्मा कहते हैं कि जब वह माँ के समान आदरणीय महिला को पत्नि बनाना चाहेगा, वह तब मरेगा। अब ये तंत्र की गूढ़ बातें हैं, जिनके यदि रहस्य से पर्दा उठाया जाए, तो आम जनमानस को अजीब लग सकता है। तिब्बतन यौनतंत्र में गुरु की यौनसाथी उनकी अनुमति से उनके शिष्यों को तांत्रिक यौनकला प्रयोगात्मक रूप में सिखाती है। गुरुपत्नि को माँ के समान माना गया है। मतलब कि तांत्रिक यौनयोग सीखने के बाद अंधक अंधी दुनियादारी से उपरत होकर अपनी आत्मा या अपने आप में शांत हो जाएगा, मतलब वह एक प्रकार से मर जाएगा। बाद में हुआ भी वैसा ही, मरने के बाद उसे शिव ने अपना गण बना लिया, मतलब वह मुक्त हो गया। आम मृत्यु के बाद तो कोई मुक्त नहीं होता। इसका एक मतलब यह भी है कि जब विवाह या सम्भोग के अयोग्य सम्मानित नारी से प्यार होता है, तब उसका रूप बारबार मन में आने लगता है, जिससे वह समाधि का रूप ले लेता है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के साथ भी हुआ था। ब्रह्मा के वर को पाकर अन्धक राजा बन गया, और बहुत अय्याश हो गया। सुंदर व सुडोल शरीर तो उसे मिला ही था, इसलिए वह अनगिनत कामिनियों के साथ विभिन्न मनोहर स्थानों में रमण करते हुए अपना बहुमूल्य समय नष्ट करने लगा। इस यौन शक्ति के बल से वह बहुत पाप भी करने लगा। देवताओं को स्वर्ग से भगा कर वहाँ खुद राज करने लगा। जब कोई बुरे काम करेगा तो शरीर रूपी स्वर्ग में स्थित देवता दुखी होकर भागेंगे ही, क्योंकि देवताओं का मुख्य उद्देश्य है शरीर से अच्छे काम करवाना। अब मैं इससे जुड़ी हाल की घटना बताता हूँ और फिर पोस्ट को खत्म करता हूँ क्योंकि नहीं तो यह बहुत लंबी होकर पढ़ने में मुश्किल हो जाएगी। अगले हफ्ते तक शेष कथा के रहस्य को उजागर करने की कोशिश करूंगा, क्योंकि अभी मैं लगभग इतना ही समझ सका हूँ। हो सकता है कि आप मेरे से पहले उजागर कर दें, यदि ऐसा है तो कमेंट बॉक्स में जरूर लिखना।

आफताब-श्रद्धा से जुड़ा बहुचर्चित लवजिहाद काण्ड

आजकल बहुचर्चित आफताब पूनावाला से संबंधित मर्डर मिस्ट्री उपरोक्त अंधक कथा से बहुत मेल खा रही है। सूत्रों के अनुसार वह मुस्लिम युवक श्रद्धा नामक हिंदु लड़की के साथ लिव इन रिलेशनशिप में था। वह डेटिंग ऐप के माध्यम से अपना घरपरिवार छोड़कर उसके साथ लम्बे अरसे से रह रही थी। कई मकान मालिकों को तो वह उसे अपनी पत्नि तक बता कर साथ रखता था, क्योंकि यहाँ के परिवेश में लिव इन रिलेशनशिप को अच्छा नहीं समझा जाता। चोरी छुपे उसके 20 अन्य हिंदु लड़कियों के साथ भी प्रेमसंबंध थे। श्रद्धा को शायद यह बात पता चली होगी और वह उसे ऐसा करने से रोककर उससे शादी करना चाहती होगी। इसको लेकर झगड़े भी हुए और मारपीट भी। अंततः उसने उसका गला दबाकर हत्या कर दी और बिना अफ़सोस के उसके पेंतीस टुकड़े करके उन्हें फ्रिज में पैक कर दिया। धीरेधीरे करके वह उन्हें निकट के जंगल में फ़ेंकता रहा। छः महीने बाद श्रद्धा के पिता द्वारा लिखी शिकायत के बाद पुलिस उसे पकड़ सकी। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि आज की तथाकथित आधुनिक महिलाओं को प्रसन्न करने

के लिए कैसे आफताब की तरह शातिर, बेईमान, नशेड़ी, धूम्रपानी, मांसभक्षी, हिंसक और धोखेबाज बनना पड़ता है, हालाँकि ऐसे अतिवाद को कोई सभ्य व पढ़ालिखा समाज कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता, जिसमें मानवता का हनन होता हो। दूसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि बहुत से हिन्दुओं द्वारा शिवपुराण का कहीं गलत अर्थ तो नहीं निकला जा रहा, या बिना जानेबूझे कहीं वैसी विकृत सोच अवचेतन मन में तो नहीं बैठी हुई है। पुराण से प्राप्त आम धारणा के अनुसार महादेव शिव बिना कुलपरम्परा वाले एक भूतिया किस्म के आदमी थे, जिनको पति रूप में पाने के लिए पार्वती कई जन्मों तक घरपरिवार को छोड़कर भटकती रही। पति-पत्नि के परस्पर प्रेम को परवान चढ़ाने के लिए कुछ हद तक ऐसा पागलपन ठीक भी है, पर वह भी कुछ जरूरी शर्तों के साथ ही पूरा सफल होता है, और वैसे भी अति तो कहीं भी अच्छी नहीं है, ख़ासकर उस कौम के व्यक्ति के साथ तो बिल्कुल भी संबंध अच्छा नहीं है, जिनके तथाकथित लवजिहाद से जुड़े जालिमपने और जाहिलियत के उदाहरण आए दिन मिलते रहते हैं। सब पता होते हुए भी बारम्बार गलती करना तो ऐसा लगता है कि या तो परिवार में बच्चों को सही व संस्कारपूर्ण शिक्षा नहीं दी जा रही या ऐसी लड़कियों के ऊपर जादूटोना कर दिया गया है, या यह हिन्दुओं के पवित्र और ज्ञानविज्ञान से भरे शास्त्रों और पुराणों को बदनाम करने की एक सोचीसमझी और बहुत बड़ी साजिश चल रही है। कई लोग सख्त कानून की कमी को भी मुख्य वजह बता रहे हैं। कुछ लोग विकृत दूरदर्शन, ऑनलाइन व बॉलीवुड कल्चर को भी बड़ी वजह मानते हैं। कई लोग लिव इन रिलेशनशिप और डेटिंग एप्स को दोष दे रहे हैं। इससे हिंदु पुरुषों को भी शिक्षा लेनी चाहिए और महिलाओं की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की कोशिश करनी चाहिए। जिसके अंदर ध्यान-कुंडलिनी चित्र नहीं है, यदि वह भी यौनतंत्र का अभ्यास करे, तो उसका हाल भी अंधक जैसा हो सकता है, जैसा आपने ऊपर पढ़ा, फिर यदि जिसको यौनतंत्र का कखग भी पता नहीं, यदि वह यौनसंबंधों के मामले में मनमर्जी करे, तो उसका उससे भी कितना बुरा हाल हो सकता है, यह उपरोक्त हाल की घटना से प्रत्यक्ष देखने को मिल रहा है।

प्रेमरोग से बचने का बेजोड़ उपाय

दोस्तों, इस समस्या का हल भी है। सौभाग्य से आज “शरीरविज्ञान दर्शन~एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र(एक योगी की प्रेमकथा)” नामक पुस्तक ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों तरह से उपलब्ध है। यह ईबुक के रूप में भी और प्रिंट पुस्तक के रूप में भी उपलब्ध है। इसमें ऐसा लगता है कि शिवपुराण का विवेचन आधुनिक शैली में किया गया है, जो हर किसी को समझ आ जाए, और उसके बारे में गलतफहमी दूर हो जाए। यह सत्य जीवनी और सत्य घटनाओं पर आधारित है। इसमें आधारभूत यौनयोग पर सामाजिकता के साथ प्रकाश डाला गया है। इस पुस्तक में स्त्री-पुरुष संबंधों का आधारभूत सिद्धांत भी छिपा हुआ है। यदि कोई प्रेमामृत का पान करना चाहता है, तो इस पुस्तक से बढ़िया कोई भी उपाय प्रतीत नहीं होता। इस पुस्तक में प्रेमयोगी वज्र ने अपने अद्वितीय आध्यात्मिक व तांत्रिक अनुभवों के साथ अपनी सम्बन्धित जीवनी पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है। इस उपरोक्त “शरीरविज्ञान दर्शन” पुस्तक को एमाजोन डॉट इन पर एक गुणवत्तापूर्ण व निष्पक्षतापूर्ण समीक्षा में पांच सितारा, सर्वश्रेष्ठ, सबके द्वारा अवश्य पढ़ी जाने योग्य व अति उत्तम (एक्सेलेंट} पुस्तक के रूप में समीक्षित किया गया है। गूगल प्ले बुक की समीक्षा में भी इसे फाईव स्टार व शांतिदायक (कूल) आंका गया है। कुछ गुणग्राही पाठक तो यहाँ तक कहते हैं कि अगर इस पुस्तक को पढ़ लिया तो मानो जैसे सबकुछ पढ़ लिया। आशा है कि पुस्तक पाठकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरेगी।

कुंडलिनी तांत्रिक योग को यौन-संभोग प्रवर्धन व वीर्य रूपांतरण की सहायता से दिखाता हिंदु शिवपुराण~संभोग से समाधि

ॐ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगिन्द्रहारम् सदावसंतं हृदयारविन्दे भवंभवानीसहितं नमामि

मित्रो, शिवपुराण के अनुसार भगवान शिव के साथ देवी पार्वती का विवाह हुआ। फिर वे पार्वती के साथ कामक्रीड़ा करते हुए विहार करते रहे। उनको रमण करते हुए सैंकड़ों वर्ष बीत गए, पर वे उससे उपरत नहीँ हुए। इससे सभी देवता उदास होकर ब्रह्मा के पास चले गए। ब्रह्मा उन सबको साथ लेकर भगवान नारायण के पास चले गए। नारायण ने उन्हें समझाया कि किसी पुरुष और स्त्री के जोड़े को आपसी रमण करने से नहीं रोकना चाहिए। यदि कोई ऐसा करता है, तो उसे अपनी पत्नी और संतानों से वियोग का दुःख झेलना पड़ता है। उन्होंने ऐसे बहुत से लोगों का उदाहरण दिया जिन्होंने ऐसा किया था और जिसका दण्ड भी उन्हें मिला था। फिर उन्होंने कहा कि भगवान शिव एक हजार साल तक पार्वती के साथ संभोग करेंगे। उसके बाद वे उससे उपरत हो जाएंगे। इसलिए तब तक देवताओं को उनसे न मिलने की सलाह दी। परन्तु एक हजार साल बाद भी शिव और पार्वती गुफा से बाहर नहीं निकले। उन दोनों की रतिक्रीड़ा से भू कम्पित होने लगी, और जिस कच्छप और शेषनाग पर धरती टिकी हुई है, उनकी थकावट के कारण वायुमंडल की वायु भी स्तम्भित जैसी होने लग गई। तब सभी देवता व्याकुल होकर उस गुफा के द्वार के पास पहुंच गए। उस समय शिव-पार्वती संभोग में क्रीड़ारत थे। देवताओं ने दुखभरी आवाज में रुदन करते हुए शिव की स्तुति की, और राक्षस तारकासुर द्वारा अपने ऊपर किए गए अत्याचार से उन्हें अवगत कराया। भगवान शिव उनका रुदन सुनकर पार्वती को छोड़कर करुणावश उनसे मिलने द्वार तक आ गए। शिव ने उन्हें समझाया कि होनी को कोई नहीं टाल सकता, यहाँ तक कि वे खुद भी नहीं। फिर उन्होंने कहा कि जो होना था, वह हो गया, अब आगे की स्थिति स्पष्ट करते हैं। शिव ने कहा कि जो उनके वीर्य को ग्रहण कर सके, वही राक्षस तारकासुर से सुरक्षा दिला सकता है। सभी देवताओं ने इसके लिए अग्नि देवता को आगे किया। फिर शिव ने आश्वस्त होकर अपना वीर्य धरा पर गिरा दिया। अग्नि देवता ने कबूतर बनकर अपनी चोंच से उस वीर्य का पान कर लिया। तभी पार्वती अंदर से रुष्ट होकर बाहर आई, और देवताओं के ऊपर क्रोध करते हुए उन पर आरोप लगाने लगी कि उन्होंने उसके संभोग के आंनद में विघ्न पैदा करके उसे बन्ध्या बना दिया। ऐसा कहते हुए उसने उनको श्राप दे दिया कि वे भी वन्ध्या की तरह निःसंतान रहेंगे। फिर अग्नि देवता को फटकारते हुए कहा कि उसने वीर्यपान जैसा नीच कर्म किया है, इसलिए वह कहीं शान्ति प्राप्त नहीं करेगा, और दाहकता से जलता रहेगा। वीर्य के असह्य तेज से परेशान होकर वह महादेव की शरण में चला गया, और उनसे अपनी व्यथाकथा सुनाई। महादेव शिव ने उसकी जलन कम करने के लिए एक उपाय बताया। उन्होंने कहा कि यदि माघ या जनवरी के महीने में प्रातः जल्दी स्नान करने वाली सात स्त्रियां इस वीर्य को अपनी योनि में ग्रहण करें, तो उसे उस वीर्य की जलन से छुटकारा मिल जाएगा। फिर देवी पार्वती भगवान शिव को फिर से गुफा के भीतर ले गई, और उनके साथ संभोग सुख प्राप्त करते हुए गणेश नामक पुत्र को उत्पन्न किया। तभी गुफा द्वार पर स्थित देवताओं के समक्ष आठ ऋषिपत्नियाँ पहुंच गईं। उन्हें माघ महीने के ठंडे जल के स्नान से ठंड लगी थी, इसलिए उनमें से सात स्त्रियां उस अग्नि के समीप जाने लगीं। एक अन्य ऋषिपत्नी अरुंधति को सब पता था, इसलिए उसने उन्हें रोका भी, पर वे नहीं रुकीं। अग्नि के पहुंचते ही अग्नि की सूक्ष्म चिंगारियों से होता हुआ वह वीर्य उनके अंदर प्रविष्ट हो गया, और वे गर्भवती हो गईं। जब उनके पति ऋषियों को इस बात का पता चला, तो उन्हें व्यभिचारिणी कहते हुए उनका परित्याग कर दिया। अब वे अपने कृत्य पर पछताते हुए दुनिया में इधर-उधर भटकने लगीं। उनसे वीर्य की जलन नहीं सही जा रही थी। वे हिमालय पर्वत पे चली गईं और उस वीर्य को हिमालय को देकर जलन और दबाव के भार से मुक्त हो गईं। जब हिमालय से वह वीर्यतेज नहीँ सहा गया, तो उसने वह गंगा नदी को दे दिया। गंगा भी उस वीर्य के तेज से परेशान हो गई, और उसने उसे अपने किनारे पर उगे सरकंडों में उड़ेल दिया। वहाँ पर उससे एक सरकंडे के ऊपर एक बालक ने जन्म लिया। उसके जन्म लेते ही चारों ओर खुशियां छा गईं। अनजाने में ही शिव और पार्वती परम प्रसन्नता, ताजगी व किसी बड़े बोझ के खत्म होने का अनुभव करने लगे। अत्यधिक प्रेम उमड़ने के कारण पार्वती के स्तनों से खुद ही दूध निकलने लगा। उनके निवास पर चारों ओर उत्सव के जैसा माहौल छा गया। देवता खुशियां मनाने लगे, और तारकासुर जैसे राक्षसों का अंत निकट मानने लगे। वह बालक कार्तिकेय के नाम से विख्यात हुआ, जिसने बड़े होकर तारकासुर का वध किया।

उपरोक्त रूपक का मनोवैज्ञानिक व कुण्डलिनीयोग परक विश्लेषण

शिव एक जीव की आत्मा है। जीवात्मा और परमात्मा में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है। पार्वती उसकी पत्नि है। जीव हरेक मनुष्य जन्म में अपनी पत्नी के साथ भरपूर सहवास करता है, पर जीवन-मरण से मुक्ति का उपाय नहीं करता। देवताओं ने जगत और जीव के शरीर का निर्माण इसलिए किया है, ताकि उसमें रहने वाली जीवात्मा मुक्त हो सके। उससे देवताओं को भी फायदा होता है, क्योंकि वे फिर जीव की सीमित देह के बंधन को त्याग कर पूर्ववत अपनी असीमित ब्रह्मांडीय देह में विहार करने लगते हैं। कुछ जन्मों तक तो वे लोकपालक विष्णु की आज्ञा से उसे संभोग सुख में डूबे रहने देते हैं। पर जब उसके दसियों जन्म ऐसे ही बीत जाते हैं, तब विष्णु भी देवताओं के साथ मिलकर उसे मनाने चल पड़ते हैं। आध्यात्मिक मुक्ति के सम्बंध में मनुष्य को प्रकृति ने स्वतंत्र इच्छा प्रदान की है, इसलिए उस पर जोरजबरदस्ती तो नहीं चल सकती। इसका मतलब है कि देवताओं को प्रेम से उसकी प्रार्थना और स्तुति करनी पड़ती है। देवता उससे कहते हैं कि राक्षस तारकासुर उन्हें परेशान करता है, और आपका पुत्र ही उसका वध कर सकता है। तारकासुर अज्ञान का प्रतीक है, क्योंकि वह आदमी को अंधा कर देता है। जीव का पुत्र कुंडलिनी को कहा गया है। दरअसल जीव लिंग रूप में है, और उसकी पत्नी योनि रूप में है, जो गुहारूप ही है। देवपूजा आदि विभिन्न आध्यात्मिक साधनाओं से व सत्संग से उसके मन में कुंडलिनी का विकास होता है। उसके साथ संभोग की शक्ति भी मिश्रित हो जाती है। उसी प्रचण्ड कुंडलिनी के प्रभाव से उसके शरीर में कम्पन पैदा होने लगता है, और साँसे भी उखड़ने लगती हैं। इसीको रूपक कथा में धरती के कम्पन और वायु के स्तम्भन के रूप में दर्शाया गया है। जीव का केंद्रीय तंत्रिका तंत्र रीढ़ की हड्डी और मस्तिष्क में फैला हुआ है, जिसकी आकृति एक फन उठाए हुए नाग से मिलती है। कुंडलिनी चित्र उसी केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में पलता और बढ़ता है। स्वाभाविक है कि प्रचंड कुंडलिनी के वेग से वह थक जाएगा। साँसों की गति व शरीर के कम्पन को भी वही केंद्रीय तंत्रिका तंत्र नियंत्रित करता है। उसकी थकावट से ही साँसे अनियमित, लम्बी या उखड़ी हुई सी हो जाती हैं। इसीको योगासन और प्राणायाम भी कह सकते हैं। इसीको रूपक में यह कह कर बताया गया है कि शेषनाग की थकान से वायुमंडल की वायु स्तम्भित होने लगी। वही कुंडलिनी उसे संभोग के समय स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र के आसपास महसूस होती है। इसीको समस्त देवताओं का गुहाद्वार पर इकट्ठे होने के रूप में दर्शाया गया है। क्योंकि कुंडलिनी ही पूरे शरीर का अर्थात सभी देवताओं का सार है। फिर शिवलिंग रूपी शिव गुफा से बाहर आते हैं। जीव को परमात्मा शिव की प्रेरणा से आभास हो जाता है कि जब जननांग क्षेत्र में वीर्य तत्त्व से कुंडलिनी चित्र इतना अधिक घनीभूत हो जाता है, तब उसे मस्तिष्क को चढ़ाकर समाधि या कुंडलिनी जागरण को अवश्य प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए वह अपने ही शरीर के अंतर्गत स्थित देवताओं से कहता है कि जो उसके वीर्य के तेज को धारण कर पाएगा, वह तारकासुर के वध में सहायक होगा। फिर जीव अपनी पुट्ठे की, पेट की व मूत्रनालिका की मांसपेशियों को जोर से ऊपर की ओर सिकोड़ता हुआ वीर्य को ऊपर की ओर खींचता है। इस शक्तिशाली कर्म से शरीर में गर्मी चढ़ जाती है। इसे ही अग्नि देवता द्वारा वीर्यपान कहा गया है। वीर्य का चुसाव जननेन्द्रिय से शुरु होता है, जिसकी आकृति एक चोंच वाले पक्षी की तरह है। इसीको अग्नि द्वारा कबूतर बन कर अपनी चोंच से वीर्यपान करना बताया गया है। कई तांत्रिक हठयोगी तो इस क्रिया में इतनी महारत हासिल कर लेते हैं कि वे वीर्य को बाहर गिराकर भी वापिस ऊपर खींच लेते हैं। इस तकनीक को तंत्र में वज्रोली क्रिया कहा जाता है। इससे क्योंकि योनि में वीर्य नहीं गिरता, इसलिए स्वाभाविक है कि गर्भ नहीं बनेगा। यही पार्वती के द्वारा देवताओं को श्राप देना है। क्योंकि शरीर देवताओं से ही बना है, इसलिए स्वाभाविक है कि जीव के निःसन्तान होने से देवता भी निःसन्तान अर्थात बन्ध्या हो जाएंगे। वीर्य को धारण करने से जननांग में एक दबाव सा या जलन सी पैदा हो जाती है। यही पार्वती द्वारा अग्निदेव को दिया गया श्राप है। परमात्मा शिव रूपी गुरु की आज्ञा से जीव अपनी जननेन्द्रिय के वीर्य के तेज को अपने शरीर के सातों चक्रों के ऊपर प्रतिस्थापित कर देता है। क्योंकि आठवां चक्र शरीर के बाहर और मस्तिष्क से थोड़ा ऊपर होता है, इसलिए वह उसे वीर्यतेज नहीं दे पाता। नहाते समय चक्रों पर एक आनन्दमयी संवेदना और सिकुड़न पैदा होती है। पानी जितना ठंडा होता है, यह अनुभव इतना ही ज्यादा होता है। इसीलिए शास्त्रों में सभी के लिए, विशेषकर योगियों के लिए वर्षभर प्रातः जल्दी उठकर ठंडे पानी से नहाने की हिदायत दी गई है। अपनी सिकुड़न की शक्ति से चक्र उस वीर्यतेज को जननांग से अपनी ओर खींच लेते हैं। यही ऋषिपत्नियों का ठंड के मारे अग्नि के निकट जाकर आग तपना, और अग्नि की सूक्ष्म चिंगारियों के माध्यम से उनके अंदर वीर्यतेज का प्रविष्ट होना है। क्योंकि माघ का महीना सबसे ठंडा होता है, इसलिए स्वाभाविक है कि यह प्रक्रिया तब सर्वाधिक होती है। इसीको रूपक में उन आठ स्त्रियों, सात स्त्रियों व माघ माह में उनके ठंडे पानी से स्नान के रूप में दिखाया गया है। क्योंकि कुंडलिनीयुक्त हठयोग से भी चक्रों पर ठंडे पानी के जैसा प्रभाव पड़ता है, इसलिए यह

रूपक अंश कुंडलिनी योग के हठयोग भाग (विशेषकर आसनों) का भी प्रतीक है। मन को ऋषि के रूप में दिखाया गया है। अलग-अलग चक्रों में मन के अलग-अलग विचार दबे होते हैं। इसलिए चक्रों को ही ऋषिपत्नियाँ कहा गया है। चक्र एक छल्ले के सुराख के जैसी आकृति है, इसलिए इसे योनिरूप में दर्शाया गया है। चक्र में छिपा मन का विचार स्त्रीरूप है। उसमें स्थापित वीर्य का तेज पुरुषरूप है। दोनों का मिलन होने से गर्भ बनता है। इसीको ऋषिपत्नियों का गर्भवती होना बताया गया है। चक्र पर वीर्य का तेज भी ज्यादा शक्तिशाली नहीं होता, और कुंडलिनी विचार भी मस्तिष्क के कुंडलिनी विचार की तरह मजबूत नहीं होता। इसलिए वह गर्भ कामयाब नहीं हो पाता। गर्भ और वीर्य के तेज से चक्रों को जलन महसूस होने लगी। वीर्य के तेज से चक्र पर इधर-उधर के फालतू विचारों का शोर थम गया, और उनकी जगह एकमात्र कुंडलिनी विचार ने ले ली। मतलब मन ने चक्र का साथ छोड़ दिया, क्योंकि विचारों का समूह ही मन है। यही ऋषियाँ के द्वारा अपनी पत्नियों को व्यभिचार का आरोप लगाकर छोड़ना है। सबसे अधिक जलन और दबाव स्वाधिष्ठान चक्र को महसूस होता है। चक्रों ने गर्भ सहित उस वीर्यतेज को रीढ़ की हड्डी को दे दिया। मतलब कि जीव ने स्वाधिष्ठान चक्र की जलन के साथ रीढ़ की हड्डी को उसके ध्यान के साथ अनुभव किया। रीढ़ की हड्डी मूलाधार चक्र से मस्तिष्क तक जाती है। पर उसकी अनुभूति पिछले स्वाधिष्ठान चक्र से पिछले आज्ञा चक्र तक ज्यादा होती है। यही ऋषिपत्नियों के द्वारा अपने अंदर प्रविष्ट वीर्य और गर्भ के तेज को हिमालय को देना है। नीचे का, पुट्ठे वाला क्षेत्र पर्वत का निचला आधार है, और मस्तिष्क उस पर्वत का ऊपरी आधार या शिखर है, जबकि रीढ़ की हड्डी उन दोनों मूलभूत आधारों को जोड़ने वाली एक पतली, लम्बी और ऊंची पहाड़ी है। हड्डी में यह सामर्थ्य नहीँ है कि वह अपने अंदर स्थित वीर्यतेज को प्रवाहित कर सके, क्योंकि वह स्थूल व कठोर होती है। इससे वीर्य का तेज उसके विभिन्न व विशेष बिंदुओं पर एकस्थान पर ही दबाव डालने लगा। ये सभी बिंदु फ्रंट चैनल के चक्रों की सीध में ठीक पीछे रीढ़ की हड्डी में होते हैं। इनमें से दो मुख्य बिंदु हैं, पीछे का स्वाधिष्ठान चक्र और पीछे का आज्ञा चक्र। वीर्यतेज के ज्यादा होने पर अनाहत चक्र के क्षेत्र में भी बनता है। और ज्यादा होने पर नाभि चक्र के क्षेत्र में भी बन जाता है, इस तरह से। जब तांत्रिक शक्ति से सम्पन्न, नियमित, व निरंतर योगाभ्यास से वीर्य का तेज बहुत अधिक बढ़ जाता है, तब वह रीढ़ की हड्डी से सुषुम्ना नाड़ी में चला जाता है। इसीको इस तरह से लिखा गया है कि जब हिमालय के लिए वीर्यतेज असहनीय हो गया तो उसने उसे गंगा नदी में उड़ेल दिया। गंगा नदी यहाँ सुषुम्ना नाड़ी को कहा गया है। सुषुम्ना से होता हुआ वह प्रकाशमान तेज एक विद्युत रेखा के रूप में सहस्रार में प्रविष्ट हो जाता है। वहाँ उस तेज की शक्ति से कुंडलिनी जागृत हो जाती है। इसको रूपक के तौर पर ऐसा लिखा गया है कि गंगा के प्रवाह में बहता हुआ वह वीर्य गंगा के लिए असह्य हो गया। इसलिए गंगा ने उसे किनारे पर उगी हुई सरकंडे की घास में उड़ेल दिया। वहाँ उससे एक सरकंडे के ऊपर एक बालक का जन्म हुआ। सरकंडे की घास वाला किनारा यहाँ मस्तिष्क के लिए कहा गया है। मस्तिष्क को ढकने वाली खोपड़ी पर सरकंडे की तरह पैने और चुभने वाले बाल होते हैं। दोनों को ही पशु नहीं खाते। सरकंडे की घास में जड़ से निकलने वाली कुछ ऐसी शाखाएं भी होती हैं, जिन पर फूल लगते हैं। वे बांस की तरह लकड़ीनुमा और गाँठदार होती हैं। उनसे लकड़ी का छोटामोटा और सजावटी फर्नीचर भी बनाया जाता है। उन पर पत्तों की घनी छाल लगी होती है, जिसको निकालकर और कूट कर एक रेशा निकाला जाता है। उससे मूँज की रस्सी बनाई जाती है। इसीलिए मूँज एक आध्यात्मिकता और सात्विकता का प्रतीक भी है। दरअसल सरकंडा एक बहुपयोगी पौधा है, जो नदी या तालाब के किनारों पर उगता है। सरकंडे की उस पुष्पगुच्छ वाली शाखा में इसी तरह बीच-बीच में गाँठे होती हैं, जिस तरह रीढ़ की हड्डी में चक्र। सम्भवतः इसीलिए उसपर बालक का जन्म बताया गया है। कुंडलिनी चित्र का जागरण ही बालक का जन्म है। पर यह भौतिक बालक नहीं, मानसिक बालक होता है। अगर जागरण न भी हो, तो भी कुंडलिनी चित्र का मन में दृढ़ समाधि के तौर पर स्थायी और स्पष्ट रूप से बने रहना भी कुंडलिनी-बालक का जन्म ही कहा जाएगा। वीर्य इसे बाहर निकलकर पैदा नहीं करता, बल्कि अंदर या उल्टी दिशा में जाकर पैदा करता है। ब्रह्मा भी एक मानसिक चित्र ही है, इसीलिए उसे अयोनिज कहा जाता है। मतलब वह जो योनि से पैदा न हुआ हो। कोई शंका कर सकता है कि केवल एक बार के यौनयोग से कैसे कुंडलिनी जागरण या दृढ़ समाधि की प्राप्ति हो सकती है। पर यह हो भी सकता है। प्रसिद्ध व महान तंत्र दार्शनिक ओशो कहते थे कि यदि एक बार भी ठीक ढंग से संभोग के साथ समाधि का अनुभव हो जाए, तो भी आध्यात्मिक सफलता मिल जाती है। यह अलग बात है कि वे ऐसे तांत्रिक रहस्यों को खुले तौर पर, प्रत्यक्ष तौर पर और मौखिक भाषणों के रूप में आम जनमानस के बीच ले गए, जिससे गलतफहमी से उनके बहुत से दुश्मन और आलोचक भी बन गए। यह भी आशंका जताई जाती है कि सम्भवतः उनकी मृत्यु के पीछे किसी साजिश का हाथ हो। इसलिए तंत्र को गुप्त कला या गुह्य विद्या कहा जाता है। यद्यपि इसे आज की

खुली दुनिया में छिपाना ठीक नहीं है, फिर भी कुछ गोपनीयता की आवश्यकता है, और अपात्र, अनिच्छुक, अविश्वसनीय, विश्वासहीन और असमर्पित व्यक्ति के सामने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रकट नहीं किया जाना चाहिए। लेखक की प्रत्यक्ष व्यक्तिगत पहचान दिखाए बिना और किसी संभावित लक्ष्य को तय किए बिना, और स्वार्थ व पक्षपात के बिना, सभी के लिए ऑनलाइन ब्लॉग में इसे प्रदर्शित करना आज के मुक्तसमाज में गोपनीयता का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है। सम्भवतः इसी गोपनीयता को बनाए रखने के लिए ही पुराणों के लेखक ने कभी भी अपना नाम और पता सार्वजनिक नहीं किया। हर जगह लेखक को दर्शाने के लिए 'व्यास' शब्द लिखा गया है, जो सभी आध्यात्मिक कथावाचकों के लिए दिया गया एक आम सामान्य शब्द है। कुंडलिनी जागरण से शरीर का आधा बायाँ भाग और आधा दायाँ भाग, दोनों बराबर मात्रा में पुष्ट और प्रसन्न हो गए। कुंडलिनी चित्र यहाँ बाएँ भाग या स्त्री या पार्वती की खुशी का प्रतीक है, और भटकती हुई आत्मा की शांति यहाँ दाएँ भाग या पुरुष या शिव की खुशी का प्रतीक है। मतलब कि एकदूसरे से बिछुड़े हुए शिव और पार्वती अपने पुत्र के रूप में एक दूसरे में एक हो गए। जीव कभी पूर्ण और एक था। पर माया की शक्ति से वह दो टुकड़ों में बंट कर अपूर्ण हो गया। तभी से वे दोनों टुकड़े एक होने का प्रयास कर रहे हैं। जीव के द्वारा फिर से पूर्ण होने के लिए की गई आपाधापी से ही जीव और जगत का विकास होता है। तांत्रिक जोड़े के पुरुष और स्त्री भाग या पार्टनर, दोनों भी वीर्यतेज के बोझ, दबाव, व दाह से मुक्त होकर सुप्रसन्न हो गए। पूरे मन में हर्षोल्लास व आनन्द छा गया। शरीर का रोम-रोम खिल गया। इसी को कथा में ऐसे दर्शाया गया है कि उस बालक के जन्म लेने पर शिव व पार्वती, और सभी देवता दोनों बहुत प्रसन्न हुए, और चारों ओर हर्षोल्लास छा गया। कुंडलिनी जागरण के बाद कुंडलिनी चित्र मन में अधिक से अधिक स्पष्ट और स्थायी होता गया। फिर वह स्थायी समाधि के रूप में मन में लगातार बना रहने लगा। उस स्थायी समाधि से जगत के प्रति आसक्ति क्षीण होती गई, और अद्वैत भावना बढ़ती रही। फिर जीवात्मा को अपनी जीवनमुक्ति का आभास हुआ। यही उसके अज्ञान का अंत था। इसको मिथक कथा में इस तरह दिखाया गया है कि वह बालक बड़ा होकर कार्तिकेय नाम से विख्यात हुआ, जिसने राक्षस तारकासुर का वध किया। साथ में, इस कथा के बारे में यह भी लिखा गया है कि जो कोई इस कथा को श्रद्धापूर्वक पढ़ेगा या सुनेगा, वह जगत के सारे सुख प्राप्त करते हुए आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करेगा। इसका मतलब है कि यह मिथकीय व रूपकात्मक कथा तांत्रिक कुंडलिनी योग का ही वर्णन कर रही है। यदि यह साधारण सहवास, पुत्रजन्म या राक्षसवधकी कथा होती, तो आध्यात्मिक मुक्ति की बात तो दूर की, साधारण लौकिक सुखों की प्राप्ति में भी संदेह होता।

कुंडलिनी योग में सहायक शीतजल स्नान~कुंडलिनी जागरण के स्वघोषित दावे की पुष्टि के लिए जाँच में अहम

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि कि कैसे सम्भोग योग पूरी तरह से शिवपुराण में उल्लिखित कार्तिकेय जन्म की प्रसिद्ध कथा पर आधारित है। कबूतर बने अग्निदेव ने कैसे शिवतेज को सप्तऋषि-पत्नियों के रूप में निरूपित चक्रौं को देकर अपनी जलन को कम किया। वे ऋषिपत्नियां कड़ाके की ठंड के महीने में सुबह के ब्रह्म मुहूर्त में ठंडे पानी से नहाती थीं। दरअसल वे ठंड से काम्पती हुई ऋषिपत्नियां अग्निदेव के पास तपिश लेने गईं। अग्नि की चिंगारी के साथ शिवतेज उनके अंदर प्रविष्ट हो गया। होता क्या है कि ठंडे पानी से नहाते समय चक्रौं की मांसपेशियों में ठंड से सिकुड़न पैदा हो जाती है जिससे पेट में ऊपर की तरफ खिंचाव लगता है। इससे स्वाधिष्ठान चक्र के निकट यौनाँग पर स्थित वीर्यतेज ऊपर की तरफ चढ़कर सभी सातों चक्रौं में फैल जाता है। इससे प्रॉस्टेट का दबाव भी कम हो जाता है, या यूँ भी कह सकते हैं कि ऊर्जा की कमी से पेशाब को रोक कर रखने वाली मांसपेशियां ढीली पड़ जाती हैं, इसीलिए ठंडे पानी से नहाते समय बारबार और खुलकर पेशाब आता है। डर के समय भी लगभग यही प्रक्रिया होती है, इसीसे यह कहावत बनी है कि वह इतना डर गया कि उसकी पेंट गीली हो गई। दरअसल डर से मस्तिष्क में अंधेरा या शून्य सा छा जाता है, जो ऊर्जा को नीचे से ऊपर की ओर चूसता है। उस तेज की शक्ति से चक्रौं पर मांसपेशियों की सिकुड़न और ज्यादा बढ़ने से उन पर गर्मी पैदा हो जाती है। यही ऋषिपत्नियों के द्वारा आग की तपिश लेना और उसके माध्यम से शिवतेज को प्राप्त करना है। इससे चक्रौं पर रक्तसंचार बढ़ जाता है, जिससे वहाँ कुंडलिनी चित्र चमकने लगता है, क्योंकि जहाँ पर रक्त या वीर्य या प्राण है, वहीं पर कुंडलिनी है। दरअसल रक्त की अपेक्षा वीर्य तेज कुंडलिनी को बहुत अधिक शक्ति देता है। इसीलिए कहते हैं कि रक्त की हजारों बूंदों से वीर्य की एक बूंद बनती है। चक्र की सिकुड़न के साथ यदि स्वाधिष्ठान व मूलाधार चक्र की वीर्य जलन का ध्यान न किया जाए, तो उस चक्र पर कुंडलिनी चित्र नहीं बनता, सिर्फ सिकुड़न ही रहती है। इसीलिए कहते हैं कि कुंडलिनी मूलाधार में निवास करती है। इसी कुंडलिनी चित्र को ऋषिपत्नियों का गर्भस्थित बालक कहा गया है, क्योंकि जैसे वीर्य से गर्भ बनता है, उसी तरह कुंडलिनी चित्र भी बनता है। इसीलिए भगवान शिव देवी पार्वती द्वारा शापित कबूतर बने अग्निदेव को आश्वासन देते हुए कहते हैं कि वह उनके वीर्य तेज को सप्तऋषि पत्नियों को दे, जिससे उसकी जलन शांत हो जाएगी। आश्चर्य होता है शिवपुराण की इस नायाब और वैज्ञानिक तरीके से कही गई कथा पर। जैसे सम्भोग योग से वीर्यतेज ऊपर चढ़ता है, वैसे ही ठंडे जल से स्नान से भी। इसीलिए सम्भोग योग और शीतजल स्नान दोनों क्रियाओं को एक जैसा दिखाया गया है। यानी सामाजिक रूप से शर्मनाक कारणों से ठंडे पानी के स्नान के रूप में यौन योग से ओतप्रोत कहानी को अच्छी तरह से बताया गया है। यह एक अच्छा विकल्प है। यह एक बुद्धिमान युक्ति है। हो सकता है कि जो भगवान शिव को बर्फीली पर्वत चोटियों में निवास करते हुए दिखाया गया हो और शिवलिंगम को लगातार बूँदबूँद गिर रहे पानी से नहाया जाता हो, और बरसात के मौसम के वर्तमान के जुलाई-अगस्त अर्थात श्रावण के महीने को भी इसी कारण से शिव-विशिष्ट महीना माना गया हो। स्वर्ग से नीचे गिरती हुई गंगा नदी शिव को स्नान कराते हुए ही धरा के ऊपर प्रविष्ट होती है। मैं यहाँ कुछ दार्शनिक जुगाली भी करना चाहूंगा। सम्भोग का प्राथमिक उद्देश्य कुंडलिनी जागरण लगता है, संतानोत्पत्ति तो द्वितीयक या सहचर उद्देश्य है सम्भवतः। संतान इस इनाम के तौर पर है कि फलां आदमी ने कुंडलिनी जागरण प्राप्त करके अपना जीवन सफल कर लिया है, अब वह अपने जैसी संतान को पैदा करके उसका जीवन सफल करने में भी मदद करे। इसका प्रमाण है, गृहस्थ आश्रम से पहले ब्रह्मचर्य आश्रम का होना। इसमें आदमी द्विज मतलब जागृत बन जाता था। ब्रह्मचर्य का मतलब ही वीर्य शक्ति को बर्बाद न करके ऊपर चढ़ाना है। यह अलग बात है कि यदि इस आश्रम अवस्था में कोई कमजोर आदमी कुंडलिनी जागरण को प्राप्त न कर पाए, तो गृहस्थ आश्रम में भी कुछ वर्षों तक सम्भोग योग की मदद ले सकता है। यह ऐसे ही है जैसे कोई कमजोर बच्चा अगली कक्षा में जाने के बाद भी पिछली कक्षा की कमी को पूरा करने के लिए अतिरिक्त समर्पित कोचिंग या प्रशिक्षण लेता है। इसे सुपर ब्रह्मचर्य या आपातकालीन ब्रह्मचर्य या एकस्ट्राआर्डिनरी ब्रह्मचर्य कह सकते हैं। जब से संतानोत्पत्ति सम्भोग का प्राथमिक उद्देश्य बना, तब से ही लोग कुंडलिनी जागरण को भी भूलने लगे और विश्व की जनसंख्या भी बेतरतीब बढ़ने लगी। मैं फेसबुक में पढ़ रहा था कि फलां आदमी ने तीस हजार लोगों को उनके पिछले जन्मों की याद दिला दी, और फलां आदमी ने दस हजार लोगों को। क्या किसी ने किसी को कुंडलिनी जागरण भी करवाया, इसकी कोई चर्चा नहीं। मुख्य काम पीछे, गौण काम आगे। इधर ये वर्तमान जीवन ही भुलाए नहीं भूलता, और उधर कुछ लोग गत जन्मों के जीवनों को भी याद कराने में लगे हैं। अजीब और हास्यास्पद विडंबना लगती है यह। मुझे तो यह भी लगता है कि आगे वाले चैनल को अर्धनारीश्वर के बाएं अर्थात स्त्री भाग और मेरुदण्ड वाले चैनल को दाएं अर्थात पुरुष भाग के रूप में

दिखाया गया है। यब-युम आसन भी तो ऐसा ही होता है। सम्भवतः यब-युम आसन के प्रति लज्जा संकोच के कारण ही ऐसा दिखाया गया हो। वैसे भी फोटो वगैरह टू डिमेंशनल बैकग्राउंड पर थ्री डिमेंशनल यब-युम को दिखा भी नहीं सकते। पर मूर्ति में तो दिखा सकते थे। इसलिए लज्जा संकोच ही मुख्य वजह लगती है। ये दोनों चैनल जुड़कर एक होने की कोशिश करते हैं। इससे मूलाधार की शक्तिशाली कुंडलिनी ऊर्जा एक तरंग के रूप में ऊपर चढ़ती हुई और सभी चक्रौं को भेदती हुई सहस्रार में प्रविष्ट हो जाती है, और मुड़कर वापिस नीचे नहीं आती, क्योंकि आगे वाला कुंडलिनी चैनल पीछे वाले चैनल में मर्ज हो जाता है। मतलब दोनों चैनलों के जुड़ने से सुषुम्ना नाम का एक केंद्रीय चैनल खुल जाता है। सम्भवतः रीढ़ की हड्डी से थोड़ा आगे स्थित बायाँ अर्थात इड़ा चैनल है, और रीढ़ की हड्डी के थोड़ा पीछे मतलब पीठ की चमड़ी को छूता हुआ चैनल दायां अर्थात पिंगला है। रीढ़ की हड्डी के केंद्र में स्थित स्पाइनल कॉर्ड सुषुम्ना चैनल है। सम्भवतः यही यिन-यांग अर्थात स्त्री-पुरुष आकर्षण का मूलभूत वैज्ञानिक सिद्धांत है। वैसे बहूक्त बायाँ और दायां चैनल भी यथावत अस्तित्व में है। मैं तो बाएं चैनल को मेरुदण्ड के आगे खिसकाकर और दाएं चैनल को मेरुदण्ड के पीछे को खिसकाकर उन्हें अतिरिक्त आयाम प्रदान कर रहा हूँ।

सबको पता है कि जैसे ही चक्र सिकुड़न के माध्यम से गर्मी प्राप्त करते हैं, वैसे ही उनको वीर्यतेज भी प्राप्त हो जाता है। ऋषिपत्नियों ने वह तेज हिमालय को मतलब रीढ़ की हड्डी को दिया। ज़ब शरीर पर ठंडा पानी गिरता है तो योग-श्वासों के साथ उड्डीयान बंध खुद ही लगता है। इसमें पेट अंदर और ऊपर की तरफ भिंचता है। इससे चक्रौं की जलन मेरुदण्ड को चली जाती है। मेरुदण्ड उस तेज को गंगा नदी मतलब सुशुम्ना नाड़ी को दे देता है। सुषुम्ना उसे किनारों पर उगे सरकंडों मतलब सहस्रार चक्र को देती है, जहाँ कार्तिकेय का जन्म मतलब कुंडलिनी जागरण या कुंडलिनी क्रियाशीलन होता है। यदि सुषुम्ना नाड़ी पूरी खुल जाए तो कुंडलिनी जागरण अन्यथा कुंडलिनी क्रियाशीलन होता है। मतलब कुंडलिनी चित्र मस्तिष्क में सजीव या वास्तविक भौतिक चित्र के जैसा बन जाता है। यही ठंडे पानी से स्नान का महत्त्व है, जिसका वर्णन हर धर्म में है। ईसाई धर्म के बैपटिस्म में भी सम्भवतः ठंडे पानी से सम्भव इसी शारीरिक क्रिया से मस्तिष्क में कुंडलिनी चित्र जीवंत हो जाता है, जिसे इनीशिएशन कहते हैं, जिससे आदमी आध्यात्मिक मुक्ति के पथ पर आरूढ़ हो जाता है। इसीलिए बैपटिस्म चमत्कारी असर दिखाता है अक्सर। गंगा नदी में स्नान के लिए श्रद्धालुओं की भीड़ इसीलिए लगी रहती है। गंगा नदी का पानी बर्फीला ठंडा होता है जिसमें नहाने से कुंडलिनी शक्ति आनंद पैदा करते हुए दौड़ती है। हिन्दुओं में एक ऋषि पंचमी का व्रत होता है, जिसमें महिला को ठंडे पानी के झरने या तलाब में लगातार लम्बे समय तक नहाना पड़ता है, और पवित्र दाँतुन भी करते रहना पड़ता है। सम्भवतः दाँतुन करने से मस्तिष्क की अतिरिक्त ऊर्जा आगे के चैनल से नीचे उतरती रहती है, जिससे कुंडलिनी को घूमने में आसानी होती है, जिससे ठंड भी नहीं लगती। दरअसल मांसपेशियों की सिकुड़न और नाड़ी का चालन शरीर में गर्मी पैदा करके ठंड से बचाने की शरीर की कुदरती चेष्टा है, कुंडलिनी लाभ तो सहलाभ अर्थात सेकण्डरी है। तिब्बती बुद्धिस्ट बर्फ की शिलाओं को अपने ऊपर रख कर पिघलाते हैं। इस मुकाबले में जो जितनी ज्यादा शिलाएं पिघलाता है, वह उतना ही बड़ा योगी माना जाता है। सबसे ज्यादा बर्फ की शिलाएं पिघलाने वाला विजयी घोषित किया जाता है। यह ध्यान शक्ति को मापने का अच्छा तरीका है। चक्रौं पर कुंडलिनी ध्यान से वहाँ पर मांसपेशी की सिकुड़न से गर्मी पैदा होती है, जो बर्फ को पिघलाती है। मैं पिछली पोस्ट में सोच रहा था कि काश किसी के कुंडलिनी जागरण के स्वघोषित दावे को जाँचने का तरीका होता। चाह के कुछ न कुछ मिल ही जाता है। बर्फ की शिलाओं को शरीर पर पिघलाने वाला वही यह तरीका है। यह साधारण, अप्रत्यक्ष, कारगर और व्यावहारिक तरीका है। इसमें खून का सैंपल लेकर उसमें संभावित कुंडलिनी मार्कर को खोजने की जरूरत नहीं है। बेशक कुंडलिनी जागरण का इससे प्रत्यक्ष तौर पर पता न चलता हो, पर कुंडलिनी ध्यान की शक्ति को मापकर अप्रत्यक्ष तौर पर तो पता चल ही जाता है, क्योंकि कुंडलिनी जागरण से कुंडलिनी ध्यान शक्ति में एकदम से इजाफा होता है। यह अलग बात है कि कुंडलिनी योग के लम्बे ध्यान से कुंडलिनी ध्यान शक्ति में बिना जागरण के ही इजाफा हो जाता है। मुख्य चीज यही कुंडलिनी ध्यान शक्ति है, कुंडलिनी जागरण नहीं, ऐसा लगता है मुझे। हालांकि कुंडलिनी जागरण का अपना अलग ही शैक्षणिक और आधिकारिक महत्त्व है। इस जाँच तकनीक से कुंडलिनी जागरण का अंदाजा ही लगाया जा सकता है, उसकी पुष्टि नहीं की जा सकती। इस तकनीक में एक कमी और लगती है। यदि किसी योगी में पर्याप्त कुंडलिनी ध्यान शक्ति है, पर वह कमजोर है, तो सम्भवतः वह ज्यादा देर तक चक्रौं की सिकुड़न नहीं बनाए रख पाएगा, ऊर्जा की कमी से। यह मेरा अपना अनुमान है, हो सकता है कि ऐसा न हो। पर आम लोगों को बिना अभ्यास के ऐसा नहीं करना चाहिए। ठंड भी लग सकती है। पहाड़ों की तरह ठंडे स्थानों में रहने वाले लोग कुंडलिनी शक्ति के कारण ही ज्यादा चुस्त होते हैं, ऐसा लगता है।

नई चीज को पुरानी चीज से जोड़ने से उसके प्रति लोगों की सकारात्मक सोच कुप्रभावित हो सकती है

मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि जहाँ तक मुझे लगता है, ओशो महाराज ने सम्भोग योग से संबंधित अपने दर्शन को पुरानी मान्यताओं से ज्यादा नहीं जोड़ा। इससे उनकी दार्शनिक चतुराई और निपुणता भी झलकती है। होता क्या है कि हर कोई पुरानी चीज से उबा हुआ जैसा होता है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। आप एकबार स्टेच्यु ऑफ़ यूनिटी घूम आओ, तो दुबारा वहाँ जाने से अच्छा किसी नई जगह को जाना लगता है। इसी तरह, लोगों का अक्सर पुरानी चीजों के प्रति लगाव नई और आधुनिक चीजों से कम होता है। हालांकि कुछ लोगों के साथ उल्टा भी होता है। वे बनी बनाई पुरानी मान्यताओं पर ज्यादा विश्वास करते हैं। उन्हें उनके रहस्योद्घाटन से विशेष लाभ मिल सकता है। कईयों का किसी विशेष धर्म या जीवनपद्धति से पहले ही विशेष पूर्वाग्रह या दुराग्रह बना होता है। अगर वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार खोजी गई तकनीक या दर्शन के लिए बारबार पुरानी या किसी विशेष पद्धति का हवाला दिया जाता रहेगा, तो उसकी नवीनता और रोचकता क्षीण होने लगेगी। इसलिए लगता है कि यह अच्छा रहेगा यदि ऐसा हवाला कम से कम और केवल संदर्भ मात्र के लिए दिया जाए। इससे नवीनता का लाभ भी मिलेगा, और नई पद्धति की प्रामाणिकता पर भी संदेह नहीं होगा। हाँ, पुरानी पद्धतियों का वैज्ञानिक व अनुभव आधारित रहस्योद्घाटन निःसंकोचतापूर्वक किया जा सकता है। सम्भवतः इसीलिए महान चाइनीज दार्शनिक कन्फुसियस कहते थे कि नई परम्पराएं पुरानी परम्पराओं से जुड़ी होनी चाहिए।

कुण्डलिनी जागरण- यह कैसे काम करता है

दोस्तो, क्वोरा पर कुण्डलिनी-जागरण के बारे में बहुत से प्रश्न पूछे जाते रहते हैं। मुख्य प्रश्न यही होता है कि कुण्डलिनी जागरण क्या होता है? बार-२ वही उत्तर दोहराना कुछ युक्तियुक्त सा नहीं लगता है। इसलिए मैंने निर्णय लिया कि इससे सम्बंधित एक वैबसाईट पोस्ट बनाई जाए, ताकि पाठकों को क्वोरा से इसकी ओर रिडायरेक्ट किया जा सके।

किसी को याद करना ही कुण्डलिनी जागरण है

तत्त्वतः तो ऐसा ही है। केवल याद करने के स्तर में ही भिन्नता होती है। कुण्डलिनी को इससे अधिक गहराई से याद नहीं किया जा सकता। जागरण की अवस्था में कुण्डलिनी दिल की गहराईयों में पूरी उतरी होती है। कुण्डलिनी जागरण के समय कुण्डलिनी आत्मा की गहराईयों में पूरी उतर चुकी होती है। वास्तव में कुण्डलिनी आत्मा से जुड़ जाती है। वह आत्मा से एकाकार हो जाती है। उस समय आत्मा उसे दूसरी वस्तु के रूप में नहीं देख पाता। उस समय आत्मा उसे अपने ही रूप में देखता है। आत्मा पूरी तरह से कुण्डलिनी-रूप बन जाता है। **यहाँ याद किया गया व्यक्ति (गुर, देवता, प्रेमी आदि या सैद्धांतिक रूप से कुछ भी) ही कुण्डलिनी के रूप में होता है।** आत्मा का अभिप्राय यहाँ आम आदमी का अपना निरपेक्ष व अंधकारमय स्वरूप है। वह रूप विचारों व अनुभवों से पूर्णतः रिक्त जैसा होता है। वह अंधकारमय शून्य जैसा होता है। वह माया या अज्ञान या भ्रम से ही अंधकारमय बना होता है। वास्तव में तो वह कुण्डलिनी की तरह ही प्रकाशमान होता है।

इसका मतलब है कि कुण्डलिनी-जागरण के समय आत्मा भी कुण्डलिनी के रूप में चमकने लगता है। इससे यह होता है की सभी कुछ अपने जैसा महसूस होने लगता है। कोई द्वैत नहीं रहता। सभी कुछ अद्वैत-रूप में प्रकाशित होने लगता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि कुण्डलिनी समेत सभी अनुभव स्वभाव से ही प्रकाशमान होते हैं। उस समय कुण्डलिनी के जुड़ने से आत्मा भी प्रकाशमान बन जाता है। विशाल अग्नि को अपनी एक लौ अपने से अलग कैसे लग सकती है? आत्मा को दुनिया के अनुभव / पदार्थ तब अपने से अलग लगते थे, जब वह कुण्डलिनी से नहीं जुड़ा था। उस समय उसे कुण्डलिनी भी अपने से अलग लगती थी। बेशक कुण्डलिनी का कितना ही ज्यादा ध्यान क्यों नहीं किया जाता था, कुछ न कुछ अलगाव तो उससे रहता ही था। एक अन्धकार से भरे कमरे को अपने अन्दर पैदा हुई एक आग की चिंगारी अपने जैसी कैसे लग सकती है? उसे तो वह अपने से अलग ही लगेगी न।

कुण्डलिनी जागरण आदमी को उसकी अपनी असली आत्मा की झलक दिखाता है। इससे वह योगसाधना आदि के निरंतर अभ्यास से उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए प्रेरित होता है।

कुण्डलिनी जागरण ज्यादा देर तक नहीं टिकता

कुण्डलिनी जागरण कुछ सेकंडों से ज्यादा समय तक नहीं झेला जा सकता। उस समय मस्तिष्क में विस्फोटक दबाव जैसा बना होता है। अधिकाँश मामलों में आदमी भय से या संकोच से कुण्डलिनी को स्वयं ही नीचे उतार देता है। यदि वह खुद न उतारे, तो कुछ देर में ही मस्तिष्क बहुत थक जाता है, और जागरण के अनुभव को खुद बंद कर देता है। फिर आदमी थकान के कारण आराम कर सकता है। संभवतः उसे नींद तो नहीं आती, क्योंकि वह उस समय आनंद, शान्ति, अद्वैत, और तनावहीनता से भरा होता है। उसका मस्तिष्क शून्य जैसा भी बन सकता है, जिसमें उसे विचार-शून्य असली आत्मा का अनुभव भी हो सकता है।

कुण्डलिनी जागरण की अवधि व्यक्ति के अभ्यास, मनोबल, शारीरिक बल, आयु, सामाजिक स्थिति आदि के ऊपर भी निर्भर कर सकती है। पर इसे एक मिनट से ज्यादा समय तक जारी रखना असंभव सा ही लगता है।

कुण्डलिनी जागरण के बारे में भ्रम

बहुत से लोग कुण्डलिनी-ध्यान को और प्राणोत्थान (कुण्डलिनी-उत्थान) को ही कुण्डलिनी जागरण समझ लेते हैं। यह भ्रम स्वाभाविक ही है, क्योंकि पूर्वोक्तानुसार सभी स्वभाव से समान ही हैं, और इन सभी स्थितियों में कुण्डलिनी का स्मरण या चिंतन विद्यमान होता है। केवल स्मरण के स्तर में ही अंतर होता है। साधारण कुण्डलिनी-ध्यान में यह स्मरण सबसे कम होता है। प्राणोत्थान में यह स्मरण और अधिक होता है। कुण्डलिनी-जागरण में यह सर्वोच्च होता है।

जहां साधारण कुण्डलिनी ध्यान व प्राणोत्थान वाला कुण्डलिनी ध्यान लम्बे समय तक (घंटों से दिनों तक) लगातार जारी रखा जा सकता है, वहीँ कुण्डलिनी जागरण को एक मिनट से ज्यादा अवधि तक जारी नहीं रखा जा सकता। जहां साधारण कुण्डलिनी ध्यान और प्राणोत्थान वाले कुण्डलिनी ध्यान को अपनी इच्छा व अभ्यास से कभी भी पैदा किया जा सकता है, वहीँ कुण्डलिनी जागरण को इच्छानुसार पैदा नहीं किया जा सकता। कुण्डलिनी जागरण स्वयं होता है, और बिना बताए होता है। जब बहुत सी अनुकूल परिस्थितियाँ इकट्ठी होती हैं, तभी यह होता है। साथ में, इसको पैदा करने के लिए एक मानसिक झटका देने वाला उत्तेजक या उद्दीपक (ट्रिगर) भी होना चाहिए। वास्तव में आदमी इसके होने के बारे में कोई पूर्वानुमान नहीं लगा पता। यह तब होता है, जब आदमी को इसके होने के बारे में जरा भी अंदेशा नहीं होता। परन्तु साथ में यह भी सत्य है कि यह कुण्डलिनी ध्यान और प्राणोत्थान की अवस्था में ही होता है, और ये व्यक्तिगत व परिवेशीय परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न अरसे से (महीनों से लेकर वर्षों की अवधि तक) जारी रखे हुए होने चाहिए।

कुण्डलिनी की प्राप्ति के लिए आवश्यक छह महत्त्वपूर्ण कारक- आध्यात्मिक जागरण सभी के लिए संभव है!

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

दोस्तों, मैंने पिछली पोस्ट में लिखा था कि कुण्डलिनी जागरण को अपनी इच्छा से प्राप्त नहीं किया जा सकता। परन्तु ऐसा भी नहीं है। यदि दृढ़ निश्चय से व सही ढंग से प्रयास किया जाए, तो उसे अपनी इच्छा से भी प्राप्त किया जा सकता है। कुण्डलिनी जागरण एक अजीबोगरीब घटना है। यह सबसे साधारण भी है, और साथ में सबसे जटिल भी। इसे अपनी इच्छा से भी प्राप्त किया जा सकता है, और नहीं भी। इसे अपने प्रयास से प्राप्त भी किया जा सकता है, और नहीं भी। परिस्थिति के अनुसार इसमें विभिन्न विरोधी भावों का समावेश प्रतीत होता है।

आज हम बताएंगे कि कुण्डलिनी जागरण के लिए किन पांच चीजों का एकसाथ इकट्ठा होना जरुरी है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए कुण्डलिनी ध्यान का महत्त्व

कुण्डलिनी ध्यान कुण्डलिनी जागरण के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारक है। कुण्डलिनी चित्र मन में स्पष्टता, आनंद, और अद्वैत के साथ बना होना चाहिए। वास्तव में कुण्डलिनी से आदमी में सभी मानवीय या आध्यात्मिक गुण स्वयं ही प्रकट हो जाते हैं। इन गुणों का आकलन करके भी यह पता लगाया जा सकता है कि कुण्डलिनी ध्यान कितना मजबूत है। ऐसा भी नहीं है कि योगसाधना से ही कुण्डलिनी का ध्यान होता हो। वास्तव में अद्वैत भावना (कर्मयोग) से पैदा होने वाला कुण्डलिनी ध्यान ज्यादा व्यावहारिक, ज्यादा मजबूत और ज्यादा मानवीय होता है।

अलग-२ चक्रों पर कुण्डलिनी-ध्यान करने से सभी चक्र भी मजबूत हो जाते हैं। फिर जब तांत्रिक प्रक्रिया से कुण्डलिनी को सभी चक्रों से गुजारते हुए मस्तिष्क तक उठाया जाता है, तब चक्रों की शक्ति भी स्वयं ही मस्तिष्क में पहुँच जाती है। इस तरह से हम कह सकते हैं कि चक्रों की शक्ति कुण्डलिनी जागरण के लिए छटा महत्त्वपूर्ण कारक है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए प्राणों का महत्त्व

प्राण शक्ति (शारीरिक व मानसिक शक्ति) का ही पर्यायवाची रूप है। जैसे शक्ति के बिना कोई भौतिक कार्य संभव नहीं होता है, उसी तरह कुण्डलिनी जागरण भी प्राणों की मजबूती के बिना संभव नहीं है। कमजोर, सुस्त व बीमार आदमी को कुण्डलिनी जागरण की प्राप्ति नहीं हो सकती।

कुण्डलिनी और प्राण साथ-साथ रहते हैं। जब योग साधना से कुण्डलिनी को शरीर के निचले चक्रों से मस्तिष्क को चढ़ाया जाता है, तब उसके साथ प्राण भी अपने आप ऊपर चढ़ जाते हैं। यदि शरीर में प्राणों की कमी होगी, तो मस्तिष्क में पहुँच कर भी कुण्डलिनी कमजोर जैसी बनी रहेगी, और जागृत नहीं हो पाएगी।

कई लोग मानते हैं कि आराम से बैठकर, और खा-पी कर हमारे शरीर में प्राण शक्ति इकट्ठी हो जाएगी। परन्तु ऐसा नहीं है। यदि ऐसा होता, तो सभी बड़े-२ सेठ कब के कुण्डलिनी जागरण प्राप्त कर चुके होते। प्राण वास्तव में शरीर और मन की क्रियाशीलता, सामाजिकता, अद्वैत व मानवता से ही संचित होते हैं। इसीलिए तो पुराने समय में राजा लोग कई वर्षों तक सर्वोत्तम विधि से राज-काज चलाने के बाद एकदम से वनवास को चले जाया करते थे। उससे उनकी पुरानी क्रियाशीलता से मजबूत बने हुए प्राण उनकी कुण्डलिनी को शीघ्र ही जागृत कर दिया करते थे।

प्रेमयोगी वज्र के साथ भी ऐसा ही हुआ था। उपरोक्त प्रकार की भरपूर दुनियादारी के बाद वह योग साधना करने के लिए एकांत में चला गया। वहां उसकी संचित प्राण शक्ति उसकी कुण्डलिनी को लग गई, और वह जागृत हो गई।

कुण्डलिनी जागरण के लिए इन्द्रियों की अंतर्मुखता का महत्त्व यदि इन्द्रियों का मुंह बाहर की ओर खुला रहेगा, तो संचित प्राण बाहर निकल जाएंगे। इससे वे कुण्डलिनी को जागृत नहीं कर पाएंगे। अंतर्मुखता का मतलब गूंगे-बहरे बनना नहीं है। इसका अर्थ तो बाहरी दुनिया में कम से कम उलझना है।

प्रेमयोगी वज्र भी जब दुनियादारी से दूर होकर एकांत में योग साधना करने लगा, तब वह अपने गुजारे लायक ही बहिर्मुखी रहने लगा, जरूरत से ज्यादा नहीं। वैसे तंत्र ने भी उसकी काफी सहायता की। उसकी जो शक्ति दुनियादारी में बर्बाद हो जाती थी, वह उसकी तांत्रिक जीवन पद्धति से पूरी हो जाती थी। अपनी उस तंत्र-संवर्धित प्राण शक्ति से वह कुण्डलिनी व योग के बारे में गहरा अध्ययन करता था, योग करता था, हलके-फुल्के भ्रमण करता था, और हलके-फुल्के काम करता था। फिर भी उसमें काफी प्राण शक्ति शेष बची रहती थी, जो उसकी कुण्डलिनी को जगाने में काम आई।

कुण्डलिनी जागरण के लिए वीर्य शक्ति का महत्त्व

वीर्य शक्ति तंत्र का प्रमुख आधार है। वीर्य शक्ति के बिना कुण्डलिनी को जागरण के लिए अपेक्षित मुक्तिगामी वेग (escape velocity) प्राप्त नहीं होता। तांत्रिक साधना के माध्यम से वीर्य शक्ति को आधार चक्रों से ऊपर उठाकर मस्तिष्क तक पहुँचाया जाता है। वीर्यशक्ति के साथ प्राण भी ऊपर चला जाता है। वीर्य शक्ति के नाश के साथ बहुत सा प्राण भी नष्ट हो जाता है। वीर्य शक्ति के बचाव से प्राण का बचाव हो जाता है, जो तंत्र के माध्यम से मस्तिष्क स्थित कुण्डलिनी को प्रदान कर दिया जाता है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए एक ट्रिगर का महत्त्व

यदि उपरोक्त सभी अनुकूल परिस्थितियाँ मस्तिष्क में मौजूद हों, पर साथ में यदि एक मानसिक झटका/ट्रिगर न मिले, तो भी कुण्डलिनी जागरण नहीं होता। मैं उस ट्रिगर को एक उदाहरण से समझाता हूँ। मान लो कि दो गुरुभाई कुण्डलिनी योगी हों, और दोनों अलग-२ जगहों पर अपने गुरु के रूप की कुण्डलिनी का ध्यान कर रहे हों। फिर वे वर्षों बाद अचानक किसी मेले/समारोह आदि में आपस में प्यार से मिलें, तो वह मुलाक़ात उन दोनों के लिए एक ट्रिगर का काम करेगी। उससे उन दोनों का ध्यान अपने गुरु पर जाएगा, जिससे पहले से उनके मन में बसी हुई गुरु के रूप की कुण्डलिनी प्रचंड होकर एकदम से जागृत हो जाएगी। यदि उस ट्रिगर में सैक्सुअल अंश भी हो, तो वह और ज्यादा मजबूत बन जाती है।

कुण्डलिनी जागरण केवल तांत्रिक सैक्सुअल योगा/यौनयोग-सहायित कुण्डलिनी योग से ही सभी के लिए प्राप्त करना संभव है

यह तांत्रिक पोस्ट तंत्र के आदिदेव भगववान शिव व तंत्र गुरु ओशो को समर्पित है।

प्रमाणित किया जाता है कि इस तांत्रिक वैब पोस्ट में किसी की भावना को ठेस पहुंचाने का प्रयास नहीं किया गया है। इसमें तांत्रिक वैबसाइट के अपने स्वतंत्र विचार जनहित में प्रस्तुत किए गए हैं। हम यौनिहिंसा की पीड़िताओं के साथ गहरी सम्वेदना प्रकट करते हैं।

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

मित्रो, इस पोस्ट समेत पिछली दोनों पोस्टें कुण्डलिनी विषय की आत्मा हैं। ये तीनों पोस्टें यदि क्रमवार पढ़ी जाएं, तो कुण्डलिनी विषय का विशेषज्ञ बना जा सकता है। अगर तीनों पर अमल भी किया जाए, तब तो कुण्डलिनी जागरण भी प्राप्त किया जा सकता है। इस पोस्ट में मैं यह बताने की कोशिश करूंगा कि कुण्डलिनी जागरण का सबसे आसान, कारगर और शीघ्र फलदायी तरीका क्या है? यौनयोग-सहायित कुण्डलिनी योग ही वह तरीका है।

पिछली पोस्ट में मैंने बताया कि वे छः महत्त्वपूर्ण कारक कौन से हैं, जिनके एकसाथ इकट्ठा होने से कुण्डलिनी जागरण होता है। इस पोस्ट में मैं यह बताऊंगा कि यौनयोग से वे छः कारक कैसे प्रवर्धित/बूस्ट होकर अति शीघ्रता से व आसानी से कुण्डलिनी को जागृत करते हैं।

तांत्रिक सैक्सुअल योगा (यौनयोग) से कुण्डलिनी ध्यान को बल

सैक्सुअल योगा के समय वज्र प्रसारण अपने चरम पर होता है। वज्र में भरपूर रक्त प्रवाहित हो रहा होता है। इससे वज्र-शिखा की संवेदना अपने चरम पर होती है। वज्र-शिखा ही तो वह मूलाधार चक्र है, जिस पर कुण्डलिनी शक्ति का निवास बताया गया है। वास्तव में जब वज्र शिथिल होकर नीचे लटका होता है, तब वज्र शिखा उस बिंदु को छू रही होती है, जिसे मूलाधार चक्र का स्थान बताया गया है। वह स्थान वज्र के आधार व मलद्वार को जोड़ने वाली रेखा के केंद्र में बताया गया है। फिर वज्र-शिखा की तीव्र संवेदना के ऊपर कुण्डलिनी-छवि का आरोपण किया जाता है। दोनों तांत्रिक प्रेमियों के यब-युम/yab-yum में जुड़े होने पर वह वज्र संवेदना लोटस के अन्दर ब्लोक हो जाती है, जिससे वह वीर्यपात के रूप में बाहर नहीं भाग पाती। दोनों एक-दूसरे के शरीर पर आगे और पीछे के चक्रों को हाथों से क्रमवार स्पर्श करके उन पर कुण्डलिनी का ध्यान करते हैं। उसके बाद सम्भोग क्रीड़ा के दौरान वज्र-संवेदना को चरम तक पहुँचाया जाता है। फिर योग-बंधों से उसे ऊपर उठाया जाता है। उससे संवेदना के साथ कुण्डलिनी एकदम से मस्तिष्क को कूद जाती है, और वहां तेजी से जगमगाने लगती है। साथ में वज्र शिथिल हो जाता है। उससे वीर्यपात भी रुक जाता है। ऐसा बार-२ करने से मस्तिष्क में कुण्डलिनी जीवंत जैसी हो जाती है। इसे प्राणोत्थान या कुण्डलिनी-उत्थान भी कहते हैं। इसी तरह, मिस्र वाली अन्खिंग विधि का भी प्रयोग किया जा सकता है। महिला में वज्र का काम क्लाईटोरिस करता है, क्योंकि वहीं पर सबसे बड़ी यौन-संवेदना पैदा होती है। बाकि अन्य काम महिला में पुरुष के समान ही किया जाता है। महिला में भी क्लाईटोरिस की संवेदना को चरम तक पहुंचा कर ऊपर चढ़ाया जाता है। उससे संवेदना के ऊपर आरोपित कुण्डलिनी भी ऊपर चढ़ जाती है। उससे रजोपात भी रुक जाता है, और पूर्ण यौन तृप्ति भी मिल जाती है।

तांत्रिक सैक्सुअल योग (यौनयोग) से प्राणों को बल

यह पहले से ही सिद्ध है कि कुण्डलिनी के साथ प्राण भी विद्यमान रहते हैं। यौनयोग से जब वज्र पर कुण्डलिनी प्रचंड हो जाती है, तब वहां प्राण भी खुद ही प्रचंड हो जाते हैं। जब उस कुण्डलिनी को सभी चक्रों तक ले जाया जाता है, तब प्राण भी खुद ही सभी चक्रों तक चले जाते हैं।

तांत्रिक सैक्सुअल योगा (यौनयोग) से इन्द्रियों की अंतर्मुखता को बल

सैक्सुअल योगा से पूरे शरीर में प्राणों का संचार हो जाता है। इससे शरीर व मन, दोनों स्वस्थ हो जाते हैं। इससे स्वस्थ विचार पैदा होते हैं, जिससे आनंद की अनुभूति होती है। इससे आदमी अपने तन-मन से ही संतुष्ट रहता हुआ बाहरी जगत के प्रति अनासक्त हो जाता है। इसी अनासक्ति को ही तो अंतर्मुखता कहते हैं। वह जरूरत के हिसाब से दुनियादारी चलाता तो है, पर उसमें उसके प्रति फालतू की छटपटाहट/क्रेविंग नहीं रहती। साथ में, यौनयोग से प्रचंड बने हुए उसके प्राण भी उसे दुनिया में निर्लिप्त रहने में मदद करते हैं।

तांत्रिक सैक्सुअल योगा (यौनयोग) से वीर्यशक्ति को बल

यदि सम्भोग ही नहीं किया जाए, तो वीर्य कैसे उत्पन्न होगा। यदि वीर्य ही उत्पन्न न होए, तो उसकी शक्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है। इसका अर्थ है कि केवल सैक्सुअल योग से ही वीर्यशक्ति पैदा होती है, और वह कुण्डलिनी को प्राप्त होती है। साधारण सम्भोग से तो वीर्यशक्ति की बर्बादी होती है, और सम्भोग ही न करने से वीर्यशक्ति पैदा ही नहीं होती।

तांत्रिक सैक्सुअल योगा (यौनयोग) से ट्रिगर को बल

सैक्सुअल योगा से ट्रिगर के लिए संवेदनात्मकता/सेंसिटिविटी बहुत बढ़ जाती है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि सैक्सुअल योगा से मस्तिष्क में कुण्डलिनी पहले से ही बहुत मजबूत बनी होती है। उसे मामूली सी ट्रिगर चाहिए होती है। इसलिए हलकी सी व साधारण सी ट्रिगर भी काम कर जाती है।

प्रेमयोगी वज्र अपनी उस तथाकथित समाधि {कुण्डलिनीजागरण/KUNDALINI AWAKENING} की झलक का वर्णन अपने शब्दों में इस प्रकार करता है

मैंलगभग 18 सालों से अद्वैत {मुख्यतः अद्वैतपरक शविद अर्थात शरीर विज्ञान दर्शन से प्राप्त, कुछ सनातन धर्म की संगति से} का पूर्ण व्यावहारिकता व कर्मठता से युक्त सांसारिकता के साथ अभ्यास, लगभग 10-11 सालों से अनियमित व अपूर्ण {बिना केन्द्रित ध्यान/focused concentration के} योगाभ्यास {इन दोनों ही प्रयासों/अभ्यासों से मेरी कुण्डलिनी मेरे मस्तिष्क में आधार स्तर पर जीवित रहती थी- आतंरिक वेबपृष्ठ}; तथा एक साल से, एक ऑनलाइन कुंडलिनी फोरम पर रहते हुए, अपने वास्तविक घर से बहुत दूर, शान्त व तनावमुक्त स्थान पर, महान मैदानों व गगनचुंबी पर्वत श्रृंखलाओं के जंक्शन के पास, ऋषिकेश / हरिद्वार की तरह के प्राकृतिक शांतिदायक स्थान पर (बाह्य लिंक- क्वोरा) नियमित व समर्पित रुप से उपरोक्त अतिपरिचित वृद्धाध्यात्मिक पुरुष (गुरु) के मानसिक चित्र रूपी कुण्डलिनी का ध्यान करता हुआ, कुण्डलिनीयोग का अभ्यास(बाह्य वैबसाइट/क्वोरा) कर रहा था, जिससे मेरी कुण्डलिनी, और अधिक परिपक्व हो गई थी; तथा अन्त के एक महीने से तांत्रिक विधि/प्रत्यक्षयौनयोग- तांत्रिक आतंरिक वेबपृष्ठ {या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says"} (लगभग प्रतिदिन/निरंतर) को भी उपरोक्त साधना के साथ जोड़कर, अपनी कुण्डलिनी को अत्यधिक परिपक्व व ऊर्ध्वगामी बना रहा था। मैं बहुत दिनों के बाद, बहुत लंबी यात्रा करके(बाह्य वैबसाइट/क्वोरा), अपने नए व व्यक्तिगत वाहन (अत्याधुनिक विशेषताओं सहित व एक मानवीय वाहन-निर्माता संगठन से खरीदा गया) से, अत्याधुनिक व सुविधासंपन्न सड़क मार्ग से सपरिवार घर आया हुआ था। तभी एक दिन मैं एक समारोह में एक कुर्सी पर बैठा था। साधना के शांतिदायक प्रभाव के कारण मेरी दाढ़ी कुछ बढ़ी हुई थी और उसके कुल बालों में से लगभग 30% बाल सफेद नजर आ रहे थे। उस समारोह में मेरा हृदय से स्वागत हुआ था। वहां पर मुझे अपने लिए चारों ओर विशेष प्रेम व सत्कार का अनुभव हो रहा था। समारोहीय लोगों के साथ जुड़ी हुई बचपन की मेरी यादें जैसे तरोताजा हो गयी थीं। मैं अपने को खुला हुआ, सुरक्षित, शांत, तनावरहित, मानसिकता से पूर्ण(mindful), अद्वैतशाली व मानसिक कुण्डलिनी-चित्र के साथ अनुभव कर रहा था। मेरी कुण्डलिनी से सम्बंधित लोग वहां पर उपस्थित थे व वातावरण-माहौल भी मेरी कुण्डलिनी से सम्बंधित था। खड़ी व छोटी पहाड़ी पर बना वह घर जैसे चिपका हुआ सा लगता था। चहल-पहल व रौनक वहां पर लगातार महसूस हो रही थी। समारोहीय संगीत(आधुनिक प्रकार का) भी मध्यम स्तर पर बज रहा था, जिसमें गायक के बोल(lyrics) स्पष्ट नहीं सुनाई दे रहे थे। उससे वह संगीत एक प्रकार का संगीतबद्ध शोर ही लग रहा था। बहुत अच्छा लग रहा था। चिर-परिचित लोगों के खुशनुमा चेहरे जैसे यहाँ-वहाँ उड़ रहे थे व सीढ़ियों पर ऊपर-नीचे आ-जा रहे थे। मैं बीच वाली मंजिल की बालकनी में था। एक कमरे में कुछ सुन्दर व तेजस्वी स्त्रियों का समूह नृत्य-गान में व्यस्त था। कभी एक-२ करके, कभी दो-२ के समूह में और बहुत विरले मामले में तीन-२ के समूह में वे महिलाएं बारी-२ से उठकर गाने वाली 20-25 महिलाओं के घेरे के बीच में आतीं और अपने नृत्य-कौशल का प्रदर्शन करतीं। मेरे सामने वाली, हरी-भरी व रौनक से युक्त एक लम्बी, एकसमान व मध्यम ऊँचाई की पहाड़ी पर; लगभग सिधाई में, पर्वत-शिखर से लगभग एकसमान नीचाई पर बनी व उस घर से लगभग 100 मीटर की हवाई दूरी पर बनी एक सड़क उस घर की उंचाई के स्तर पर थी और वहां से यातायात के साधनों का शोर भी मध्यम स्तर पर सुनाई दे रहा था। उस पहाड़ी पर स्थित सूर्य के मुंह की लाली पूरे दिन की थकान के कारण बढ़ती ही जा रही थी, जैसे कि वह अपने कर्तव्यवहन(duty) के पूरा होने का इंतजार बड़ी बेसब्री से कर रहा था। मेरा बहुत समय बाद मिल रहा, एक पुराना व कुछ समय पहले ही सेवानिवृत्त सैनिक, मेरे मानसिक कुण्डलिनी-चित्र के भौतिक रूप से सम्बंधित व उसके जैसे ही कर्मठता आदि गुणों से युक्त स्वभाव वाला, मित्र सहित ज्ञाति-भ्राता, हंसमुख व तेजस्वी मुद्रा में जैसे ही अपनेपन के साथ मेरा हालचाल पूछने लगा, वैसे ही मैं भी अपनी ओर से प्रसन्नता प्रदर्शित करता हुआ खड़ा हो गया उसकी प्रसन्नता से भरी आँखों से आँखें मिलाता हुआ, जिससे अचानक ही मैं कुण्डलिनी के विचार में गहरा खो गया और वह उद्दीप्त(stimulate) होकर अचानक ही मेरे पूरे मस्तिष्क में छा गई। मेरा सिर भारी हो गया व उसमें भारी दबाव महसूस होने लगा। मस्तिष्क में वह दबाव विशेष रूप का था, क्योंकि साधारण दबाव तो चेतना को भी दबा देता है, परन्तु वह दबाव तो चेतना(consciousness) को भड़का रहा था। ऐसा लग रहा था, जैसे कि मेरे मस्तिष्क के अन्दर चेतना की नदी(river of consciousness) भंवर के रूप में, पूरे वेग के साथ घूम रही हो और मेरे मस्तिष्क के कण-२ को कम्पित कर रही हो, जिसे सहन करने में मेरा मस्तिष्क अस्मर्थ हो रहा था। वह चेतना का प्रचंड भंवर मेरे मस्तिष्क में, बाहर की ओर एक विस्फोटक दबाव बनाता हुआ प्रतीत हो रहा था। उस

चेतना-भंवर(consciousness whirl) को चलाने वाली, मुझे अपनी कुण्डलिनी प्रतीत हो रही थी, क्योंकि वह हर जगह अनुभव हो रही थी। उस तरह की हल्की सी, तूफानी सी, गंभीर व समान रूप की आवाज का अनुभव हो रहा था, जिस तरह की आवाज मधुमक्खियों के झुण्ड के एक साथ उड़ने से पैदा होती है। वास्तव में वह कोई आवाज भी नहीं थी, परन्तु उससे मिलता-जुलता, सन्नाटे से भरा हुआ, मस्तिष्क के एक विचित्र प्रकार के दबाव या कसाव से भरा हुआ, विशाल आत्मचेतना का अनुभव था। वैसा दबाव, जैसा कि शीर्षासन या सर्वांगासन करते हुए मस्तिष्क में अनुभव होता है; यद्यपि वह अनुभव उससे कहीं अधिक दबाव के साथ, उपर्युक्त सन्नाटे के साथ, चेतनापूर्ण, प्रकाशपूर्ण, कुण्डलिनीपूर्ण एवं आनंदमयी था। यदि अपने अन्दर चल रही, सन्नाटे व आवाज, एकसाथ दोनों से भरी हुई सरसराहट जैसी गुप्त हलचल(यद्यपि आवाज नहीं, पर आवाज की तरह) विद्युत्-ट्रांसफार्मर(electric ट्रांसफार्मर) को स्वयं को अनुभव होए, तो वह उसे कुण्डलिनीजागरण के जैसी स्थिति समझे। वह आत्मज्ञान भी नहीं था, अपितु उससे निम्नस्तर का अनुभव था। वह ओम (बाह्य वेबसाईट- भारतकोष) के बीच के अक्षर, "ओ——————-" की एकसमान व लम्बी खिंची हुई आवाज की तरह की अनुभूति थी। संभव है कि ओम का रहस्य भी कुण्डलिनीजागरण में छुपा हुआ हो। दृष्यात्मक अनुभव भी जैसे झुण्ड की मधुमक्खियों की तरह ही, मस्तिष्क को फोड़ कर बाहर निकलने के लिए बेताब हो रहे थे। शक्तिशाली फरफराहट के साथ, जैसे वह अनुभव ऊपर की ओर उड़ने का प्रयास कर रहा था। अतीव आनंद की स्थिति थी। वह आनंद एकसाथ अनुभव किए जा सकने वाले सैंकड़ों यौनसंबंधों से भी बढ़ कर था। सीधा सा अर्थ है कि इन्द्रियां उतना आनंद उत्पन्न कर ही नहीं सकतीं। मेरी कुण्डलिनी पूरी तरह से प्रकाशित होती हुई, सूर्य का मुकाबला कर रही थी। वह प्रत्यक्ष के भौतिक पदार्थों से भी अधिक स्पष्ट, जीवंत व वास्तविक लग रही थी। मेरी आँखें खुली हुई थीं व गंभीरता से नज़ारे निहार रही थीं। जहाँ पर भी दृष्टि जा रही थी, वहीँ पर कुण्डलिनी दृष्टिगोचर हो रही थी। ऐसा लग रहा था, जैसे सभी कुछ कुण्डलिनी के रंग में रंगा हुआ हो। सभी अनुभव एकसमान, परिवर्तनरहित व पूर्ण जैसे लग रहे थे। मेरा अहंकार या व्यक्तित्व पूर्णतया नष्ट हो गया था। मैं अपने स्वास्थ्य के प्रति चिंतित हो रहा था। मुझे अपने व्यक्तित्व का कुछ भी भान नहीं रहा। मेरे साथ में कुर्सी पर बैठे २-३ लोग, आते-जाते कुछ लोग व वह ज्ञाति-भ्राता भी आश्चर्य, शंका व संभवतः तनिक चिंता से मेरी ओर देखने लगे; जिससे मुझे तनिक संकोच होने लगा। हड़बड़ाहट में मैं साथ ही बालकनी की ग्रिल से सटी अपनी कुर्सी पर बैठ गया, और मैंने थोड़ा सिर झुकाते हुए अपने माथे की ऊपरी सीमा को दाएं हाथ की अँगुलियों के अग्रभागों से मध्यम दबाव के साथ दबाते हुए बार-बार मला व आँखों को भींचते हुए अपने व्यक्तित्व में वापिस लौटने का प्रयत्न किया। कुछ प्रयत्न के बाद मेरी कुण्डलिनी मेरे मस्तिष्क से वापिस नीचे लौट आई। कुछ चंद क्षणों के बाद जैसे ही मुझे अपनी भूल का अहसास हुआ, उसी समय मैंने अपनी चमकती हुई कुण्डलिनी को वापिस ऊपर चढ़ाने का भरपूर प्रयास किया, परन्तु मैं सफल न हो सका, यद्यपि मैंने अपने आप को बहुत अधिक प्रसन्न, तरोताजा, तनावरहित, चिन्तारहित व अनासक्ति/द्वैताद्वैत से संपन्न अनुभव किया। कुण्डलिनीजागरण के उस अनुभव के समय, मुझे अपने चेहरे पर गर्माहट व लाली महसूस हो रही थी। ऐसा अनुभव मुझे अप्रत्यक्षतंत्र/सांकेतिक तंत्रयोग/दक्षिणपंथी तन्त्र के समय भी होता था, जब प्रथम देवीरानी का चित्र मेरे मस्तिष्क में स्पष्ट व प्रचंड हो जाया करता था, यद्यपि इस बार के जागरण की अपेक्षा मध्यम स्तर के साथ। इस बार देवीरानी का नहीं, अपितु उन पुराणपाठी तांत्रिक-वृद्धाध्यात्मिकपुरुष (वे एक कमरे में पुराणों का इक्के-दुक्के श्रोताओं के सम्मुख अर्थ सहित पाठ कर रहे होते थे और प्रेमयोगी वज्र साथ वाले कमरे में विज्ञान विषय का गहराई से अध्ययन कर रहा होता था- पढ़ें ईपुस्तक, कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है) का चित्र सर्वाधिक स्पष्ट व प्रचंड रूप से अनुभव हुआ, यद्यपि केवल १० सेकण्ड के लिए। प्रथम देवीरानी का चित्र तो मस्तिष्क में लगभग सदैव बना रहता था; कभी हल्के स्तर में, कभी मध्यम स्तर में और कभी प्रचंड स्तर में। यद्यपि इस बार कुण्डलिनी का चित्र सर्वोच्च स्तर पर अभिव्यक्त हुआ। वृद्धाध्यात्मिकपुरुष का मानसिक चित्र(कुण्डलिनी) भी लगभग सदैव(यद्यपि देवीरानी की अपेक्षा कुछ कम समय तक) बना रहता था, परन्तु वह अधिकांशतः हल्के स्तर पर ही अभिव्यक्त होता था; मध्यम या प्रचंड स्तर पर अपेक्षाकृत रूप से बहुत कम। ऐसा लगता है कि ऐसी भिन्नता के लिए, मेरा यौवन तथा भौतिक/कामप्रधान परिवेश जिम्मेदार था। यदि आध्यात्मिक परिवेश होता, तो सम्भवतः इसका उलटा होता, अर्थात वृद्धाध्यात्मिकपुरुष का मानसिक चित्र देवीरानी की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली बना करता। देवीरानी के चित्र ने कभी भी अपने भौतिकरूप के स्तर से अधिक अभिव्यक्ति नहीं दिखाई, परन्तु इस कुण्डलिनीजागरण में, वृद्धाध्यात्मिकपुरुष के चित्र ने तो अपने को, अपने भौतिकरूप के स्तर से भी अधिक अभिव्यक्त कर दिया। उस अनुभव से मेरे मन में स्त्रीमोह का फंदा काफी ढीला पड़ गया था, क्योंकि बिना कामोत्तेजना के ही

सर्वाधिक स्पष्ट मानसिक चित्र बनना, किसी आश्चर्य से कम नहीं था। प्रथम देवीरानी के मानसिक चित्र(क्रियाशील कुण्डलिनी) के साथ मुझे कभी भी पूर्ण समाधि (जागृत कुण्डलिनी) की अनुभूति नहीं हुई {आतंरिक तांत्रिक वेबपृष्ठ या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says"}, अर्थात वह कुण्डलिनी क्रियाशील तो निरंतर बनी रही, परन्तु कभी जागृत नहीं हो सकी {प्रथम देवीरानी से आत्मज्ञान की कहानी देखें- आतंरिक तांत्रिक वेबपृष्ठ या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says"}। यद्यपि कालान्तर में द्वितीय देवीरानी ने प्रत्यक्ष/पूर्ण तंत्रयोग/ तथाकथित वामपंथी तंत्र (बाह्य वेबसाईट- isha.sadhguru.org) करवा कर, उन वृद्धाध्यात्मिक पुरुष के मानसिक चित्र की कुण्डलिनी को मेरे शरीर में बहुत ऊपर उठवाया व जागृत करवाया {वास्तविक समय की सम्बंधित कहानी इस आतंरिक वेबपेज या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says" पर देखें}। साथ में, यह इस तांत्रिक सिद्धांत को सिद्ध करता है कि तांत्रिक प्रेमिका / प्रेमी की संगति के साथ-२ आध्यात्मिक / तांत्रिक गुरु की संगति भी उपलब्ध होती रहनी चाहिए {आतंरिक तांत्रिक वेबपृष्ठ या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says"}। संभवतः इसी कुण्डलिनीजागरण/समाधि को ही सहस्रार चक्र/मस्तिष्क में कुण्डलिनी का परब्रम्ह/आत्मा से जुड़ना/एकाकार होना कहा गया है। प्रेमयोगी वज्र की वास्तविक समय की सम्पूर्ण तांत्रिक प्रेमकथा इन वेबपृष्ठों पर पढ़ सकते हैं {आतंरिक तांत्रिक वेबपृष्ठ या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी)" में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says" }।

अतिरिक्त स्पष्टीकरण

प्रेमयोगी वज्र के अनुसार कुंडलिनी जागृति का अनुभव सामान्य, न्यूरोसाइंटिफिक रूप से व्याख्यात्मक और मूल रूप से मन-विज्ञान के अनुसार ही प्रतीत हुआ; कभी भी रहस्यमयी प्रतीत नहीं हुआ। कुण्डलिनी-जागरण के समय कुण्डलिनी का ध्यान अपने चरम पर होता है, अर्थात ध्याता(कुण्डलिनी का ध्यान करने वाला व्यक्ति), ध्येय(कुण्डलिनी) व ध्यान(ध्यान की प्रक्रिया), तीनों एक हो जाते हैं। इसे दूसरे शब्दों में ऐसे भी कह सकते है कि ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय एक हो जाते हैं। इसे पूर्ण समाधि की अवस्था भी कहते हैं। इसमें अन्धकारयुक्त आत्मा चमकती कुण्डलिनी के साथ एकाकार हो जाता है, अर्थात आत्मा प्रकाशपूर्ण हो जाता है। इससे साधक अनजाने में ही, स्वयं ही अपनी आत्मा को स्वच्छ करने के अभियान में लग जाता है। क्योंकि अद्वैतभाव से ही आत्मा स्वच्छ हो सकती है, अतः उसमें अद्वैतभाव स्वयं ही विकसित होने लगता है, जो उसकी जीवनशैली को भी सकारात्मक रूप से रूपांतरित कर देता है। प्रेमयोगी वज्र के कुण्डलिनी-जागरण को संभव बनाने वाली वास्तविक-समय(real time) की परिस्थितियों व तदनुसार किए गए प्रयासों को जानने के लिए Love story of a Yogi (आतंरिक तांत्रिक वेबपृष्ठ) या वेबपेज "शॉप (लाइब्रेरी) में पुस्तक "Love story of a Yogi- what Patanjali says" का व अधिक विस्तृत जानकारी के लिए उपरोक्त ई-पुस्तक का अवलोकन किया जा सकता है।

साथ में, उपरोक्त प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों प्रकार के यौनतंत्रों के अस्तित्व का यह अर्थ भी है कि विवाहित जीवन में एक महिला की आकर्षकता का महत्त्व कम ही होता है।

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) **Love story of a Yogi- what Patanjali says**

2) **Kundalini demystified- what Premyogi vajra says**

3) **कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तक 1,2,3 और 4)**

4) **The art of self publishing and website creation**

5) **स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला**

6) **कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है**

7) **बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी**

8) **ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट**

9) **My kundalini website on e-reader**

10) **शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)**

11) **श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम**

12) **सोलन की सर्वहित साधना**

13) **योगोपनिषदों में राजयोग**

14) **क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव**

15) **देवभूमि सोलन**

16) **मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र**

17) **बघाटेश्वरी माँ शूलिनी**

18) **म्हारा बघाट**

19) **भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस**

20) **Kundalini science~a spiritual psychology (books 1,2,3, and 4)**

21) **Dance of Unity**

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज “शॉप (लाईब्रेरी)” पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,“https://demystifyingkundalini.com/” को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु